राष्ट्रीय शिक्षक आयोग-2
की
रिपोर्ट
1983-85

राष्ट्रीय शिक्षक आयोग-2
1985

राष्ट्रीय शिक्षक आयोग-2 की रिपोर्ट, 1983-85

अधिसूचना सं० एफ 23–1 पी० एन० 2 के अंतर्गत भारत सरकार द्वारा उच्च शिक्षण में रत शिक्षकों के लिए गठित राष्ट्रीय आयोग के विचारार्थ विषय

(1) देश की विरासत और लोकतन्त्र, धर्मनिरपेक्षता तथा सामाजिक न्याय के आदर्शों के अनुरूप उत्कृष्टता की खोज, उदार दृष्टिकोण और मान्यताओं का शिक्षा के सन्दर्भ में शिक्षण व्यवसाय के लिए स्पष्ट उद्देश्य निर्धारित करना;

(2) इस व्यवसाय के सदस्यों को समुचित स्तर प्रदान करने के लिए उपायों का पता लगाना;

(3) इस व्यवसाय में गतिशीलता बढ़ाने और विश्व में अन्यत्र घटित होने वाली घटनाओं के प्रति सजगता पैदा करने के लिए उपाय सुझाना;

(4) शिक्षण व्यवसाय में प्रतिभावान व्यक्तियों को आकर्षित करने और उन्हें इस व्यवसाय में बनाए रखने तथा भर्ती, विशेषकर महिलाओं की भर्ती, के आधार को व्यापक बनाने के लिए आवश्यक उपायों की सिफारिश करना ;

(5) शिक्षकों के लिए सेवा-पूर्व और सेवाकालीन प्रशिक्षण अनुस्थापना के मौजूदा प्रबन्धों की समीक्षा करना और सुधार के लिए सिफारिशें करना ;

(6) अध्यापन के लिए बेहतर पद्धतियों तथा प्रौद्योगिकी के प्रयोग की समीक्षा तथा सिफारिश करना ;

(7) ज्ञान, निपुणता तथा मान्यताएं अर्जित करने में छात्रों की सहायता, प्रेरणा और प्रोत्साहन तथा उनके जरिए वैज्ञानिक प्रवृत्ति, धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण, पर्यावरणात्मक जागरूकता और नागरिक जिम्मेदारी को प्रोत्साहित करने में अध्यापकों की भूमिका को बढ़ाने के लिए उपायों की सिफारिश करना ,

(8) समुदाय में और घर पर विकास कार्य के साथ शिक्षा को जोड़ने में शिक्षकों की भूमिका का पता लगाना ,

(9) अनौपचारिक और सतत शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षकों की विशेष आवश्यकताओं का अध्ययन करना तथा ऐसे तरीकों का सुझाव देना जिनके द्वारा इन आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकें,

(10) व्यावसायिक विकास और व्यावसायिक जागरूकता में शिक्षक संगठनों की भूमिका का पता लगाना,

(11) शिक्षकों के लिए एक स्वीकार्य और कार्यान्वित की जा सकने वाली आचरण संहिता तैयार करने की संभावना की जांच करना;

(12) राष्ट्रीय शिक्षक कल्याण प्रतिष्ठान के विशेष सन्दर्भ में शिक्षकों के कल्याण की प्रोन्नति के प्रबंधों का मूल्यांकन करना और जहां आवश्यक हो वहां सुधार का सुझाव देना ।

इस रिपोर्ट का आधार राष्ट्रीय शैक्षिक योजना तथा प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली में गठित केंद्रीय तंत्र की एकक द्वारा किए गए निम्नलिखित ग्यारह अनुसंधान अध्ययन हैं ।

अनुसंधान अभिकल्प	मूनिस रज़ा, जी० डी० शर्मा
भारत में उच्च शिक्षा—एक सर्वेक्षण	मूनिस रज़ा, वाई० पी० अग्रवाल, माबूद हसन
आर्थिक स्थिति	जी० डी० शर्मा
सामाजिक स्थिति	डी० एन० सिन्हा
भर्ती : आधार तथा कार्यविधियां	अमरीक सिंह
गतिशीलता तथा अंत:नियुक्तियां	के० ए० नक्वी, के० चोपड़ा, आशा कपूर
व्यावसायिक तथा वृत्तिपरक विकास	मूनिस रज़ा, मार्जोरी फ़र्नान्डिस
कार्य–प्रकृति	शक्ति अहमद, एस० एम० लूथरा
निर्णयन में सहभागिता	एन० पी० गुप्ता
शिकायतें तथा उनका समाधान	अनिल बनर्जी, एम० वी० पीली
व्यावसायिक मूल्य	एस० पी० दुबे, हेमलता स्वरूप
प्रधान संपादक—	मूनिस रज़ा जी० डी० शर्मा, शक्ति अहमद

राष्ट्रीय शिक्षक आयोग-2, 1983-85 के सदस्य

अध्यक्ष

1. अहमद, रईस,
उपाध्यक्ष, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग,
नई दिल्ली

सदस्य

2. आनंद, बी० के०,
निदेशक, शेरे कश्मीर आयुर्विज्ञान संस्थान,
श्रीनगर

3. बाल, एस० एस०,
इतिहास विभाग, पंजाबी विश्वविद्यालय,
पटियाला

4. बाम्बा, आर० पी०,
गणित विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय,
चंडीगढ़

5. बेनर्जी, अनिता,
प्रोफेसर, अर्थशास्त्र, जादवपुर विश्वविद्यालय,
कलकत्ता

6. चित्तीबाबू, एस० वी०,
उपकुलपति, अन्नमलै विश्वविद्यालय,
अन्नमलै नगर

7. हुसैन, एस० इजहार,
अध्यक्ष, गणित विभाग, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय,
अलीगढ़

8. कृष्णास्वामी, एस०,
अध्यक्ष; जैवविज्ञान संस्थान; मदुरै कामराज विश्वविद्यालय;
मदुरै

9. लूथरा, एस० एम०
प्रिंसिपल; लेडी श्रीराम कालेज फार विमेन;
नई दिल्ली

10. नारायण, इक्बाल,
उपकुलपति; बनारस हिंदू विश्वविद्यालय,
बनारस

11. मेहरोत्रा, आर० सी०,
प्रोफेसर एमेरिटस; रसायन विज्ञान विभाग;
राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर

12. पारेख, बी० सी०,
उपकुलपति; एम० एस० विश्वविद्यालय;
बड़ोदा

13. पाराशर, एन० सी०,
संसद सदस्य, 9, महादेव रोड,
नई दिल्ली

14. रामसेवन, एस०,
भारतीय विज्ञान संस्थान,
बंगलौर

15. रजा, मूनिस,
निदेशक, राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान,
नई दिल्ली

16. स्वरूप, आनंद,
परामर्शदाता (मूल्यांकन); योजना आयोग,
नई दिल्ली

17. सिन्हा, सुशीलश्व,
निदेशक, ए० एन० एस० सामाजिक अध्ययन संस्थान,
पटना

18. स्वरूप, हेमलता,
उपकुलपति, कानपुर विश्वविद्यालय;
कानपुर

19. वलियाथन, एम० एस०,
श्री चित्र तिरुनल आयुर्विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संस्थान;
त्रिवेन्द्रम

20. वर्मा, ए० आर०;
निदेशक; राष्ट्रीय भौतिकी प्रयोगशाला;
नई दिल्ली

सदस्य-सचिव

21. जोशी, किरीट,
शिक्षा परामर्शदाता; शिक्षा तथा संस्कृति मंत्रालय;
नई दिल्ली

माननीय श्री के० सी० पंत
शिक्षा मंत्री
भारत सरकार
नई दिल्ली

प्रिय श्री पंत,

भारत सरकार द्वारा फरवरी, 1983 मे नियुक्त राष्ट्रीय शिक्षक (उच्च शिक्षा) आयोग की रिपोर्ट आपको प्रस्तुत करने का गौरव मुझे मिला है। इस अवधि में आयोग की कई बैठके हुई। कुछ बैठकें राष्ट्रीय स्कूल शिक्षक आयोग के साथ भी आयोजित की गई। आयोग के सदस्यो ने विश्वविद्यालयो तथा कालेजों के दौरे किए तथा भारत के प्रत्येक भाग में जाकर बहुत से शिक्षको से भेंट की। वे शिक्षक संघो, शिक्षक समुदाय के सदस्यो तथा छात्रों से भी मिले।

इस प्रकार एकत्रित निजी अनुभवों तथा विचारों की पुष्टि के लिए आयोग ने शैक्षिक सस्थाओ तथा शिक्षको की परिस्थितियों तथा उनकी संकल्पनाओं एवं राय के विषय में सारभूत आकड़े प्राप्त करने का निश्चय किया। आकड़ो/जानकारी का आधार वैज्ञानिक ढंग से तैयार किया गया ताकि इनसे प्राप्त होने वाले निष्कर्ष मोटे तौर पर, विश्वसनीय हों। अनुसधान अध्ययन कम्प्यूटरी कृत सामग्री पर आधारित है, और अब तक इनके ग्यारह खंड प्रकाशित हो चुके है जो आपके समक्ष प्रस्तुत है।

हमारा यह विचार-मनन उपलब्ध श्रेष्ठ जानकारी तथा विचारणा पर आधारित है और हमने पूर्ण उत्तरदायित्व की भावना के साथ अपनी सिफारिशें दी हैं। हमारा विश्वास है कि शिक्षकगण शैक्षिक परिवर्तन के उतने ही महत्वपूर्ण साधन है जितना की शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का, और इसी कारण से सरकार को उनकी समस्याओं की ओर ध्यान देना चाहिए। साथ ही, यह जानते हुए कि वर्तमान कार्य-परिस्थितिया संतोषजनक नही है तथा समूची शैक्षिक प्रबन्ध-व्यवस्था के सुधार एवं दृढ़ीकरण की आवश्यकता है, हमने शिक्षको से भी अनुरोध किया है कि वे राष्ट्रीय एकीकरण तथा विकास की प्रक्रिया में अपना सहयोग देने के लिए आगे बढ़ें।

मुझे आशा है कि सरकार इन सिफ़ारिशों के संबंध में कार्रवाई करने की संभावनाओं पर जल्दी ही विचार करेगी, क्योंकि शिक्षक समुदाय ने इस मुद्दे पर गहरी चिंता व्यक्त की है।

अंत में, मैं आयोग का यह विचार आप तक पहुंचाना चाहता हूं कि हमारे काम के लिए जो आंकड़ा-आधार तैयार किया गया था, वह बड़ा मूल्यवान सिद्ध हुआ है, और इस के आधार पर आगे भी अनुसंधान किया जा सकता है। यह आवश्यक है कि इसी प्रकार के आंकड़े प्रति पांच वर्ष मे इकट्ठे किए जाएं, विशेषकर इस उद्देश्य से कि विकास की प्रवृत्तिया क्या है तथा शिक्षा व्यवस्था पर विभिन्न नीतियों और व्यय का क्या प्रभाव पड़ रहा है। यदि इसे स्वीकार कर लिया जाए, तो वर्तमान आकडे आधारभूत सामग्री के रूप में उपयोगी सिद्ध होंगे। यह उत्तरदायित्व राष्ट्रीय शैक्षिक योजना तथा प्रशासन संस्थान को सौंपा जा सकता है, जिसके पास इस क्षेत्र मे अब पर्याप्त अनुभव है।

मैं आयोग के सदस्यों की ओर से सरकार के प्रति आभार व्यक्त करता हूं जिसने इनमे अपना विश्वास व्यक्त किया तथा वे इन सिफ़ारिशों को प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान किया।

नई दिल्ली — आपका

मार्च 23, 1985 — (रईस अहमद)

आभार-प्रदर्शन

राष्ट्रीय शिक्षा (उच्च शिक्षा) आयोग को अपने कार्यनिष्पादन के दौरान शैक्षिक संस्थाओं, शिक्षकों, शिक्षक संघों, समाज के सदस्यों, छात्रों तथा प्रशासकों के साथ मिलकर बातचीत करने के अवसर प्राप्त हुए। इन सबके पूर्ण सहयोग के बिना हमारा काम वास्तविकता से रहित होता और इसकी प्रामाणिकता भी संदिग्ध ही रहती। अत. हम सभी सम्बद्ध व्यक्तियों/संस्थाओं द्वारा प्रदत्त सहायता के लिए उनका धन्यवाद करते है, तथा हमारे विचारों को स्पष्टता प्रदान करने एवं हमारी सिफारिशों को प्रदान करने मे उनकी भूमिका के लिए हम उन के आभारी है।

आयोग के सदस्य होते हुए भी प्रो० मूनिस रजा ने, राष्ट्रीय शैक्षिक योजना तथा प्रशासन संस्थान के तत्कालीन निदेशक के रूप में, जो श्रेष्ठ नैतिक तथा कार्यपरक सहायता हमें दी, उसके लिए हम उन के विशेष रूप से आभारी हैं। उनका स्थान ग्रहण करने वाले प्रो० सत्य भूषण ने इस परम्परा को जारी रखा तथा केंद्रीय तकनीकी एकक को सभी आवश्यक सुविधाएं प्रदान की। केंद्रीय तकनीकी एकक के जटिल काम, के प्रबन्ध तथा पर्यवेक्षण के साथ-साथ लेखन एवं संपादन कार्य करने मे निःसंकोच रूप मे समय तथा शक्ति लगाने के लिए हम प्रो० जी० डी० शर्मा तथा प्रो० शकील आर० अहमद के प्रति आभारी है। इनके द्वारा किए गए काम के बिना, हमारे आंकड़ा-आधार तथा अनुसंधान अध्ययन न तो इतने कम समय मे तैयार किए जा सकते थे और न ही इतनी उच्च कोटि के हो सकते थे। केन्द्रीय तकनीकी एकक के सभी सदस्यों का हम धन्यवाद करते है क्योंकि हम जानते है कि इस महत्वपूर्ण तथा कठिन काम को पूरे करने मे उन्हो ने न दिन देखा ना रात देखी।

हम प्रो० आर० पी० सिंह तथा आयोग के सचिवालय मे काम करने वाले उनके सहयोगियों का धन्यवाद करते है जिन्होंने आयोग के सचिव एवं सदस्य श्री किरीट जोशी के व्यापक मार्गदर्शन में काम किया। आयोग के अध्यक्ष को सहायता प्रदान करने के लिए श्रीमती मधूलिका राकण भी धन्यवाद की पात्र है। इस कार्य के साथ प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से सम्बद्ध सभी को पूर्ण धन्यवाद देते है क्योंकि इस प्रकार के काम मे बहुत से व्यक्तियों द्वारा किए गए काम का योगदान रहता है जिनका अलग-अलग नामोल्लेख संभव नहीं है।

मैं, व्यक्तिगत रूप में, आयोग के सभी सदस्यों के प्रति, उनके सजीव तथा निष्पक्ष विचार-विमर्श के लिए आभार व्यक्त करता हूं, जिसके बिना हमारे विचारक्रम मे सर्वैक्य संभव न होता। एक टीम के रूप मे काम करने का यह अवसर निश्चय ही हर्ष का विषय था। रिपोर्ट को अंतिम रूप देने के लिए विभिन्न प्रारूप तैयार करने मे जिन-जिन सदस्यों ने सहायता प्रदान की है उनका मैं विशेष रूप से आभारी हूं।

रईस अहमद

विषय-सूची

दृष्टिकोण तथा कार्यप्रणाली

1.00 तीन मुख्य दृष्टिकोण

राष्ट्रीय शिक्षक आयोग-2 ने अपनी पहली ही बैठक मे शिक्षक समुदाय एवं व्यवसाय के निष्पक्ष अध्ययन तथा देश के विश्व-विद्यालयों और कालेजो के शिक्षको के साथ व्यापक अंतर्वार्ता को अपने कार्य का आधार बनाने का संकल्प किया। इस उद्देश्य के लिए तीन मुख्य दृष्टिकोण अपनाए गए :

(i) आयोग के विचारार्थ विषयो पर देश भर के शिक्षकों के साथ सामान्य चर्चा,

(ii) शिक्षक संगठनों से ज्ञापन प्राप्त करने तथा उन पर विचार विमर्श और

(iii) ध्यानपूर्वक किए गए सर्वेक्षण के माध्यम से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर शिक्षक व्यवसाय के विभिन्न पक्षों का विस्तृत अध्ययन।

उपर्युक्त के कार्यान्वियन में आयोग को तकनीकी सहायता प्रदान करने के लिए राष्ट्रीय शैक्षिक योजना एवं प्रशासन संस्थान में एक केंद्रीय तकनीकी एकक की स्थापना की गई।

1.01 व्यापक चर्चाएं

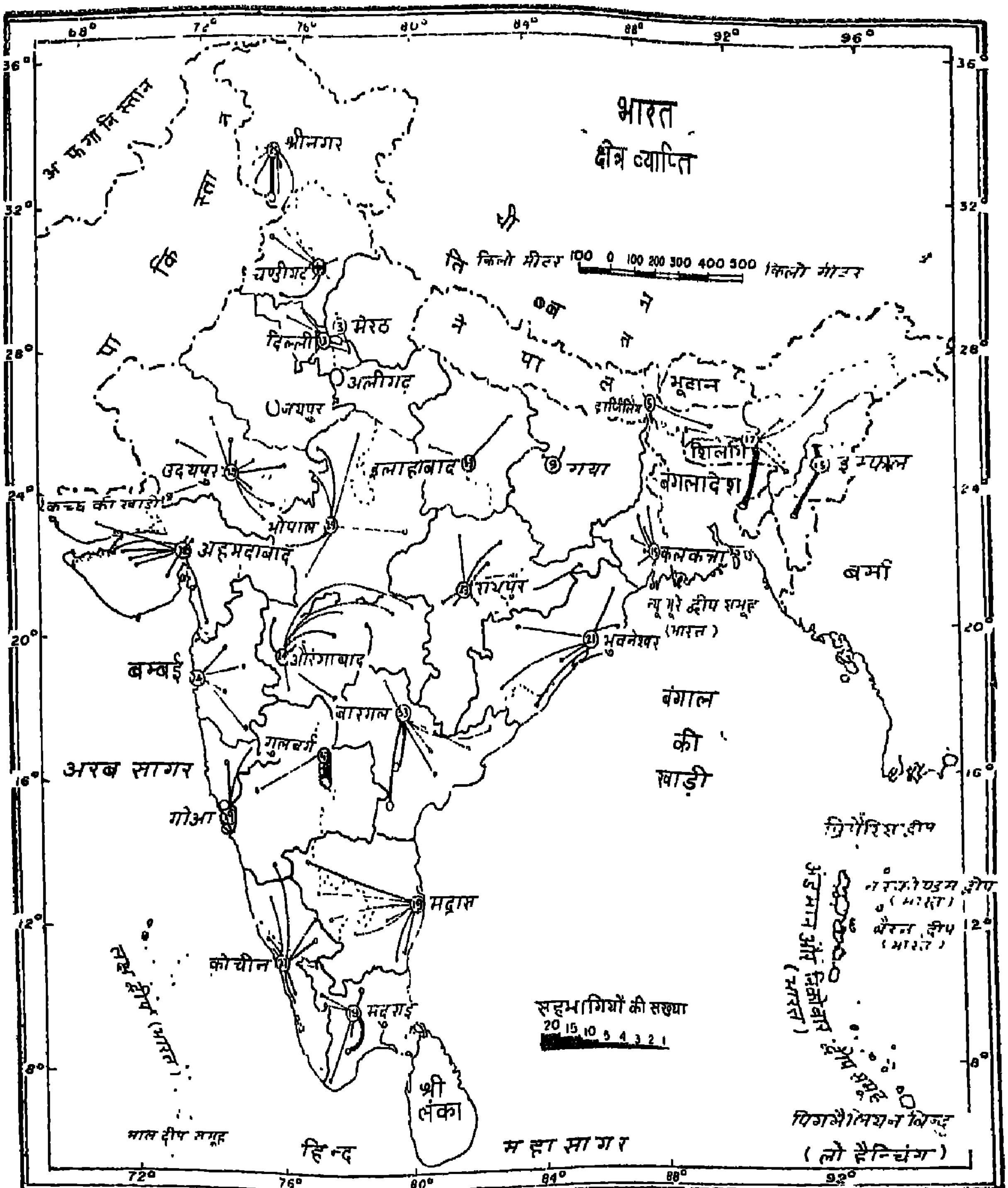
1.01.01 प्रधान केंद्रों तथा विश्वविद्यालय एवं कालेज शिक्षकों का पता लगाना.—(i) तथा (ii) के अनुसरण में, देश के विभिन्न भागो में स्थित 29 विश्वविद्यालयो के कस्बे/नगर तथा आसपास के जिले के शिक्षकों के साथ अंतर्वार्ता के लिए चुना गया (विवरण के लिए देखें मानचित्र 1 तथा सारणी (1)। विभिन्न प्रकार के, यथा राजकीय, गैर-सरकारी, कांस्टीचुयेंट, संबद्ध कालेजो में सेवारत एवं विभिन्न संवर्गों यथा लेक्चरर, वरिष्ठ लेक्चरर, रीडर, प्रोफेसर, प्रिंसिपल तथा विभिन्न विधाओ यथा कला, विज्ञान, वाणिज्य, व्यावसायिक विषयों जैसे कि इंजीनियरी, मैडिसिन आदि से सम्बन्धित विशाल शिक्षक समुदाय से भेंट करने के उद्देश्य से, उपर्युक्त वर्गों के शिक्षकों का विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के पास उपलब्ध कालेजो के अभिलेखो से पता लगाया गया तथा इन्हे आयोग के सदस्यों से मिलने के लिए व्यक्तिगत रूप मे बुलाया गया।

उपर्युक्त 29 प्रधान केंद्रो के अतिरिक्त, आयोग के बैठक-स्थल के 20 से 100 कि०मी० के घेरे के अंदर आने वाले देहाती/शहरी क्षेत्र में स्थित 35 कालेज आयोग के सदस्यों के दौरे के लिए चुने गए ताकि वे शैक्षिक सुविधाओ तथा कार्यकरण एवं शिक्षकों की कार्य-परिस्थितियो की प्रत्यक्ष जानकारी प्राप्त कर सके।

सारणी 1

राष्ट्रीय शिक्षक आयोग-2 के साथ अंतर्वार्ता करनेवाले विश्व-विद्यालयों एवं शिक्षकों की सूची

क्र०सं०	विश्वविद्यालय का नाम
1.	अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़
2.	इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
3.	भोपाल विश्वविद्यालय, भोपाल
4.	बम्बई विश्वविद्यालय, बम्बई
5.	कलकत्ता विश्वविद्यालय, कलकत्ता
6.	केंद्रीय विश्वविद्यालय, हैदराबाद
7.	स्नातकोत्तर शिक्षण एवं अनुसंधान केंद्र, गोवा
8.	कोचीन विश्वविद्यालय, कोचीन
9	दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
10.	गुजरात विश्वविद्यालय, अहमदाबाद
11.	गुलबर्गा विश्वविद्यालय, गुलबर्गा
12.	हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला



उपयुक्त भूरेखा से लेकर, भारत का जल क्षेत्र बारह समुद्री मीलों तक है।

टिप्पणी:— वृत मुख्य बैठक केन्द्रों को दर्शाते हैं और रेखाएं उन स्थानों को दर्शाती हैं जहां से शिक्षक इन बैठकों में भाग लेने के लिए आए। रेखाओं की मोटाई बैठकों में भाग लेने वाले शिक्षकों की संख्या को दर्शाती है।

1. भारत के महासर्वेक्षक की अनुमति से भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।
2. भारत सरकार का प्रतिलिप्याधिकार, 1986।
3. इस मानचित्र में मेघालय की सीमा उत्तर पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 के निर्वचनानुसार दर्शाई गई है, परन्तु सत्यापित होनी है।
4. मानचित्रों के आंतरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

सारणी 1—जारी

क्र०सं०	विश्वविद्यालय का नाम
13.	जम्मू व कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर
14.	काकतीय विश्वविद्यालय, वारंगल
15.	मद्रास विश्वविद्यालय, मद्रास
16.	मदुरै कामराज विश्वविद्यालय, मदुरै
17.	मणिपुर विश्वविद्यालय, मणिपुर
18.	मराठवाड़ा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद
19.	मगध विश्वविद्यालय, बोध गया
20.	मेरठ विश्वविद्यालय, मेरठ
21.	एम० एल० एम० विश्वविद्यालय, उदयपुर
22.	एम० एस० विश्वविद्यालय, बड़ौदा
23.	नार्थ ईस्टर्न हिल विश्वविद्यालय, शिलांग
24.	उत्तर बंगाल विश्वविद्यालय, सिलिगुड़ी
25.	उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद
26.	पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़
27.	पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना
28.	एम० एन० डी० टी० महिला विश्वविद्यालय, बम्बई
29.	उत्कल विश्वविद्यालय, भुवनेश्वर

1.01.02 **कार्य-विभाजन.**— देश के पांच भागो का दौरा करने के लिए आयोग के सदस्यो को पाच दलों मे बांटा गया। प्रत्येक भाग में 5-6 बैठक-स्थल रखे गए तथा आसपास के जिलों के 6-7 कालेज चुने गए। केंद्रीय तकनीकी एकक ने 1.00 (iii) मे प्रस्तावित सर्वेक्षण के लिए तैयार कार्यसूची की पूर्व जाच हेतु इन दौरो का लाभ उठाया।

1.01.03 **दौरों का उद्देश्य.**—दौरो का उद्देश्य निम्नलिखित रूप में स्पष्ट किया गया :

(क) आयोग-2 के विचारार्थ विषयो पर विश्वविद्यालयों तथा कालेजो के शिक्षकों के साथ अंतर्वार्ता करना,

(ख) शिक्षकों के कार्य एव रहन-सहन की परिस्थितियो का मूल्यांकन करने के लिए विश्वविद्यालयों तथा निकटस्थ कालेजों में जाना,

(ग) विश्वविद्यालय तथा कालेज शिक्षक संघो/परिसंघो के प्रतिनिधियो/पदाधिकारियों/सदस्यों के साथ चर्चाएं करना,

(घ) शहर के प्रमुख शिक्षाशास्त्रियो के साथ आयोग-2 के विचारार्थ विषयो पर विचार-विमर्श करना, तथा

(ङ) आयोग के विचारार्थ विषयो के संबंध में व्यक्तियों अथवा संगठनों, सरकारी संगठनो आदि मे ज्ञापन/संकल्प प्राप्त करना।

1.01.04 क्षेत्र दौरों के परिणाम

(क) सदस्यो ने विभिन्न आकार के ग्रुपों मे 4,211 शिक्षकों के साथ जो कि 29 विश्वविद्यालयों तथा 356 कालेजों से सम्बद्ध थे, चर्चाएं की (देखें मानचित्र 1)। इनमें सभी विश्वविद्यालयीय सकायों के 912 शिक्षक तथा 10,000 की जन संख्या से लेकर 1,00,000 से अधिक जनसख्या वाले नगरों के कालेजों के 620 शिक्षक शामिल थे।

(ख) अपने दौरो के दौरान इन सदस्यो ने शिक्षको के कार्य तथा रहन-सहन की परिस्थितियो का मूल्याकन करने के लिए 35 कालेजो का दौरा किया तथा 879 शिक्षकों मे भेंट की।

(ग) सदस्यों ने 47 विश्वविद्यालय तथा कालेज शिक्षक संघो/परिसघो के 360 प्रतिनिधियों/पदधारियों/सदस्यो के साथ भेंट की तथा इनसे 67 ज्ञापन प्राप्त किए।

(घ) सदस्यों ने देश के 239 विख्यात शिक्षाशास्त्रियों 5 राज्य शिक्षा मन्त्रियों तथा 2 विश्वविद्यालय कुलाधिपतियो के साथ आयोग के विचारार्थ विषयों पर चर्चाएं की।

(ङ) सदस्यों को आयोग के विचारार्थ विषयो के सम्बध मे शिक्षको तथा कालेजो से क्रमश 97 तथा 53 ज्ञापन/संकल्प प्राप्त हुए।

1.02 अनुभवों का केंद्रीकरण

देश के भिन्न-भिन्न भागो के दौरों मे प्राप्त अपने-अपने अनुभव के विनिमयार्थ आयोग के सदस्यों की सुविधा के लिए सितम्बर 1983 मे दिल्ली मे आयोग की बैठक हुई। इससे सदस्यों को समस्या के देशव्यापी स्वरूप को समझने का अवसर प्राप्त हुआ। केंद्रीय तकनीकी एकक ने क्षेत्र-दौरों के विवरण तथा शिक्षको के विचारों, शिक्षको के सघो/सगठनो द्वारा प्रस्तुत ज्ञापनों तथा ज्ञापनों के सारांश के आधार पर एक रिपोर्ट तैयार की तथा आयोग के सूचनार्थ उसे प्रस्तुत किया।

1.03 अनुसंधान अध्ययन

शिक्षण व्यवसाय के विभिन्न पक्षों के विस्तृत अध्ययन के लिए केंद्रीय तकनीकी एकक ने परामर्शी बैठकों की व्यवस्था की तथा 11 संकल्पनात्मक रूपरेखीय पत्र तैयार किए, जिनकी सूची नीचे दी जा रही है :

1. सर्वेक्षण अनुसधान-अभिकल्प	मूनिस रज़ा तथा जी० डी० शर्मा
2. भारत मे उच्च शिक्षा—एक सर्वेक्षण	मूनिस रज़ा, वाई० पी० अग्रवाल तथा माबूद हुसन
3. आर्थिक स्थिति . .	जी० डी० शर्मा
4. सामाजिक स्थिति . .	डी० एन० सिन्हा
5. भर्ती : आधार एव विधियां .	असरीक सिंह
6. गतिशीलता एवं अंतर्नाय क्रिया .	के० ए० नक़वी, के० चोपड़ा तथा आशा कपूर
7. व्यावसायिक एव वृत्तिक विकास	मूनिस रज़ा तथा मार्जोरी फ़र्नाण्डिस
8. कार्य कृति . .	शक्ति अहमद तथा एम०एम० लूथरा

9 निर्णयन में सहभागिता .	एन० पी० गुप्ता
10 शिकायतें एवं उनका समाधान .	अनिता बनर्जी तथा एम० वी० पीली
11 व्यावसायिक मूल्य . .	एस० सी० दुबे तथा हेमलता स्वरूप

1.03.01 **अनुसंधान परामर्श समिति.**—केंद्रीय तकनीकी एकक की अनुसंधान परामर्श समिति के निम्नलिखित सदस्य थे :
रईस अहमद, आर० के० छाबड़ा, एस० सी० दुबे, एन० पी० गुप्ता, के० एच० हिरियन्नैया, बी० जी० काने, एम० आर० कोल्हटकर, एस० कृष्णस्वामी, एस० एम० लूथरा, आर० सी० मेहरोत्रा, के० ए० नकवी, मूनिस रजा, जी० डी० शर्मा, डी० एन० सिन्हा, अमरीक सिंह तथा हेमलता स्वरूप।

1.03.02 **दृष्टिकोण तथा अनुसंधान अध्ययनों की कार्यप्रणाली**

(क) आधार-सामग्री के रूप में अनुसंधान अध्ययन.—केंद्रीय तकनीकी एकक ने आयोग के सदस्यों तथा अनुसंधान परामर्श समिति के सहयोग से राष्ट्रीय शिक्षक आयोग-2 के प्रयोगार्थ आधार-सामग्री के रूप में अनुसंधान अध्ययन के नाम से एक दस्तावेज तैयार किया। इस दस्तावेज में उद्देश्य, प्रत्येक अध्ययन के लिए पूछे जाने वाले प्रश्न, प्रतिदर्श अभिकल्प तथा प्रतिदर्श-आकार का विवरण दिया था। विद्वानों तथा आयोग के सदस्यों ने इस दस्तावेज पर विस्तार से चर्चा की। चर्चा के उपरांत निम्नलिखित अभिकल्प अपनाया गया।

(ख) प्रतिदर्श अभिकल्प (सैम्पल डिजाइन)

(i) शिक्षक-वर्ग का प्रतिदर्श तैयार करने के लिए समाज के सदस्यों तथा छात्रों, विश्वविद्यालयों तथा कालेजों को आधार बनाया गया। देश के विभिन्न प्रशासनिक तथा आर्थिक क्षेत्रों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्रदान करने की दृष्टि से विश्वविद्यालयों तथा कालेजों को राज्य तथा संघशासित क्षेत्रों (31) के अनुसार तथा राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण द्वारा परिभाषित 70 भौगोलिक-आर्थिक क्षेत्रों में इनका पुनर्वर्गीकरण किया गया।

(ii) उपर्युक्त प्रशासनिक तथा आर्थिक क्षेत्रों में आने वाले विश्वविद्यालयों तथा कालेजों को अपने-अपने विशेष लक्षणों के आधार पर स्तरबद्ध किया गया। विश्वविद्यालयों तथा कालेजों के लिए महत्वपूर्ण समझे गए लक्षण निम्नलिखित हैं :

विश्वविद्यालय :

1. स्थापना वर्ष
2. संसद द्वारा अथवा राज्य विधानसभाओं द्वारा स्थापित
3. स्वरूप . अर्थात् एकात्मक/आवासीय, अथवा सम्बद्धकारी
4 सहशैक्षिक अथवा केवल महिलाओं के लिए
5. बहुसकाय अथवा केवल व्यावसायिक।

कालेज :

1. सरकार अथवा गैर-सरकारी निकायों के प्रबन्धाधीन।
2. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से सहायता प्राप्त। अथवा नहीं।
3. सहशैक्षिक अथवा केवल महिलाओं के लिए।
4. सामान्य कला, विज्ञान तथा वाणिज्य के पाठ्यक्रमों। व्यवस्था है अथवा व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की व्यवस्था।
5. स्थिति, ग्रामीण अथवा शहरी तथा विभिन्न आकारों में स्थित।

(iii) चूंकि समाज के सदस्यों तथा छात्रों की विचारधा भिन्न-भिन्न पृष्ठभूमि पर निर्भर करती है अ पृष्ठभूमि के निम्नलिखित लक्षणों को ध्यान रखा गया।

समाज के सदस्य : व्यवसाय

कृषक, कारीगर, निम्न मध्यवर्गीय कर्मचारी, मध्यवर्गी कर्मचारी, अधिकारी (सरकारी), अधिकारी (गै सरकारी), छोटे उद्योगपति, बड़े उद्योगपति, रा नीतिक नेता (शासक वर्ग), राजनीतिक ने (प्रतिपक्ष)

छात्र

अच्छे छात्र, औसत छात्र, खेलकूद/पाठ्येतर कार्यकलाप अच्छे छात्र, अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जन जातियों के छात्र, माता-पिता का व्यवसाय यथ किसान, व्यापारी, कुशल कारीगर, सरकारी दफ्तर में कर्मचारी, गैर-सरकारी दफ्तर में कर्मचारी व्यावसायिक।

(ग) प्रतिदर्श वर्ष तथा प्रतिदर्श आकार

(i) वर्ष 1981-82 को, जिसके लिए विश्वविद्यालय तथा कालेजों की, विशिष्ट लक्षणों समेत, अद्यतन सूची उपलब्ध थी, प्रतिदर्श-आधार का निर्धारण करने के लिए चुना गया। इस वर्ष कुल 131 विश्व विद्यालय तथा विश्वविद्यालय माने जाने वाली संस्थाएं थीं जिनमें 28,682 शिक्षक सेवारत थे। कुल 4,854 कालेज थे जिनमें 1,63,224 शिक्षक काम कर रहे थे।

(ii) विश्वविद्यालयों की तुलना में कालेजों में शिक्षकों की संख्या कहीं अधिक होने के कारण, यही उचित समझा गया कि प्रतिनिधि प्रतिदर्श का आकार विश्वविद्यालयों के लिए 20 प्रतिशत तथा कालेजों के लिए 5 प्रतिशत निश्चित किया जाए।

(iii) इन प्रतिदर्श विश्वविद्यालयों तथा कालेजों में सेवारत सभी शिक्षकों को इस अध्ययन के उद्देश्य के लिए लिया गया। आशा की गई कि 20 प्रतिशत विश्वविद्यालयों तथा 5 प्रतिशत कालेजों में काम करने वाले शिक्षकों की संख्या शिक्षक-प्रतिदर्श के लिए पर्याप्त सिद्ध होगी।

(iv) तदनुसार आनुपातिक स्तरबद्ध यादृच्छिक प्रतिदर्श चयन की पद्धति से 27 विश्वविद्यालय (21 प्रतिशत)

तथा 300 कालेज (6 प्रतिशत) चुने गए। प्रतिदर्श विश्वविद्यालयों की सूची सारणी-2 में दी गई है। प्रतिदर्श विश्वविद्यालयों को मानचित्र 2 में भी दिखाया गया है।

(v) कुल कालेजों तथा भिन्न लक्षणों के आधार पर प्रतिदर्श कालेजों का वितरण सारणी 3 तथा 4 मे दिया गया है। प्रतिदर्श कालेज मानचित्र 3 में दिखाए गए हैं।

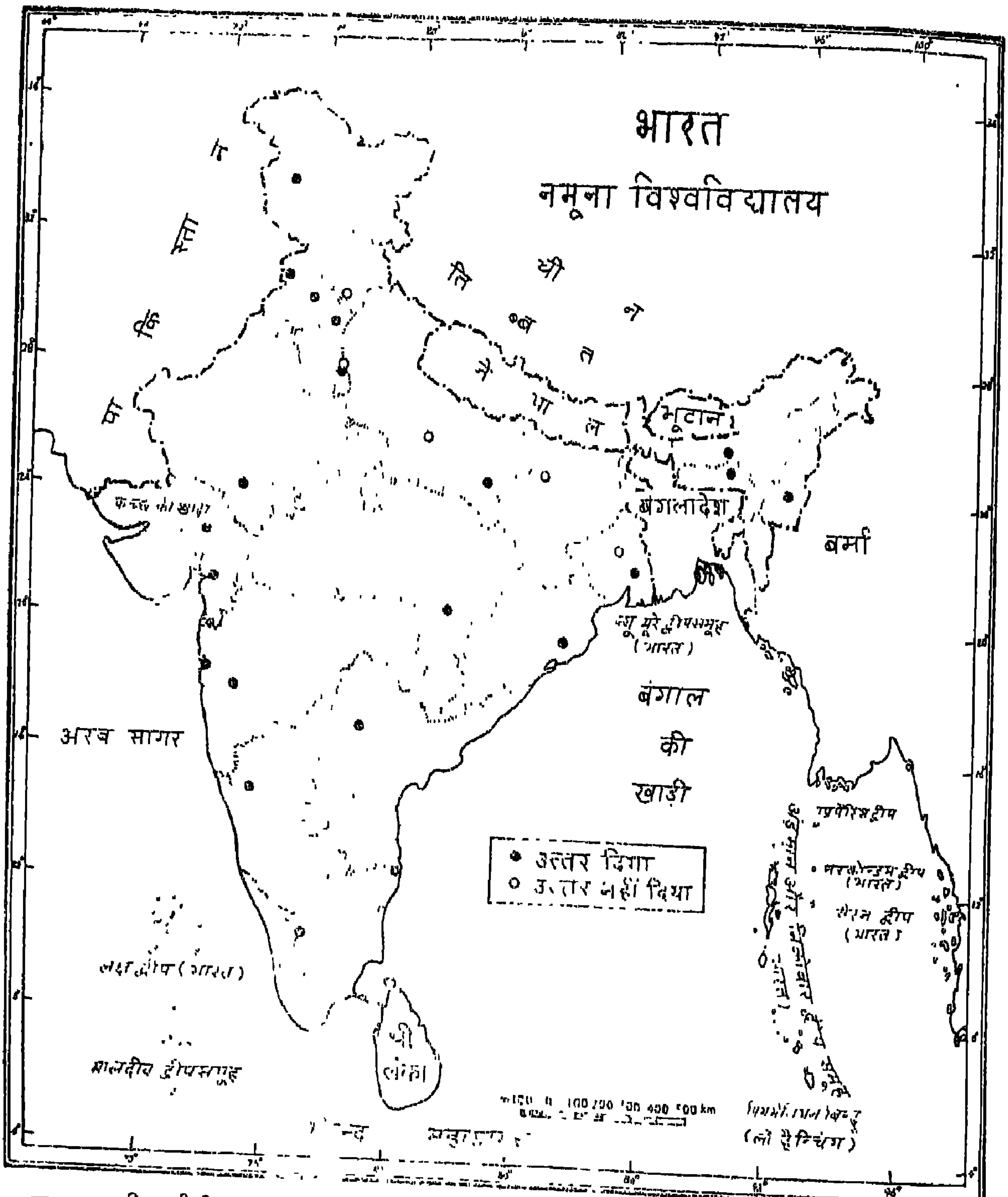
(vi) प्रतिदर्श विश्वविद्यालयों तथा कालेजों में शिक्षकों की संख्या तथा उनकी अपनी-अपनी कुल संख्या मे प्रतिशतता सारणी 5 मे दिखाई गई है।

(vii) यह उल्लेखनीय है कि प्रशासनिक तथा आर्थिक क्षेत्रों की पृष्ठभूमि में उपर्युक्त विशिष्ट लक्षणों में से प्रत्येक को आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया था इसलिए प्रतिदर्श का वास्तविक आकार पूर्वनिर्धारित आकार से कुछ बढ़ गया है।

सारणी 2

विशिष्ट लक्षणों के आधार पर प्रतिदर्श विश्वविद्यालयों की सूची

विश्वविद्यालय	प्रशासनिक क्षेत्र (राज्य/संघ शासित क्षेत्र)	स्थापना वर्ष	स्थापित (केंद्र/राज्य द्वारा)	अधिकार क्षेत्र (एकात्मक/सम्बद्धकारी)	छात्र वर्ग (सह-शिक्षा/केवल महिलाओं के लिए)	पाठ्यक्रम सामान्य व्यावसायिक/केवल व्यावसायिक	शिक्षकों की कुल संख्या
1	2	3	4	5	6	7	8
1. नार्थ ईस्ट हिल वि०वि० शिलांग .	मेघालय	1973	केंद्र	संबद्धकारी	सहशैक्षिक	सामान्य तथा व्यावसायिक	149
2. दिल्ली वि० वि० दिल्ली . .	संघशासित क्षेत्र, दिल्ली	1922	केंद्र	संबद्धकारी	सहशैक्षिक	सामान्य तथा व्यावसायिक	627
3. बनारस हिंदू वि० वि०, वाराणसी	उत्तर प्रदेश	1916	केंद्र	एकात्मक	सहशैक्षिक	सामान्य तथा व्यावसायिक	1,600
4. एम० एस० वि० वि०, बडौदा .	गुजरात	1949	राज्य	,,	,,	,,	657
5. कोचीन वि० वि०, कोचीन .	केरल	1971	,,	,,	,,	,,	116
6. मद्रास वि० वि०, मद्रास . .	तमिलनाडु	1857	,,	संबद्धकारी	,,	,,	329
7. पटना वि० वि०, पटना .	बिहार	1917	राज्य	सबद्धकारी	सहशैक्षिक	सामान्य तथा व्यावसायिक	98
8. मणिपुर वि० वि०, मणिपुर .	मणिपुर	1980	,,	,,	,,	,,	63
9. रवि शंकर वि० वि०, रायपुर .	मध्य प्रदेश	1964	,,	,,	,,	,,	1,000
10. उदयपुर वि० वि०, उदयपुर .	राजस्थान	1962	,,	एकात्मक	,,	,,	567
11. हिमाचल प्रदेश वि० वि०, शिमला .	हिमाचल प्रदेश	1970	,,	सबद्धकारी	,,	,,	101
12. उस्मानिया वि० वि०, हैदराबाद	आंध्र प्रदेश	1918	,,	,,	,,	,,	1,500
13. उत्कल वि० वि०, भुवनेश्वर .	उडीसा	1943	,,	,,	,,	,,	250
14. पूना वि० वि०, पुणे . .	महाराष्ट्र	1949	राज्य	संबद्धकारी	सहशैक्षिक	सामान्य तथा व्यावसायिक	230
15. कर्नाटक वि० वि०, धारवाड़	कर्नाटक	1949	,,	,,	,,	,,	500
16. जादवपुर वि० वि०, जादवपुर .	पश्चिम बंगाल	1955	,,	एकात्मक	,,	,,	500
17. पंजाब कृषि वि० वि०, लुधियाना	पंजाब	1962	,,	एकात्मक	,,	व्यावसायिक	1,800
18. गुरु नानक देव वि० वि०, अमृतसर	पंजाब	1969	राज्य	संबद्धकारी	,,	सामान्य तथा व्यावसायिक	200
19. कश्मीर वि० वि०, श्रीनगर .	कश्मीर	1949	,,	,,	,,	,,	189
20. तमिलनाडु कृषि वि० वि०, कोयम्बतूर	तमिलनाडु	1971	,,	एकात्मक	,,	व्यावसायिक	175
21. कुरुक्षेत्र वि० वि०, कुरुक्षेत्र .	हरियाणा	1956	,,	संबद्धकारी	,,	सामान्य तथा व्यावसायिक	236
22. गौहाटी वि० वि०, गौहाटी .	असम	1948	,,	,,	,,	,,	215
23. लखनऊ वि० वि०, लखनऊ	उत्तर प्रदेश	1921	,,	एकात्मक	,,	,,	500
24. एस० एन० डी० टी० वि० वि०, बम्बई	महाराष्ट्र	1951	,,	संबद्धकारी	केवल महिलाओं के लिए	,,	204
25. गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद	गुजरात	1963	,,	एकात्मक	सहशैक्षिक	,,	100
26. बर्दवान वि० वि०, बर्दवान .	पश्चिम बंगाल	1960	राज्य	संबद्धकारी	,,	सामान्य तथा व्यावसायिक	189
27. लाल बहादुर शास्त्री संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली	संघशासित क्षेत्र दिल्ली	1962	केंद्र	एकात्मक	,,	व्यावसायिक	58
							12,213



उपर्युक्त भूरेखा से लेकर भारत का जल क्षेत्र बारह समुद्री मीलों तक है।
टिप्पणी: बिन्दु विश्वविद्यालयों के स्थानों को दर्शाते हैं।

1. भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।
2. भारत सरकार का प्रतिलिप्यधिकार 1986।
3. इस मानचित्र में मेघालय की सीमा उत्तर पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वचनानुसार दर्शित है परंतु सत्यापित होनी है।
4. मानचित्रों के आंतरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

सारणी 3

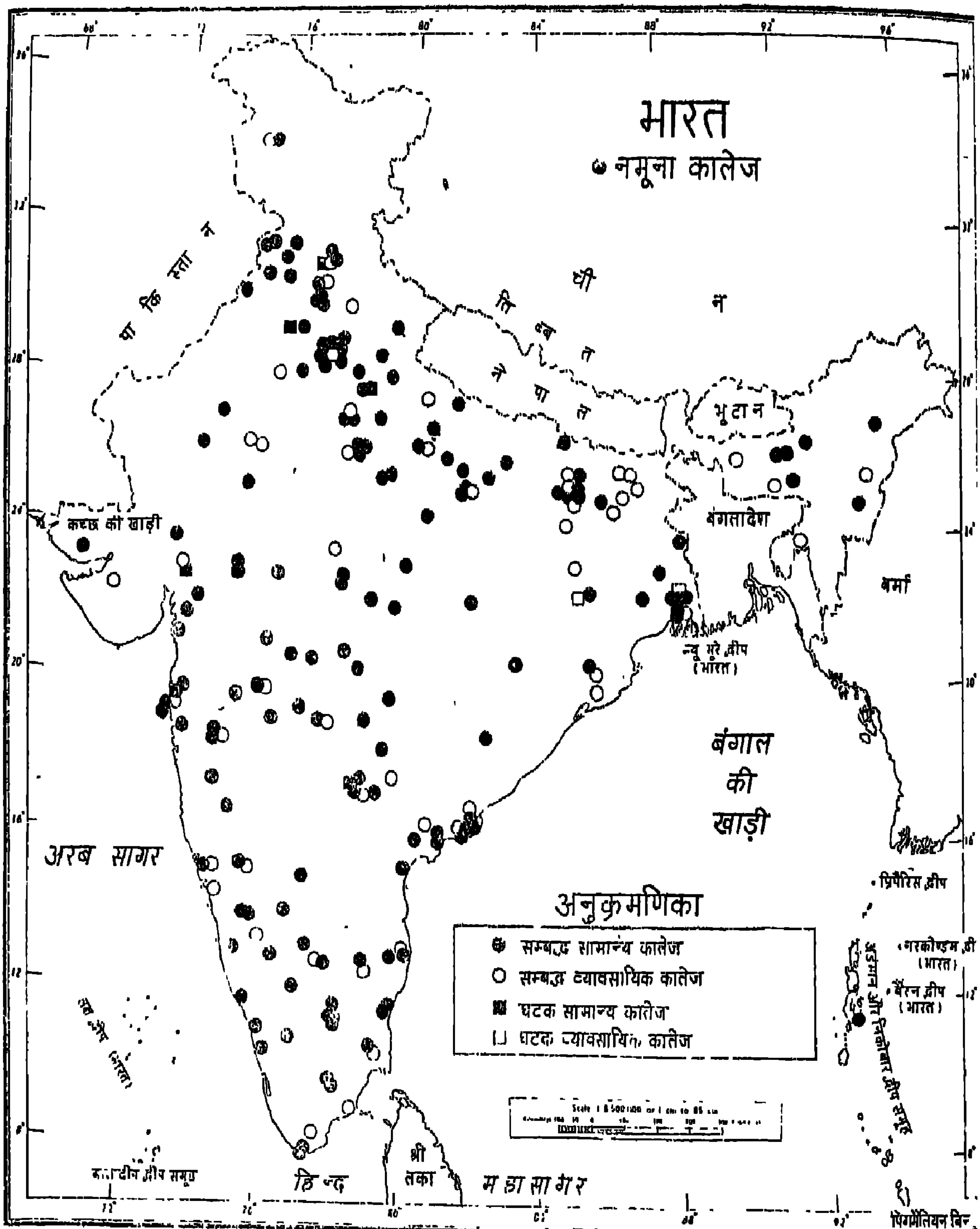
कुल तथा प्रतिदर्श कालेजों का वितरण, सामान्य शिक्षा, 1981-82 कुल तथा प्रतिदर्श

विशिष्ट लक्षण	कुल संख्या	प्रतिदर्श कालेजों की सं०	कुल से प्रतिदर्श कालेजो की प्रतिशतता	उत्तर देने वाले कालेजो की संख्या	कुल कालेजो से उत्तर देने वाले कालेजों की प्रतिशतता
1	2	3	4	5	6
कुल . . .	3459	211	6.1	171	4.9
1. प्रबन्ध					
सरकारी .	578	42	7.3	36	6.2
गैर-सरकारी .	2881	169	5.9	135	4.6
2. छात्र वर्ग					
पुरुष/सहशिक्षा .	3009	182	6.0	140	4.6
केवल महिलाओं के लिए	450	29	6.5	30	6.7
3. पाठ्यक्रम व्यवस्था सामान्य शिक्षा, कला, विज्ञान, वाणिज्य।	3459	211	6.1	171	4.9
4 अनुदान					
वि० अ० आ० से अनुदान-प्राप्त	2370	145	6.1	137	2.9
वि० अ० आ० से अनुदान-अप्राप्त गैर 2 (एफ)।	1089	66	6.1	34	1.1
5. स्थिति					
ग्रामीण .	474	30	6.3	20	4.2
शहरी . .	2985	171	6.1	151	5.1
नगर आकार					
1 . .	1344	90	6.7	94	7.0
2 . .	483	25	5.2	22	4.6
3 . .	554	35	6.3	20	3.6
4-6	604	31	5.1	15	2.5

सारणी 4

कुल तथा प्रतिदर्श कालेज, व्यावसायिक शिक्षा

विशिष्ट लक्षण	कुल कालेजों की संख्या	प्रतिदर्श कालेजों की संख्या	प्रतिदर्श कालेजों की कुल कालेजों की संख्या से प्रतिशतता	उत्तर देने वाले कालेजों की संख्या	उत्तर देने वाले कालेजों की कुल कालेजों से प्रतिशतता
1	2	3	4	5	6
कुल .	1395	93	6.67	50	3.6
1. प्रबंध					
सरकारी .	490	25	5.1	20	4.1
गैर-सरकारी .	905	68	7.5	30	3.3
2 छात्र वर्ग					
सहशैक्षिक .	1369	88	6.4	48	3.5
महिला . .	27	5	18.5	2	7.4
3. पाठ्यक्रम व्यवस्था					
इंजीनियरी .	159	13	8.2	8	5.0
मेडिसिन . .	284	19	6.7	10	3.5
(क) एलोपैथी .	128	10	7.8	5	3.9
(ख) होम्योपैथी .	22	2	9.1	1	4.5
(ग) आयुर्वेदिक	103	5	4.9	3	2.9
(घ) नर्सिंग .	31	2	6.5	1	3.2
कृषि . .	77	11	14.3	5	6.5
शिक्षक प्रशिक्षण .	296	23	7.9	14	5.1
प्राच्य भाषाएं .	332	13	3.9	8	2.4
विधि . .	166	8	4.8	1	.6
संगीत . .	62	2	3.2	—	—
शारीरिक प्रशिक्षण	19	4	21.1	3	16
4. अनुदान					
वि० अ० आ० से प्राप्त 2(एफ) .	570	37	6.5	21	3.7
वि० अ० आ० से अप्राप्त गैर 2(एफ) .	825	56	6.8	29	3.5
5. स्थिति					
1. ग्रामीण .	122	7	5.7	3	2.5
2. शहरी .	1273	86	6.8	47	3.5
5. (क) नगर-आकार					
1.	862	65	7.5	41	4.8
2.	187	11	6.0	2	4.8
3.	137	4	2.9	2	1.5
4.	87	6	6.9	2	2.3



उपयुक्त मूलरेखा से लेकर भारत का जल क्षेत्र बारह समुद्री मील तक है।

1. भारत के महासर्वेक्षक की अनुज्ञानुसार भारतीय सर्वेक्षण विभाग के मानचित्र पर आधारित।

2. भारत सरकार का प्रतिलिप्यधिकार, 1986।

3. इस मानचित्र में मेघालय की सीमा उत्तर पूर्वी क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम 1971 के निर्वचनानुसार दर्शित है परंतु सत्यापित होनी है।

4. मानचित्रों के आंतरिक विवरणों को सही दर्शाने का दायित्व प्रकाशक का है।

सारणी 5

विश्वविद्यालयों तथा कालेजों में कुल एवं प्रतिदर्श शिक्षकों की संख्या

	कुल	प्रतिदर्श	प्रतिदर्श की कुल से प्रतिशतता	प्राप्त उत्तरों की कुल से प्रतिशतता
1. विश्वविद्यालय	131	27	20.6	16.7
विश्वविद्यालयों के शिक्षण विभागों मे शिक्षक	28682	12305	42.9	7.0
2. कालेज	4854	304	6.3	4.5
कालेजों में शिक्षक	163224	15418	9.4	4.0

(viii) छात्रों तथा समाज के सदस्यों की कुल संख्या इतनी बड़ी है कि किसी भी प्रतिदर्शी अभिकल्प का अनुपालन संभव नहीं हो सकता था। इसके अतिरिक्त, चूंकि अध्ययन का केंद्र बिंदु शिक्षक हैं, छात्रो तथा समाज का विचार प्राप्त करने का सीमित उद्देश्य मात्र इतना था कि ये वर्ग शिक्षक का समाज में क्या दर्जा समझते हैं। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए, यह निर्णय लिया गया कि विश्वविद्यालय के मामले में समाज के बीस तथा छात्र वर्ग के 20 सदस्यो को तथा कालेज के मामले में, उपर्युक्त विशिष्ट लक्षणों को समान महत्व देते हुए, दस-दस सदस्यों को चुना जाए। छात्रो तथा समाज के जिन सदस्यों से संपर्क किया गया तथा जिन्होंने उत्तर दिया उनकी संख्या नीचे दी गई है :

	संपर्क किया गया	उत्तर दिया
1. छात्र . . .	2340	2114
2. समाज के सदस्य .	2340	1658

(ix) **संदर्भ वर्ष**

शिक्षकों के प्रतिदर्श-आकार का निर्धारण यद्यपि वर्ष 1981-82 के आंकड़ों के आधार पर किया गया था, तथापि शिक्षकों, समाज के सदस्यों तथा छात्रो से जानकारी वास्तव में वर्ष 1983 में एकत्र की गई।

(ख) **अनुसंधान अभिकल्प.**—इन अध्ययनों के संचालन हेतु एक उपयुक्त अनुसंधान अभिकल्प तैयार किया गया। इस अभिकल्प को निम्नलिखित विशिष्ट चरणों मे बांटा गया :

(क) प्रश्नावली की तैयारी

(ख) प्रश्नावलियों का प्रचार

(ग) आंकड़ों का सत्यापन एवं प्रक्रमण

(घ) विश्लेषण तथा रिपोर्ट लेखन।

अब इन चरणों पर संक्षेप में चर्चा की जाएगी।

क. प्रश्नावली की तैयारी

शिक्षको के प्रतिदर्श में चूंकि लगभग 20,000 शिक्षक है; यह उपयुक्त माना गया कि शिक्षकों, समाज के सदस्यों तथा छात्रों से जानकारी प्राप्त करने के लिए सुविन्यस्त प्रश्नावलियां तैयार की जाए। जांच का केंद्र-बिन्दु शिक्षक होने के कारण, यह उचित समझा गया कि प्रश्नावली की पूर्व जांच की जाए।

(i) तदनुसार, देश के विभिन्न भागों में स्थित तथा भिन्न-भिन्न विशिष्ट लक्षणों वाले विश्वविद्यालयों तथा कालेजो में सेवारत लगभग 2,000 शिक्षको पर एक सुविन्यस्त प्रश्नावली की पूर्व जांच की गई पूर्व जांच के विश्लेषण के प्रकाश में, शिक्षकों के लिए प्रश्नावली मे सशोधन करके, अंतिम प्रश्नावली तैयार की गई।

(ii) इसी प्रकार, शिक्षकों की पूर्व-जांच की गई प्रश्नावली के विश्लेषण के प्रकाश मे समाज के सदस्यो तथा छात्रो के लिए प्रश्नावलियां तैयार की गई।

ख. प्रश्नावलियों का प्रचार

प्रश्नावलियो के प्रचारार्थ, प्रतिदर्श विश्वविद्यालयों के वरिष्ठ संकाय-सदस्यो (सम्बंधित विश्वविद्यालयो के उपकुलपतियों द्वारा नामित) तथा प्रतिदर्श कालेजों के प्रिंसिपलों अथवा उन के द्वारा नामितों को अपने-अपने विश्वविद्यालय तथा कालेज के लिए मुख्य अनुसंधान अन्वेषक के रूप मे कार्य करने का अनुरोध किया गया।

(i) प्रश्नावलियों के प्रचार की कार्यप्रणाली पर देश के विभिन्न भागों मे आयोजित आठ कार्यशालाओं में मुख्य अनुसंधान अन्वेषको के साथ चर्चा की गई।

(ii) गोपनीयता बनाए रखने के लिए शिक्षकों को हिदायत दी गई कि वे प्रश्नावलियो को संलग्न लिफ़ाफ़ा मे बंद करके मुख्य अनुसंधान अन्वेषक को दे दें अथवा सीधे केंद्रीय तकनीकी एकक को रजिस्टरी द्वारा भेज दे।

ग. आंकड़ों का सत्यापन एवं प्रक्रमण (प्रोसेसिंग)

आंकड़ो की आंतरिक संगति का सुनिश्चय करने तथा कम्प्यूटर पर प्रोसेस के उपयुक्त बनाने के उद्देश्य से आंकड़ों/जानकारी के संहिताकरण तथा आंतरिक संगति की जांच के लिए एक योजना बनाई गई। उपयुक्त कम्प्यूटर कार्यक्रम विकसित करने के उपरांत, आंकड़ों/जानकारी का नेशनल इन्फार्मैटिक्स सेण्टर, नई दिल्ली के फोर्थ जेनरेशन कम्प्यूटर पर प्रक्रमण किया गया।

घ. विश्लेषण तथा रिपोर्ट लेखन

विश्लेषण : विश्लेषण के लिए निम्नलिखित पृष्ठभूमि-आधार माने गए :

1. ग्रामीण/शहरी संस्थान

2. सरकारी/गैर-सरकारी संस्थाएं

3. विश्वविद्यालय/कालेज
4. अकादमीय विधाएं
5. सहशिक्षा/महिला कालेज
6. लिंगभेद पर आधारित ग्रुप
7. हैसियत : स्थायी, अस्थायी, तदर्थ
8. अनुभव
9. आयु वर्ग
10. स्थिति ग्रुप
11. राज्य
12. एन एस एस क्षेत्र

1.04 संकल्पनात्मक रूप-रेखा तथा तुरत परिणामों की प्रथम रिपोर्ट

आयोग के सदस्यों ने, अपनी एक बैठक में 3000 शिक्षकों से प्राप्त उत्तरो के आधार पर प्रथम कम्प्यूटर गणनाओ के परिणामो पर चर्चा की। आयोग ने 1.03 मे निर्दिष्ट रूपरेखापरक दस्तावेजों पर भी विचार-विमर्श किया।

1.05 प्रारम्भिक निष्कर्ष

बाद में 6000 शिक्षकों के उत्तरों की द्वितीय कम्प्यूटर-गणनाओं पर आधारित प्रारंभिक निष्कर्षों पर भी चर्चा की गई। अंतिम आंकड़े 8400 से अधिक उत्तरो पर आधारित है।

1.06 विचार-विनिमय

1.06.01 राष्ट्रीय संगोष्ठी.—आयोग ने 5 से 9 सितबर, 1983 तक एक राष्ट्रीय संगोष्ठी भी आयोजित की जिसमें देश के विभिन्न भागों से आए 242 विख्यात विद्वानो ने भाग लिया। संगोष्ठी मे निम्नलिखित विषयों से सबधित संकल्पों पर विचार किया गया तथा इन्हें पारित किया गया :

(1) शिक्षण व्यवसाय के उद्देश्य,

(2) शिक्षण व्यवसाय की हैसियत तथा इसे जीवंत बनाने के उपाय;

(3) शिक्षकों के लिए सेवापूर्व तथा सेवा कालीन प्रशिक्षण/पुनर्प्रशिक्षण,

(4) प्रारंभिक शिक्षा का सार्वजनीकरण, प्रौढ़ शिक्षा, अनौपचारिक शिक्षा, क्रमिक शिक्षा, मुक्त स्कूलो तथा विश्वविद्यालयों का संचालन;

(5) व्यावसायिक विकास तथा व्यावसायिक जागरुकता के लिए शिक्षा संगठनों की भूमिका का पता-लगाना; तथा

(6) शिक्षको के लिए कल्याणकारी योजनाएं एवं शिक्षको के लिए आचार-संहिता का प्रश्न।

1.06.02 विचारार्थ विषयों पर चार संगोष्ठियां.—विचारार्थ विषय सं० 5, 6, 8 तथा 9 पर विचार विमर्श के लिए राष्ट्रीय शिक्षक आयोग-2 के सचिवालय ने वाराणसी (उ० प्र०), चंडीगढ़ (पंजाब), बड़ौदा (गुजरात) तथा मेरठ (उ० प्र०) में चार संगोष्ठियों का भी आयोजन किया। इन संगोष्ठियो में निम्नलिखित विषयों पर चर्चाए हुई

(1) शिक्षकों का पूर्व सेवा एवं सेवा कालीन प्रशिक्षण।

(2) दूर-शिक्षा के माध्यम से और अनौपचारिक शिक्षा के माध्यम से शिक्षको का प्रशिक्षण।

(3) शिक्षा तथा राष्ट्रीय विकास।

(4) शिक्षण की विधियां एवं तकनीकें।

1.07 आयोग की रिपोर्ट

संकल्पनात्मक रूपरेखापरक दस्तावेजो पर विचार-विमर्श तथा कम्प्यूटरों से प्राप्त आँकड़ों के प्रथम विश्लेषण के उपरांत, आयोग ने जून, 1984 में अपनी अंतरिम रिपोर्ट सरकार को प्रस्तुत की। इस प्रकार, आयोग ने अपने समक्ष विभिन्न मुद्दों के प्रति अपना दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से स्थिर कर लिया था। आयोग ने सभी आंकड़े प्राप्त हो जाने तथा आधारभूत विश्लेषण हो चुकने पर, अंतिम रिपोर्ट के पहले प्रारूप पर चर्चा पूरी कर ली थी। प्रारूप तैयार करने के दूसरे चरण तथा सिफारिशें तैयार करते समय भी चर्चाएं जारी रहीं। सम्पूर्ण आयोग की आठ बैठकें हुई।

1.08 सर्वेक्षण द्वारा प्रदर्शित शिक्षकों की स्थिति का विवरण

सर्वेक्षण द्वारा प्रदर्शित उच्च शिक्षण कार्य मे लगे शिक्षकों का एक विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है जिससे शिक्षक जगत् के विषय मे जानकारी मिल सकेगी।

1.08.01 आयु वर्ग

(क) **कालेज शिक्षक.**—प्रतिदर्श मे 6306 शिक्षको से सम्बन्धित आंकड़ो से पता चलता है कि शिक्षको की अधिसख्या 41 वर्ष से कम आयु की है, वे कुल संख्या के 60 प्रतिशत है। 41-50 वर्ष के आयु-वर्ग मे आने वाले शिक्षक एक चौथाई से कुछ अधिक है। 51-60 वर्ष के बीच की आयु वाले शिक्षक कालेजों मे सेवारत शिक्षको के लगभग नौ प्रतिशत हैं।

(ख) **विश्वविद्यालयी शिक्षक.**—विश्वविद्यालयों में सेवारत शिक्षक अपेक्षाकृत आयु मे बड़े हैं। 41 वर्ष से कम आयु वाले शिक्षक कुल शिक्षकों के आधे से कम हैं (46.2 प्रतिशत)। लगभग एक-तिहाई शिक्षक 41-50 वर्ष के आयुवर्ग में आते है। 51-60 वर्ष के बीच की आयु वाले शिक्षक 16 प्रतिशत हैं।

सारणी 6

कालेजों तथा विश्वविद्यालयों में शिक्षकों का आयु वर्ग 1982-83

आयु-वर्ग	कालेज		विश्वविद्यालय	
21—25 .	6.39		1.77	
26—30 .	15.64		10.03	
31—35 .	18.87		16.46	
36—40 .	20.77	60.67	18.00	46.2[illegible]
41—45 .	16.56		19.82	
46—50 .	10.51	27.07	13.95	33.7[illegible]
51—55 .	6.68		11.10	
56—60	2.28	8.96	4.99	16.0[illegible]
उत्तर अप्राप्त .	3.30		3.87	
कुल .	100.00		100.00	
कुल प्रतिदर्श शिक्षक .	6,306		2,144	

1.08.02 माता-पिता की शिक्षा.—कालेजों तथा विश्वविद्यालयों में सेवारत अधिकतर शिक्षक, जैसा कि संभावित है, शिक्षित परिवारों से हैं। कालेजों में सेवारत शिक्षकों में से 12 प्रतिशत के पिता तथा 26 प्रतिशत की माताएं और विश्वविद्यालयों में सेवारत शिक्षकों में से 10 प्रतिशत के पिता तथा 27 प्रतिशत की माताएं अशिक्षित थीं। कालेजों तथा विश्वविद्यालयों दोनो मे महिला शिक्षकों के माता-पिता का शैक्षिक स्तर पुरुष शिक्षकों के माता-पिता के शैक्षिक स्तर से ऊंचा था। दिलचस्प तथ्य यह है कि गैर-सरकारी अनुदान अप्राप्त कालेजों में सेवारत शिक्षकों के माता-पिता का शैक्षिक स्तर अन्य प्रकार के कालेजों में सेवारत शिक्षको के माता-पिता के शैक्षिक स्तर से ऊंचा था। इसका ब्यौरा सारणी 7 में दिया गया है।

सारणी 7

माता-पिता के शैक्षिक स्तर के आधार पर प्रतिदर्श शिक्षकों का वितरण

पिता की शिक्षा	अशिक्षित	मैट्रिक	स्नातक	स्नातकोत्तर	शोध	कुल प्रतिशत वय	उत्तर देने वालों की कुल संख्या
कालेज							
पुरुष/महिला							
पुरुष	13.91	43.39	22.82	4.94	0.79	85.86	4,745
महिला	5.65	31.57	43.76	16.06	2.77	91.34	1,437
कुल प्रतिशत	12.00	38.30	27.70	7.52	1.16	87.32	6,257
विश्वविद्यालय							
पुरुष/महिला							
पुरुष	11.17	34.48	27.81	8.00	1.84	83.30	1,715
महिला	5.66	16.44	44.47	19.68	1.35	87.60	367
कुल	10.17	31.30	30.60	10.03	1.82	83.91	2,118

माता की शिक्षा	अशिक्षित	मैट्रिक	स्नातक	स्नातकोत्तर	शोध	कुल प्रतिशत वय	उत्तर देने वालों की कुल संख्या
कालेज							
पुरुष/महिला							
पुरुष	30.75	40.44	5.17	0.14	0.44	76.94	4,770
महिला	14.33	48.45	17.09	2.89	0.55	83.31	1,446
कुल प्रतिशत	26.44	42.23	7.93	1.00	0.46	17.56	6,289
विश्वविद्यालय							
पुरुष/महिला							
पुरुष	29.59	38.74	5.47	0.76	0.23	74.78	1,143
महिला	11.32	48.25	18.60	5.12	0.54	83.83	616
कुल	26.63	40.02	7.79	1.43	0.28	76.21	1,759

1.08.03 पिता का व्यवसाय.—शिक्षकों के परिवार की आर्थिक पृष्ठभूमि की जांच उनके पिता के व्यवसाय के आधार पर की गई। विश्लेषण से पता चलता है कि शिक्षण व्यवसाय में सभी व्यवसाय-वर्गों का प्रतिनिधित्व है। हालांकि, 'कुशल कारीगरों' के व्यवसाय-वर्गों तथा विश्वविद्यालय एवं कालेज शिक्षक वर्ग से सम्बन्ध रखने वाले शिक्षकों का अनुपात अपेक्षाकृत कम है। इनमें से प्रत्येक लगभग 2-3 प्रतिशत हैं। महिला शिक्षक मुख्यतया आर्थिक-दृष्टि से बेहतर व्यवसाय वाले परिवारों से हैं यथा सरकारी अथवा गैर-सरकारी सेवा में अधिकारी, कार्यालय कर्मचारी, व्यापारी परिवार तथा व्यावसायिक परिवार। कुल महिला शिक्षको का दो तिहाई भाग इन्हीं व्यवसायों वाले परिवारों से संबद्ध है। अतः वे अपेक्षाकृत समृद्ध परिवारों से हैं। ब्यौरा सारणी 8 में दिया गया है।

1.08.04 शैक्षिक पृष्ठभूमि.—कालेजों में लगभग एक-चौथाई शिक्षक एम० फिल० अथवा पी० एच० डी० डिग्री प्राप्त है, जबकि विश्वविद्यालयों में अधिसंख्य (60.77) शिक्षक पी० एच० डी० डिग्री प्राप्त हैं। एम० फिल० डिग्री प्राप्त शिक्षक कुल संख्या के 4 प्रतिशत हैं। लगभग एक तिहाई स्नातकोत्तर है। ब्यौरे के लिए देखें सारणी 9।

सारणी 8

पिता के व्यवसाय के आधार पर प्रतिदर्श शिक्षकों का वितरण, 1982-83

(प्रतिशत वितरण)

पिता का व्यवसाय	कालेज पुरुष	कालेज महिला	कालेज कुल प्रतिशत	विश्वविद्यालय पुरुष	विश्वविद्यालय महिला	विश्वविद्यालय कुल प्रतिशत
1	2	3	4	5	6	7
1. कृषि/श्रम मजदूर	15.98	02.76	12.91	10.54	02.43	09.10
2. कुशल/तकनीकी कारीगर	03.12	01.86	02.79	02.88	03.50	02.94
3. गृहस्थ	01.46	00.76	01.28	02.01	01.08	01.87
4. दुकानदार	04.14	02.07	03.71	04.20	00.81	03.59
5. किसान	18.26	06.55	15.51	13.53	04.85	11.89
6. व्यापारी	08.33	12.06	09.23	06.74	10.24	07.32
7. सरकारी या गैर-सरकारी दफ्तर में कर्मचारी	11.61	14.61	12.26	13.24	12.13	13.15
8. सरकारी या गैर-सरकारी दफ्तर में अधिकारी	09.25	26.67	13.32	13.47	23.18	15.11
9. स्कूल शिक्षक	09.48	07.03	08.91	08.75	05.93	08.30
10. कालेज शिक्षक	01.42	03.93	02.01	02.42	02.70	02.47
11. विश्वविद्यालय शिक्षक	00.42	01.46	00.68	01.78	02.70	01.91
12. व्यावसायिक	06.05	10.75	07.12	06.76	18.06	08.77
कुल प्रतिशत	09.52	90.50	9.74	86.36	87.60	86.42
प्राप्त उत्तरों की कुल संख्या	4,723	1,433	6,236+	1,708	365	2,104+

+कुछ वर्गों से उत्तर प्राप्त न होने के कारण पुरुष तथा महिला वर्गों की संख्याएं योग से मेल नहीं खाती है।

सारणी 9

कालेज तथा विश्वविद्यालय शिक्षकों की शैक्षिक पृष्ठभूमि

1982-83

शैक्षिक योग्यता	कालेज	विश्वविद्यालय
स्नातक	2.63	1.54
स्नातकोत्तर	72.96	32.60
एम० फिल०	6.61	4.01
पी०एच० डी०	17.00	60.77
पी-एच० डी० से आगे	0.11	0.33
अन्य	0.00	0.35
उत्तर अप्राप्त	0.68	0.69
कुल जोड़	6,306	2,144

1.08.05 स्त्री-पुरुष संख्या.—कालेजों तथा विश्वविद्यालयों में सेवारत स्त्री-पुरुष शिक्षकों से सम्बन्धित आंकड़ों से पता चलता है कि कालेजों में महिला शिक्षकों की संख्या पुरुष शिक्षकों की संख्या के एक चौथाई से कुछ कम (23 प्रतिशत) है। विश्वविद्यालयों में महिला शिक्षक केवल 17 प्रतिशत हैं।

1.08.06 सेवावधि की प्रकृति.—प्रतिदर्श में लिए गए 6306 कालेज शिक्षकों में से लगभग 18 प्रतिशत तदर्थ अथवा अस्थायी रूप से काम कर रहे थे। विश्वविद्यालयों में भी लगभग इतने ही प्रतिशत (16.35 प्रतिशत) शिक्षक तदर्थ अथवा अस्थायी रूप से काम कर रहे थे। ब्यौरे के लिए सारणी 10 देखें।

सारणी 10

प्रतिदर्श कालेज तथा विश्वविद्यालय शिक्षकों की सेवावधि की प्रकृति

1983

सेवावधि	कालेज	विश्वविद्यालय
तदर्थ	5.38	6.20
अस्थायी	12.50	11.15
स्थायी	68.52	70.71
उत्तर अप्राप्त	13.60	11.94
कुल	100.00	100.00
कुल प्रतिदर्श शिक्षक	6,306	2,144

1.08.07 शिक्षकों का सकल वेतन

(क) **कालेज :** सकल वेतन (अर्थात् मूल वेतन तथा भत्ते) के आधार पर शिक्षकों का आय-वर्ग वितरण यह प्रकट करता है कि कालेज के अधिकांश शिक्षक (60 प्रतिशत) प्रतिमास 1001 रुपये से 1,500 रुपये से कम सकल वेतन पाते हैं, और तीन प्रतिशत

ऐसे शिक्षक हैं जिन्हें प्रतिमास रु० 1000.00 से भी कम मिलता है। एक-चौथाई शिक्षकों को प्रतिमास 2000 रुपये से 2500 रुपये के बीच सकल वेतन मिलता है। 2500 रुपये तथा 3500 रुपये के बीच सकल वेतन पाने वाले शिक्षक केवल 7 प्रतिशत ही हैं।

(ख) **विश्वविद्यालय :** विश्वविद्यालयों के शिक्षकों का आय-वितरण कालेज-शिक्षकों से कुछ बेहतर हैं। लगभग 40 प्रतिशत विश्वविद्यालयी शिक्षक 2000 रुपये प्रतिमास से कम पाते हैं। (इस वर्ग में लगभग 9 प्रतिशत को प्रतिमास 1000 रुपये तथा 1500 रुपये के बीच सकल वेतन मिलता है और एक प्रतिशत को 1000 रु० प्रतिमास से कम)। एक तिहाई शिक्षक 2000 रु० तथा 2500 रु० के बीच तथा एक-चौथाई के लगभग 2500 रु० और 3500 रु० के बीच प्रतिमास वेतन पाते हैं। कृपया सारणी 11 देखें।

सारणी 11

सकल वेतन आय-वर्ग के आधार पर प्रतिवर्श शिक्षकों का वितरण

आय-वर्ग (रुपये प्रतिमास)

संवर्ग	500	501–1000	1001–1500	1501–2000	2001–2500	2501–3500	उत्तर प्राप्त	कुल
1	2	3	4	5	6	7	8	9
कालेज संवर्ग								
लेक्चरर	C.35	2.31	24.79	40.37	24.03	2.85	4.73	5,13C
रीडर	C.CC	C.62	7.12	18.89	41.18	28.48	3.10	321
प्रोफेसर प्रिंसिपल	0 32	0.81	1.79	28.33	36.79	27.29	4.56	614
कुल	0.6C	2.76	21.31	37.5C	25.8C	6.60	4.76	62.64
विश्वविद्यालय संवर्ग								
लेक्चरर	0.44	C.44	14.90	47.47	30.32	2.87	3.14	1,142
रीडर	0.49	0.C0	.97	12.62	57.25	34.79	3 4C	612
प्रोफेसर प्रिंसिपल	0.30	0.3C	.6C	4.81	12.95	78.61	2.4C	32[illegible]
कुल	0.42	0.51	8.72	3C.18	32.51	23.93	3.17	2,192

1.08.08 **शिक्षकों के पति/पत्नी की आय.**—कालेजो तथा विश्वविद्यालयो में सेवारत शिक्षकों के लगभग 21 प्रतिशत पति/पत्नी को कुछ-न-कुछ आय होती है। शिक्षकों के विभिन्न संवर्गों मे विश्वविद्यालयी प्रोफेसरों तथा कालेज प्रिंसिपलों के अर्जक पति/पत्नी का अनुपात दूसरों की अपेक्षा अधिक है। शिक्षकों के काम करने वाले पति/पत्नियों में से 66 प्रतिशत की आय 1000 रु० तथा 3000 रु० प्रतिमास के बीच है। शेष की आय 1000 रु० प्रतिमास से कम है। कृपया देखें सारणी 12।

सारणी 12

पति/पत्नी की मासिक आय के आधार पर प्रतिवर्श शिक्षकों का वितरण

(प्रतिशत वितरण)

संवर्ग	200	201	501	1000	अर्जकों की कुल संख्या तथा कुल शिक्षकों की प्रतिशतता	प्रतिवर्श की कुल संख्या
1	2	3	4	5	6	7
कालेज संवर्ग						
लेक्चरर	2.24	4.87	25.02	67.85	1,067(20 68)	5,160
रीडर.	1.29	7.79	18.18	72.72	77(23.84)	323
प्रोफेसर/प्रिंसिपल	6.55	6.55	32.78	54.09	183(51.44)	356
कुल योग	2.73	5.38	25.75	66.12	1,355(21.49)	+6,305

सारणी 12—जारी

1	2	3	4	5	6	7
विश्वविद्यालय				68.23	1,355(24.13)	6,305
लेक्चरर . . .	1.41	6.85	23.46	62.5C	128.(2C.71)	618.
रीडर. . . .	3 12	7.03	27.34	64.40	59(37.63)	157
प्रोफेसर/प्रिंसिपल . .	5.08	10.16	20.33	65.19	477	2,143+
कुल योग . . .	2.51	7.12	25.15			

+कुलयोग में लेक्चरर से निम्नस्थ पदधारी भी सम्मिलित हैं ।

अध्याय 2

उच्च शिक्षा तथा राष्ट्रीय विकास

2.01 शिक्षकों की सामान्य भूमिका

किसी भी समाज में शिक्षण व्यवसाय का महत्व तथा उसकी भूमिका इस बात पर निर्भर करती है कि वह समाज मानव स्तर पर शिक्षा से क्या अपेक्षा रखता है और वह राष्ट्रीय विकास में शिक्षा को क्या भूमिका प्रदान करता है तथा राष्ट्र किन विकास-लक्ष्यों को प्राप्ति के प्रयास करता है। ये तीनों स्तर तथा विचार परस्पर सम्बद्ध होते हैं, एवं ये देश की ऐतिहासिक तथा सामाजिक-सांस्कृतिक स्थिति और आर्थिक नीति का परिणाम होते हैं।

2.02 औपनिवेशिक शिक्षा

औपनिवेशिक काल मे, विकास आनुषंगिक अथवा उपातीय मात्र था, आर्थिक नीति का लक्ष्य मुख्यत: प्राकृतिक साधनों का शोषण तथा कच्चे माल अथवा अर्ध-तैयार उत्पादों के निर्यात के साथ-साथ ब्रिटेन में विनिर्मित औद्योगिक माल का विपणन होता था। परिणामस्वरूप, पेंसिलें, मिटाने वाले रबर तथा ज्योमेट्री बक्स तक का आयात किया जाता था। अत: यह स्वाभाविक था कि, जनशक्ति-उत्पादन के संदर्भ में, इस प्रकार की अर्थव्यवस्था में शिक्षा की कोई विशेष मांग नहीं थी। प्रशिक्षण की गुणवत्ता के लिए मांग और भी अधिक सीमित थी क्योंकि विवेचक क्षमताओं तथा रचनात्मक संभाव्यताओं को प्रोत्साहन देने से यह खतरा पैदा होता था कि कहीं शिक्षित वर्ग उपनिवेश तंत्र के स्थायित्व के लिए खतरा न बन जाए। वस्तुत:, शिक्षा को रोजमर्रा के काम-काज चलाने के लिए अनिवार्य बुराई समझा जाता था। इसलिए न तो इसके प्रसार की आवश्यकता थी और न ही इसे मनुष्यों की उन्नति का साधन बनाने की।

2.03 एकांतवादी दृष्टिकोण

यह स्मरण रखना चाहिए कि सभी देशों तथा समुदायों के शोषक वर्ग, थोड़े समय पूर्व तक, शिक्षा के प्रति सशंकित ही रहे हैं, उसके पक्षधर नहीं। यही मुख्य कारण है कि शिक्षा जीवन की वास्तविकताओं से अलग-थलग मात्र पाठ्यपुस्तक के ज्ञान तथा "विधा-विशेष" के ज्ञान तक ही सीमित रही। भौतिकी तथा अर्थशास्त्र की शिक्षा विश्वव्यापी अमूर्त सिद्धांतों तथा नियमों के अनुसार दी जाती है, हालांकि इस प्रकार के दृष्टिकोण के कारण ऐसे शिक्षित लोग सामाजिक पेचीदगियों, उपयोगिता तथा उद्देश्य से विहीन ही रहें। इसी सिद्धांत के अनुरूप शिक्षक की भूमिका मात्र यह थी कि वह अपने विषय पूर्णरूपेण पढ़ा दे तथा छात्र को जो कुछ पढ़ाया गया है, उसे वमन करने की उसकी क्षमता के आधार पर उसकी 'परीक्षा' ले। इस पद्धति ने अनुगमन तथा सैद्धांतिक विद्वता को जन्म दिया। सदियों तक कई देशों में इस पद्धति के प्रचलित रहने के बावजूद, ऐसे कई महान दार्शनिक, विद्वान तथा वैज्ञानिक पैदा हुए जोकि हमारी आज की सभ्यता के निर्माता बने है, और यह मानव रचनात्मकता की अदम्य प्रकृति तथा अज्ञान को दूर करने, प्रकृति पर विजय पाने तथा अपने जीवन स्तर में सुधार करने के मनुष्य के अनंत संघर्ष का स्पष्ट प्रमाण है।

2.04 सामाजिक परिवर्तन के साधन के रूप में शिक्षा

इस शताब्दी के मध्य से स्थिति में भारी परिवर्तन हुआ है। एक के बाद एक देश उपनिवेशवाद के चंगुल से स्वतंत्र हुआ है। अर्थव्यवस्था तथा समाज मे आमूल परिवर्तन के लिए राष्ट्रीय स्तर पर भारी प्रयास किए गए हैं। "विकास" शब्द को नए अर्थ तथा आयाम प्राप्त हुए है। ठहराव के स्थान पर परिवर्तन आज के युग का नारा है और इसे लाने के लिए शिक्षा को एक साधन की मान्यता दी गई है। शिक्षा किस प्रकार यह भूमिका निभा सकती है, इसके लिए विशाल अनुभव का एकत्रीकरण किया गया है। संभवत: यह कहना गलत नहीं होगा कि इस प्रक्रिया में स्वयं शिक्षा की संकल्पना परिवर्तित हो गई है। अब यह औपचारिक संरचना अथवा संस्थानों में सीमित नहीं है—इसका कई प्रकार से प्रसार हो सकता है। इस उद्देश्य के लिए समूचे समाज के मानव-साधनों का प्रयोग किया

जा सकता है। ज्ञान की गतिशीलता ने इस संकल्पना को जन्म दिया है कि मनुष्य जीवन पर्यंत सीख सकता है तथा संस्थाओं में निरंतर शिक्षा की प्राप्ति के कार्यक्रम जारी हैं। स्वयं सीखने तथा इसके अति वैयक्तिक स्वरूप के बारे में कई नई बातें खोजी गई हैं। बीते दिनों में सुस्थापित विधाओं की सीमाएं टूट चुकी हैं और अंतर्विधा शिक्षण तथा शोध का युग आ गया है। शिक्षा की गुणवत्ता को समृद्ध करने तथा इसके प्रसार के लिए नई-नई विधियों का व्यापक प्रयोग होने लगा है।

2.05 शिक्षा तथा आत्मनिर्भरता

हमारे अपने ही देश में, स्वतंत्रता-प्राप्ति लम्बे राष्ट्रीय संघर्ष का परिणाम थी, जिसके दौरान विकास के लक्ष्य स्पष्टतः परिभाषित हुए। इनमें सर्वाधिक महत्वपूर्ण लक्ष्य था जनशक्ति तथा भौतिक साधनों का अधिकाधिक उपयोग करके आधुनिक आत्म-निर्भर अर्थव्यवस्था की स्थापना करना। इसका आधार स्पष्ट रूप से यह अनुभूति है कि आज के विश्व में राजनीतिक स्वतंत्रता भी आर्थिक आधार की शक्ति तथा अपेक्षाकृत आत्मनिर्भरता पर निर्भर करती है। राष्ट्रीय विकास का एक अन्य इतना ही महत्वपूर्ण लक्ष्य माना जा सकता है उत्पादन में वृद्धि और उसके साथ-साथ माल तथा सेवाओं का ऐसा वितरण जिससे कि निर्धनता का अंत हो, सामाजिक न्याय के वातावरण की रचना हो और समाजवादी तथा लोकतंत्रात्मक राज्य की नींव सुदृढ़ हो। राष्ट्रीय विकास के लक्ष्यों को यदि मानवीय अर्थों में लिया जाए तो इसका अभिप्राय केवल विशेष विषयों का ज्ञान तथा जागरूकता ही नहीं है, अपितु संस्कृति, परम्परा तथा जनता की आवश्यकताओं के प्रति सजगता भी है, व्यक्तित्व उन मूल्यों से भी सम्पन्न होना चाहिए जिनसे समाजवाद, राष्ट्रीय एकता, धर्मनिरपेक्षता तथा वैज्ञानिक प्रकृति को तो बल मिले ही, साथ ही साथ उसमें व्यक्तिगत संकल्प एवं प्रतिबद्धता के माध्यम से समाज को बदलने का उत्साह भी पैदा हो। दूसरे शब्दों में, राष्ट्रीय विकास की हमारी अवधारणा आर्थिक उन्नति से आगे जाती है। इसमें विभिन्न भाषा-भाषियों, विभिन्न धर्मावलम्बियों तथा विभिन्न संस्कृतियों वाले भारतवासियों को एकबद्ध एवं जीवंत राष्ट्र का स्वरूप देने की भावना भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। इस क्षेत्र में शिक्षा को ही हमारे प्रयासों का मुख्य आधार बनाना होगा।

2.06 विकास में निवेश के रूप में शिक्षा

विकास के आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक लक्ष्यों के लिए सभी स्तरों पर विशेष प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था करने की तुरंत आवश्यकता है। शिक्षा के बिना इनकी प्राप्ति संभव नहीं। अपर्याप्त शिक्षा से आर्थिक अस्थिरता, क्षेत्रीय असतुलन तथा सामाजिक अन्याय का युग बढ़ता चला जाएगा जिससे विघटनकारी तनावों का बनते जाना असंभव नहीं है। उपयुक्त शिक्षा के माध्यम से आर्थिक तथा सामाजिक विकास को आसानी से एवं तेजी से प्राप्त किया जा सकता है। मानवीय साधनों का अन्य सभी साधनों के उपयोग पर गुणक प्रभाव पड़ेगा। यही कारण है कि शिक्षा को विकास में निवेश के रूप† में मानने की अवधारणा को अधिकाधिक लोग मानने लगे हैं, और इसी कारण से शिक्षा आयोग†† की रिपोर्ट में शिक्षा को ही शांतिपूर्ण सामाजिक परिवर्तन का एकमात्र साधन माना गया है।

2.07 आत्मनिर्भरता की आधारशिला के रूप में उच्च शिक्षा

आर्थिक तथा सांस्कृतिक विकास एवं देश में लोकतंत्र को सुदृढ़ बनाने में प्रारम्भिक शिक्षा की अनिवार्य भूमिका को हमारे गणतंत्र घोषित होने के समय से ही संविधान के अनुच्छेद 45 के अंतर्गत निदेशक सिद्धांतों के रूप में स्वीकार किया गया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में इस बात पर पुनः बल दिया गया है†††। एक विशिष्ट व्यापक कार्यक्रम के माध्यम से प्रौढ़ निरक्षरता के उन्मूलन को भी स्वीकारा गया है। जनशक्ति उपलब्ध कराने और विशेषकर आधुनिक समाज में प्रौद्योगिकी तथा सेवाओं की आधारभूत संरचना स्थापित करने के लिए, उच्चतर माध्यमिक स्तर पर शिक्षा के व्यवसायीकरण को भी अनिवार्य समझा गया है। उच्च शिक्षा का तो विशेष महत्व है ही क्योंकि शिक्षा के सभी अन्य पक्षों एवं स्तरों के लिए विचार तथा व्यक्तियों की व्यवस्था उसी से होती है। किसी भी राष्ट्र के विकास की कोटि तथा गति इस बात पर निर्भर करती है कि वह किस प्रकार के वैचारिक वातावरण को जन्म देने में समर्थ होता है, और इतिहास, संस्कृति परम्परा तथा मूल्यों की कैसी संकल्पनाएं वह राष्ट्र अपनाता है तथा लौकिक तथा आध्यात्मिक जीवन की समस्यायों पर विजय पाने के लिए अपनी मानवीय क्षमता में कितना विश्वास करता है। यही वे परिस्थितियां हैं जिनमें बुद्धिजीवी तथा उच्च शिक्षा को अपनी भूमिका निभानी होती है। उद्योग, कृषि, प्रशासन तथा सेवाओं को अभीष्ट समुन्नत एवं परिवर्तनशील बहुविध जनशक्ति उच्च शिक्षा ही उपलब्ध कराती है। किसी भी अर्थव्यवस्था में आत्मनिर्भर तथा अन्तर्जनित स्वरूप को बनाए रखने के लिए ऐसे सक्षम व्यक्तियों का होना अनिवार्य है जो संसार में हो रहे विकास से हमें पूर्णरूपेण परिचित कराने के लिए आवश्यक अनुसंधान और विकास कार्यों का पूर्वानुमान, आयोजन एवं कार्यान्वय कर सकें। अतः हमारे अनुसंधान एवं विकास संस्थान तथा कालेज एवं विश्वविद्यालय हमारी अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी और राष्ट्रीय महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति का निश्चित साधन हैं।

2.08 शिक्षा के लिए वित्त व्यवस्था में वृद्धि की आवश्यकता

चूंकि शिक्षा के विभिन्न स्तर अन्योन्याश्रित हैं, अतः यह कह पाना संभव नहीं है कि कौन-सा स्तर किसी दूसरे स्तर से अधिक महत्वपूर्ण है। आयोग का यह मत है कि शिक्षा के लिए समूचे तौर पर किए जाने वाले वित्तीय प्रावधान की अपर्याप्तता प्रायः

---

†सातवीं योजना के प्रति दृष्टिकोण में खाद्य उत्पादकता तथा रोजगार पर विशेष बल दिया गया है। आधुनिक खाद्य-उत्पादन, सभी क्षेत्रकों में उत्पादकता वृद्धि तथा रोजगार के संदर्भ में शिक्षा की प्रत्यक्ष भूमिका स्वतः स्पष्ट है। कई अध्ययनों द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि राष्ट्रीय सम्पदा के उत्पादन के निश्चयन में सभी शिक्षा-क्षेत्रक, कार्य बल की गुणवत्ता के माध्यम से महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।

††राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद द्वारा 1971 में प्रकाशित पृ० 8, पैरा 1.14

†††शिक्षा आयोग के रिपोर्ट पर भारत सरकार द्वारा जारी किया गया संकल्प, मद 4(1)

इस निष्कर्ष पर पहुंचा देती है कि प्रति व्यक्ति अधिक व्यय के कारण उच्च शिक्षा प्रारंभिक शिक्षा को अपने उचित अंश से वंचित कर देती है। निस्संदेह, विश्वव्यापी प्रतियोगितात्मक औद्योगिक एवं प्रौद्योगिक विकास में उच्च शिक्षा के महत्व को समझते हुए, कई बार अंतर्राष्ट्रीय अभिकरण उच्च शिक्षा के विषय में ऐसी शंकाओं को बल देते हैं और अग्रता के आधार पर प्रारंभिक शिक्षा के संदर्भ में इस पर आपत्ति उठाते हैं। हमें इस मामले में सतर्क रहना चाहिए और इस निश्चय को दोहराना चाहिए कि शिक्षा के विभिन्न स्तरों का आनुपातिक एवं सामंजस्यपूर्ण विकास होना चाहिए ताकि सामाजिक परिवर्तन में शिक्षा की भूमिका अधिकाधिक पूरी हो सके। इन स्तरों में साधनों के विभाजन का कोई पूर्व निर्धारित सूत्र नहीं हो सकता, किंतु विकसित देशों में जो अनुपात निर्धारित हैं उनसे हम भी सामान्य मार्गदर्शन ले सकते हैं। इस विषय पर यदि कोई अध्ययन किया जाए तो पता चलेगा कि हमें उच्च शिक्षा के लिए पर्याप्त वित्तीय व्यवस्था करने में अभी बहुत समय लगेगा।

2.09 उच्च शिक्षा में उत्तमता

राष्ट्रीय विकास के लक्ष्य उच्च शिक्षा के दो लक्षणों को स्थापित करते हैं : एक यह कि यह ज्ञान की वृद्धि के लिए सदा कार्यरत रहती है तथा इसे विश्व प्रतियोगिता के योग्य होना होता है इसलिए इसे सर्वोच्च गुणवत्ता से सम्पन्न होना चाहिए और दूसरा यह कि इसे व्यक्ति तथा समाज दोनों से जुड़ा होना चाहिए। उच्च कोटि की शिक्षा की व्यवस्था एक जटिल कार्य है, जिसके लिए योग्यता के आधार पर शिक्षकों तथा छात्रों का चयन कराना होता है। इस प्रक्रिया में, हमारी जनता के कुछ वर्गों तथा देश के कुछ भागों में शताब्दियों से चली आ रही अक्षमताओं के निवारणार्थ कुछ ढील भी देनी पड़ सकती है। इसके लिए संस्थाओं की आधारिक संरचना के दृढ़ीकरण, पाठ्यचर्या के आधुनिकीकरण एवं परिवर्तन तथा शिक्षकों की गुणवत्ता एवं निष्पादन स्तर में उन्नति भी आवश्यक है।

2.10 उच्च शिक्षा की व्यापकता

सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात तो यह है कि हमारे संदर्भ में उच्च शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए छात्र में सजगता, व्यापक दृष्टिकोण और मूल्यों तथा उद्देश्यों की ऐसी भावना का जन्म जो हमारे गणतंत्र में राष्ट्रीय एकता तथा प्रभावी नागरिकता को बल प्रदान करे। व्यावसायिक अथवा सामान्य प्रकृति की शिक्षा विषय के ज्ञानमात्र अथवा सम्बन्धित कौशल के प्रयोग तक ही सीमित नहीं रह सकती। इसके परिवेश में हमारे इतिहास, संस्कृति, एवं परम्परा के प्रति जागरुकता, समाज को आगे ले जाने के लिए हमारी सामाजिक-आर्थिक समस्याओं तथा इनके निवारणार्थ किए जा रहे एवं वांछित प्रयासों, की जानकारी शामिल होना चाहिए। जागरूकता एवं अंतर्दृष्टी की प्राप्ति उपयुक्त पुस्तकों तथा पाठ्यक्रमों एवं चर्चाओं तथा सगोष्ठियों में शिक्षकों और छात्रों के बीच चर्चाओं-परिचर्चाओं से हो सकती है, छात्र अनुभवपरक परिस्थितियों में इसे और भी बेहतर रूप में ग्रहण कर सकते हैं। इस संदर्भ में समाज के साथ विभिन्न रूपों में अंतर्क्रियाएं करने तथा विकासात्मक कार्यों में भाग लेने से महत्वपूर्ण उपलब्धियां संभव हैं। परंतु आवश्यकता इससे भी अधिक की है। छात्र को तर्कसंगत दृष्टिकोण, परिवर्तन के प्रति प्रवणता, सत्य एवं न्याय के लिए प्रतिबद्धता और अपने सह-नागरिको की सेवा की इच्छा की भावनाएं विकसित करने में सहायता देना भी जरूरी है। देश में लोकतंत्र के अस्तित्व तथा आर्थिक विकास के लिए एवं अनिवार्य शांति के लिए धर्म निरपेक्षता तथा राष्ट्रीय एकता बहुत महत्वपूर्ण है। अतः शिक्षा सभी स्तरों पर, विशेषकर तृतीय स्तर पर, छात्रों के व्यक्तित्व को इन्हीं दिशाओं में विकसित होने के अवसर प्रदान करने में सक्षम होनी चाहिए। यदि शिक्षा संस्थाएं इस प्रकार के ज्ञान एवं चेतना के विकासार्थ साधन तथा उपाय ढूंढ पाएं तो इसका अर्थ होगा कि वे उपनिवेशवादी युग की परिपाटी से स्वतंत्र हो गई है।

2.11 शिक्षण से ज्ञान प्राप्ति को सुगम बनाना

इस सब के लिए छात्रों एवं शिक्षकों के बीच अंतर्क्रिया के पूर्ण परिवर्तन की आवश्यकता है। छात्र ज्ञान प्राप्ति के उद्देश्य से ज्ञान अपने आप आर्जित कर लेंगे। उनमें जिज्ञासु प्रवृत्ति स्वयं ही विकसित हो जाएगी, ज्ञान की खोज भी कर लेंगे और प्राप्त ज्ञान के अनुरूप दृष्टिकोण भी बना लेंगे। अपने ज्ञान विस्तार एवं क्षमता के संदर्भ में उनमें से कई अपने शिक्षक से भी आगे निकल जाएंगे। अतः शिक्षक केवल ज्ञाता तथा ज्ञान-दाताही न बना रहकर ज्ञानार्जन में सुसाध्यकर होगा। हो सकता है वह छात्र के साथ साझे अनुभव के माध्यम से ज्ञान का सहशोधक का ही रूप धारण करे। गुणवत्ता में सुधार के लिए शैक्षिक टेक्नालोजी के पूर्ण उपयोगी करण की आवश्यकता है और इसके लिए विद्वानों को प्रशिक्षित करने तथा, हमारे उद्देश्यों की सिद्धि के लिए, उपयुक्त समुन्नत सामग्री के उत्पादन हेतु भरसक प्रयास अभीष्ट हैं। इस प्रकार, हमारी सामाजिक तथा आर्थिक महत्वाकांक्षाओं के संदर्भ में शिक्षा की गुणवत्ता में उन्नति का अर्थ उसके उस अर्थ से बहुत भिन्न हो जोकि स्वतंत्रतापूर्व युग में प्रचलित था।

2.12 उच्च शिक्षा में प्रासंगिकता

प्रासंगिकता के लिए भी क्षेत्र विशेष में सामाजिक परिस्थितियों, रोजगार संभाव्यताओं तथा संवृद्धि एवं विकास की संभावनाओं के अध्ययन की आवश्यकता होती है। प्रासंगिक कार्यक्रमों के संचालन के लिए पुराने कार्यरूपों से पर्याप्त रूप में हटना पड़ता है। इसके लिए समाज तथा शिक्षा-संस्थाओं के बीच, तथा विकास कार्यों में रत विभिन्न सरकारी एवं गैर-सरकारी अभिकरणों तथा शिक्षा-संस्थाओं के बीच सहयोग वांछित होता है। साधनों एवं सुविधाओं के साथ-साथ जनशक्ति में बंटवारा भी आवश्यक है।

2.13 अनुसंधान एवं उच्च शिक्षा

उच्च शिक्षण संस्थाएं स्वभावतः अमर्त एवं अनुप्रयोज्य दोनों प्रकार के नवज्ञान के सृजन की क्रिया में रत रहती हैं। उच्च गुणवत्ता सम्पन्न शिक्षा का कोई भी कार्यक्रम वे लोग नहीं चला सकते जो स्वयं सृजनशील न हों और नई परिस्थितियों में प्रवर्तन, खोज अथवा ज्ञान के प्रयोग की संवेदना से विहीन हों। समूचे विश्व में यह माना जाता है कि समाज की प्रगति में योगदान करने वाले नूतन विचारों

का एकमात्र स्रोत युवा शिक्षक तथा विद्वान ही होते हैं। उच्च शिक्षा संस्थाओं के अनुसंधान संबंधी कार्यकलाप अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उत्तमता तथा समाज की समस्याओं के समाधान मे उनकी अनुप्रयोज्यता की भावना से प्रेरित होते हैं। इन कार्यकलापो को एक बार पुनः सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक तथा प्राकृतिक वातावरण से जोड़ा जा सकता है ताकि देश में स्थानीय तथा क्षेत्रीय विकास की समस्याओं की ओर ध्यान दिया जा सके।

2.14 सहसम्बन्ध तथा साधन

आयोग के मतानुसार प्रासंगिकता की अवधारणा के लिए सामाजिक-आर्थिक कार्यकलापों के साथ शिक्षा के सहसम्बन्ध तथा शिक्षा के नए रूप एवं विषय-वस्तु के कार्यान्वयन के लिए वर्द्धित साधन—इन दोनों की आवश्यकता होती है। परंतु इस प्रकार की स्थिति में, शिक्षा, व्यापक अर्थों में, उत्पादकता बढ़ाएगी तथा नए कार्यकलापों के लिए जनशक्ति तैयार करके, प्रौद्योगिक विकास का सवर्धन करके तथा अनुप्रयोजन की समस्याओं के समाधान द्वारा नए साधनो को जन्म देगी। अतः यह प्रस्ताव स्वाभाविक तथा अति तर्कसंगत है कि प्रत्येक मंत्रालय अथवा विभाग के लिए योजना-आवंटन का कुछ प्रतिशत भाग जनशक्ति की तद्रूप आवश्यकताओं तथा वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिक विकास के लिए निश्चित किया जाए। इन आवंटनों को एक मद मे इकट्ठा करके विभिन्न स्तरों तथा प्रकार की शिक्षा के लिए बांटा जाए, जिसमे से पर्याप्त भाग उच्च शिक्षा के लिए नियत हो ताकि अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों की विशिष्ट आशाएं पूरी हो सकें। परिस्थितियों के अनुसार यह स्वाभाविक ही होगा कि शैक्षिक कार्यक्रम बनाने में विकास सम्बन्धी विभागों के विशेषज्ञों को भी सम्मिलित किया जाए। राष्ट्रीय आयोग की राय है कि जब तक इस प्रकार की नीति नहीं अपनाई जाएगी, राष्ट्रीय प्रगति मे अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए शिक्षा, विशेषकर उच्च शिक्षा को अभिष्ट सहसम्बन्ध तथा साधनों की उपलब्धि नही हो पाएगी।

2.15 शिक्षकों की भूमिका तथा उनका उत्तरदायित्व

2.15.01 परिवर्तन-दूत के रूप में शिक्षक.—यह स्पष्ट है कि राष्ट्रीय विकास के प्रयासों के अभिन्न भाग के रूप मे शिक्षा शिक्षकों पर, जोकि शिक्षा के मुख्य माध्यम हैं, भारी उत्तरदायित्व डालती है। शिक्षक न केवल अनुकूल विधियों से शिक्षा के कार्यक्रम का संचालन करता है, अपितु वह इसका जन्मदाता भी है। यह शिक्षक ही है जो विभिन्न आयु तथा विचारों वाले छात्रो के साथ अंतर्वार्ता द्वारा इस बात का सुनिश्चिय करता है कि शिक्षा को विचारानुकलन अथवा प्रचार मात्र का माध्यम बनाए बिना व्यापक शैक्षिक लक्ष्यो की प्राप्ति हो सके। बुद्धिजीवी के रूप में वह एक सामाजिक आलोचक हैं जिसमें कि समाज को सर्जनात्मक दिशा की ओर ले जाने के उत्तरदायित्व की भावना है। वह स्वयं का भी शिक्षक है क्योंकि वह सतत रूप से ज्ञान की सीमा पर कार्यरत रहता है और उसे प्रायः अभूतपूर्व समस्याओं तथा स्थितियों का सामना करना पड़ता है जहां कि पहले के प्राप्त अनुभव से इसे सीमित सहायता ही मिल पाती है। परिवर्तन के दूत के रूप में उसे लचीला तथा परिवर्तन के लिए तत्पर रहना पड़ता है।

2.15.02 ज्ञान-विस्फोट के संदर्भ में.—शिक्षक के पारम्परिक कार्यक्षेत्र, अर्थात् शिक्षण एवं शोध, मे विगत कुछ दशकों में परिप्रेक्ष्य मूलरूपेण परिवर्तित हो गए हैं। उस जमाने में, ज्ञान का प्रसार अपेक्षाकृत धीमी गति से होता था तथा कक्षा में शिक्षण का उद्देश्य मोटे तौर पर सामाजिक स्थिति को यथावत् बनाए रखना ही था, पाठ्यक्रम एव निर्धारित पाठ्य पुस्तकें सरलता से उपलब्ध नही थीं, शिक्षक अपने तैयार किए नोटों के आसरे बरसों काम चलाते रहते थे जिन्हें कि छात्रों को लिखवा दिया जाता था क्योंकि परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए उन्हीं विचारो को उगल देना छात्रों का काम था। आजके जमाने में, ज्ञान के विस्फोट तथा अपने समाज से सम्बन्धित आकड़ों पर शिक्षा को आधारित करने की आवश्यकता के कारण, पाठ्यचर्याओं को प्रायः संशोधित करना पड़ता है और ऐसा कुछ वर्षों के अंतराल पर चलता रहता है। परिणामस्वरूप, अपने ज्ञान को अद्यतन रखने के लिए, शिक्षकों को परिश्रम करना पड़ता है, उन्हें स्वयं सदा पढ़ते रहना पड़ता है।

2.15.03 नई कार्यप्रणाली की आवश्यकता.—शिक्षण पद्धतियों में परिवर्तन भी अनिवार्य है क्योंकि सतही पढ़ाई नहीं बल्कि प्रत्यक्ष विषयो, विचारों तथा समस्याओं को समझना अभिप्रेत है ताकि यथार्थ को परिवर्तित करने हेतु ठोस स्थितियों में ज्ञान का अनुप्रयोग किया जा सके। छात्रों को निष्क्रिय ज्ञानग्राही नहीं मान कर चलना है, अपितु उन्हें जिज्ञासु तथा अन्वेषक, आलोचक तथा प्रवर्तक बनने को प्रोत्साहित करना है। और फिर, चूंकि जानकारी प्राप्त करना मात्र ही शिक्षा का उद्देश्य नही माना जा सकता, प्रवृत्तियों, चरित्र, मूल्यों तथा सामाजिक एवं विकासात्मक पक्षों को भी ध्यान में रखना होगा। अतः केवल लेक्चर दे देना, फिर वह कितना भी श्रेष्ठ क्यों न हो, पर्याप्त नहीं है। मनो-वैज्ञानिको ने हमें ज्ञानार्जन-प्रक्रिया की काफ़ी जानकारी प्रदान की है और हम जानते हैं कि शिक्षा के विभिन्न उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए क्षेत्रकार्य, परियोजनाओं, संगोष्ठियों, प्रेरक अभ्यासों, समस्या-समाधान सत्रों, शिक्षक-छात्र चर्चाओं तथा सत्रीय पत्रो आदि जैसे कई साधन उपलब्ध हैं। किसी समय प्रचलित स्लाइडों से अधिक प्रभावी तथा बहुप्रयोजनीय दृश्य-श्रव्य सामग्री, पारदर्शी चित्र तथा फिल्में उपलब्ध हैं और आने वाले वर्षो में इन का प्रयोग बढ़ता ही जाएगा। अतः शिक्षकों को अपने व्यवसाय के नए औजारों से पुनः अपने आप को लेस करना होगा ताकि शिक्षण की अंतक्रियात्मक विधियों से लाभ उठा सकें।

2.15.04 सर्जनात्मक अवसर.—फिल्मो, वीडियों कैसेटों तथा वीडियों डिस्को के संदर्भ में तथा इनकी कीमतों में कमी और कम्प्युटरों में समुन्नति के कारण इस समय ऐसी स्थिति विद्यमान है कि सभी प्रकार के विषयों में, सभी स्तरों के लिए तथा भांति-भांति की सोफ्ट वेयर सामग्री का उत्पादन हो। चूंकि रेडियो तथा टी०वी० पहले से ही इस प्रकार के शिक्षा-कार्यक्रमों का प्रसारण कर रहे हैं, शिक्षकों को भी इस अवसर का लाभ उठाते हुए दूरस्थ शिक्षा के हित में अपनी सर्जनशील योग्यता का उपयोग करना चाहिए जिससे कि उच्च शिक्षा के प्रसार एवं परिवेश में वृद्धि होगी। जनता के लिए आमतौर पर, तथा शिक्षकों समेत व्यावसायिकों के लिए भी सतत शिक्षा-कार्यक्रम के कार्यकलाप को नए आयाम प्रदान करते हैं जिसका कि राष्ट्रीय जनशक्ति विकास से सीधा सम्बन्ध है।

2.15.05 ज्ञान प्राप्तकर्ता के रूप में शिक्षक.—विश्वविद्यालय अनुदान आयोग एवं अन्य एजेन्सियों तथा समितियों ने विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, कला और वाणिज्य सकायों के स्नातकपूर्व पाठ्यक्रमों में व्यवसायपरक पाठ्यक्रम चालू करने की सिफारिशें की हैं। ये पाठ्यक्रम अक्सर नई प्रौद्योगिकियों में और कभी-कभी पारंपरिक विधाओं के अंतर्गत न आने वाले क्षेत्रों में आवश्यकता पर आधारित पाठ्यक्रम के रूप में होंगे। उपकरण निर्माण, वानिकी, पर्यटन तथा कार्मिक प्रबंधन जैसे पाठ्यक्रम इस प्रकार के पाठ्यक्रमों में आते हैं। यद्यपि इन पाठ्यक्रमों को शुरू करने के लिए सहायता उपलब्ध है और छात्रों को नौकरी प्राप्त करने में इससे मिलने वाले लाभों को भी सब जानते हैं परन्तु फिर भी यह योजना गति नहीं पकड़ पा रही क्योंकि अधिकांश विद्यमान शिक्षक सुस्थापित विधाओं में पढ़े और पारंगत हुए हैं और वे इन पाठ्यक्रमों की कल्पना करने, योजना बनाने, पाठ्यक्रम निर्धारित करने वाले बोर्डों से इसे पास कराने तथा उन्हें लागू कराने में असमर्थ सिद्ध होते हैं। अतः शिक्षकों को अपने ज्ञान का क्षेत्र-विस्तार करना होगा, उन्हें अन्यों से विशेषज्ञ-सलाह प्राप्त करने और सहकारिता के आधार पर इस प्रकार के कार्यक्रमों को लागू करने की विधि सीखनी होगी।

2.15.06 समाज के साथ सहयोग के वृत के रूप में शिक्षक.—सहयोग पक्ष और भी महत्वपूर्ण है क्योंकि कौशल, क्षेत्र अथवा प्रयोग-प्रधान प्रशिक्षण, जोकि प्रायः ऐसे पाठ्यक्रमों का एक भाग ही होता है, अन्य संस्थाओं तथा अभिकरणों के सहयोग के बिना संभव नहीं। केवल शिक्षक ही इन कार्यक्रमों के निष्पादन के लिए सम्बद्ध विशेषज्ञों तथा अभिकरणों से इसे प्राप्त कर सकते हैं। वास्तव में, जब शिक्षक सरकारी अभिकरणों तथा विभागों, सरकारी क्षेत्र-उद्योगों तथा स्वैच्छिक संस्थाओं के सहयोग से शैक्षिक कार्यक्रमों की स्थापना के प्रयास करेंगे, तभी यह संभव होगा कि कार्यक्रम सार्थक रूप में बनें और कार्यान्वित हो जिससे कि शिक्षा प्राप्त करने पर छात्रों को रोजगार मिलने के अवसरों में वृद्धि होगी।

2.15.07 शिक्षक तथा समस्या-समाधानपरक अनुसंधान.—संगत विषयों के अध्ययन एवं अनुसंधान के लिए सामाजिक, आर्थिक कार्यकलाप के साथ सहसम्बन्धों का होना भी आवश्यक है। उदाहरण स्वरूप, हो सकता है कि कृषि विभाग बीजों अथवा उर्वरक के वितरण के लिए अथवा शीत भंडारन् की सुविधाओं को उपलब्ध करवाने के लिए विशेष उपायों में रुचि रखता हो। शिक्षा संस्थाओं के छात्र तथा विद्वान, विशिष्ट सामाजिक सांस्कृतिक सांचे में, उत्पादकता, ग्रामीण विकास, पारिवारिक साधनों, पोषण, स्कूली शिक्षा, सामाजिक परिवर्तन के लिए तत्परता, आदि आदि पर उन कार्यक्रमों के प्रभाव का आसानी से अध्ययन कर सकते हैं। इस प्रकार के सहसम्बन्धों से कई बार वैज्ञानिक तथा प्रौद्योगिक समस्याओं का पता लग जाएगा जिससे कि अनुसंधान कार्यक्रम को सफल रूप से चलाया जा सकेगा। इस प्रकार के सहयोग से नए विचारों को जन्म मिलेगा, जिनमें से बहुत से उत्पादकता तथा निष्पादन में सुधार लाएंगे तथा दूसरों से ज्ञान में वृद्धि होगी। इस सब के परिणामस्वरूप दीर्घकाल तक नए नए अनुप्रयोग सामने आते रहेंगे। इस प्रकार के प्रासंगिक अनुसंधान के माध्यम से, उच्च शिक्षा में सेवारत शिक्षक न केवल अपने व्यावसायिक निष्पादन में श्रेष्ठता लाएंगे, विद्वानों को रोजगार के अच्छे अवसर प्रदान करने में सहायक होंगे, अपितु वे असंख्य सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक समस्याओं के समाधान में भी सहायक सिद्ध होंगे। आधारभूत अनुसंधान तो विश्वविद्यालयी शिक्षकों की विशिष्टता है ही, इस का महत्व अनुप्रयुक्त अनुसंधान से अधिक भी है, क्योंकि आधारभूत अनुसंधान ही ज्ञान भंडार में आधारभूत परिवर्तन लाते हैं तथा अनुप्रयुक्त अनुसंधान पर स्थायी प्रभाव डालते हैं।

2.15.08 प्रबंध-परिवर्तन के प्रवर्तक : शिक्षक.—इन कार्यकलापों के लिए कार्य तथा प्रबन्धन की नई विधियों की आवश्यकता होगी, साथ ही साथ संस्थाओं के कार्यकरण एवं कार्यसंचालन में भी परिवर्तन लाना होगा। इसके लिए पूर्वाग्रह त्यागने होंगे क्योंकि वर्तमान संस्थापनाओं अथवा प्रकार्यों को हम अपरिवर्तनीय अथवा अनुल्लंघनीय मानकर नहीं चल सकते। शिक्षा संस्थाओं को यदि हमारे समाज के उत्पादकतापरक कार्यकलापो के ताने बाने में एक सुगठित रूप धारण करना है तो स्वायत्तता की संकल्पना में निश्चित परिवर्तन अनिवार्य है। एकल उपागम का स्थान तंत्र उपागम को देना होगा।

2.15.09 उत्तरदायित्व : सरकार तथा शिक्षक दोनों पर.—आयोग इस बात को स्पष्ट रूप से समझता है कि भारतीय समाज के विकास के नवीन परिप्रेक्ष्य में, ऐसे असंख्य सहवर्ती कार्य तथा उत्तरदायित्व हैं जो शिक्षा पर समाज के प्रति तथा समाज पर शिक्षा के प्रति हैं। बहुत से ऐसे कार्य हैं जो अब किए जाने हैं, उपनिवेशवादी युग में जिन्हें समझा ही नहीं गया था, या फिर संसार के कुछेक उन्नत देशों की विकास प्रक्रिया में भी किसी का ध्यान उस ओर नहीं गया। परन्तु, इतना स्पष्ट है कि मुद्दा शिक्षा की उच्च गुणवत्ता का हो या नई शिक्षण विधियों का, पाठ्यक्रमो की पुनर्रचना का हो अथवा आर्थिक कार्यकलापों से सहसंबध का, छात्र के चरित्र तथा उसकी प्रकृति के निर्माण के महान् कार्य अथवा विकासजन्य आवश्यकताओं तथा शिक्षा प्रबन्धन से सम्बद्ध समस्याओं से जुड़े उच्च कोटि के अनुसंधान कार्य में मुख्य भूमिका शिक्षक की ही है। सामाजिक परिवर्तन तथा राष्ट्रीय विकास के साधन के रूप में जो महत्व शिक्षा का है, वही महत्व शैक्षिक परिवर्तन के साधन के रूप में शिक्षक का है। यदि शिक्षक प्रेरित हो कर हताश होगा, यदि उसे अपनी भूमिका निभाने के लिए प्रोत्साहन के स्थान पर उपेक्षा मिलेगी अथवा उसे आधारभूत आवश्यकताओं से वंचित रखा जाएगा, तो हम वर्तमान आवश्यकताओं के उपयुक्त मानवीय अथवा व्यावसायिक भूमिका की अपेक्षा नहीं कर सकते। वस्तुतः, नकारात्मक रूप में, दुःखी तथा हताश शिक्षक अपनी निजी तथा अपने समूह की आवश्यकताओं के प्रति अनुचित रूप से सजग रहेंगे और अपने समाज की आवश्यकताओं तथा मांग के प्रति लापरवाह। ऐसे शिक्षक न केवल अपनी जिम्मेदारी के प्रति अचेत रहेंगे, बल्कि हो सकता है कि वे युवकों को गलत शिक्षा देने का काम कर बैठें जिससे समाज, विशेषकर लोकतंत्री समाज की समस्याओं में और वृद्धि होगी। अतः राष्ट्रीय उच्च शिक्षा शिक्षक आयोग सरकार से अनुरोध करता है कि वह सामाजिक परिवर्तन लाने में शिक्षक के महत्व को समझे और उचित दर्जा, प्रोत्साहन तथा इस उद्देश्य हेतु साधन उपलब्ध कराएं। दूसरी ओर आयोग शिक्षक वर्ग से भी अनुरोध करता है कि वे नई संभावनाओं के प्रति अपने दिल दिमाग को खुला रखें तथा सामाजिक उद्देश्य की अत्यावश्यक भावना से ओतप्रोत होकर अपने उत्तरदायित्व निभाएं।

अध्याय 3

शिक्षकों की सामाजिक प्रतिष्ठा का ह्रास

3.01 भूमिका-प्रतिष्ठा सम्बंध

रिपोर्ट के पूर्वगामी भाग में हमने शिक्षा के क्षेत्र में उठने वाले कुछ मुद्दे, सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में शिक्षकों द्वारा अदा की जाने वाली भूमिका, तथा राष्ट्रीय विकास में सक्रिय सहभागी होने के नाते उनके द्वारा सम्पन्न किए जाने योग्य जटिल प्रकार्य की ओर ध्यान दिया है। इसी संदर्भ में शिक्षण व्यवसाय की वास्तविकताओं की समीक्षा करना भी महत्वपूर्ण है, और ये वास्तविकताएं हैं—शिक्षको का समाज में स्थान, उनके जीवन-यापन की परिस्थितियां, तथा उनके काम-काज का माहौल ।

3.01.01 यूनेस्कों ने तो सातवे दशक में ही, अंतर-सरकार सम्मेलन की सिफारिशों के माध्यम से शिक्षकों की भूमिका तथा उनकी हैसियत के बीच सहसम्बन्ध पर निम्नलिखित रूप में ज़ोर दिया था :

"शिक्षकों के संदर्भ में "प्रतिष्ठा" शब्द का अर्थ दोनों भाव रखता है—एक यह कि उनके कार्य की महत्ता के स्तर को तथा उनके कार्य के निष्पादन के लिए उनकी योग्यता को समझते हुए उन्हे दिया जाने वाला दर्जा अथवा सम्मान तथा दूसरा यह कि अन्य व्यावसायिक वर्गों की तुलना में उनके कार्य की स्थितियां, उन्हें दिए जाने वाले वेतन तथा अन्य जीवन-सुविधाएं।" (अंतर-सरकार सम्मेलन की सिफारिश, यूनेस्कों, पृ० 196) ।

3.02 शिक्षकों की सामाजिक प्रतिष्ठा की वर्तमान स्थिति

बहुव्यापी अनुभूति है कि जितना ह्रास शिक्षण व्यवसाय की प्रतिष्ठा का हुआ है, किसी अन्य व्यवसाय का नहीं। शिक्षकों एवं अन्य व्यवसायों के कई वर्गों ने इस व्यवसाय के प्रति आदर के अभाव तथा शिक्षकों की छवि के प्रति माता-पिता, छात्रों तथा सामान्यजनों की प्रतिकूल धारणा से, देश में शिक्षको की प्रतिष्ठा में, परिलक्षित ह्रास पर असंतोष व्यक्त किया है। यह तो संभव है कि कभी-कभी शिक्षकों की प्रतिष्ठा में हुए ह्रास को बढ़ा-चढ़ा कर पेश किया जाता है, किंतु यह भी सत्य है कि वर्तमान स्थिति अति असंतोषजनक है तथा इसके लिए तुरंत उपचार किए जाने चाहिए ।

3.02.01 शिक्षकों की प्रतिष्ठा के बारे में शिक्षकों, छात्रों तथा समाज की अवधारणाएं.—आयोग से भेंट करने वाले कई शिक्षको का मत था कि शिक्षक स्वयं अपने व्यवसाय के प्रति कोई आदर का भाव नहीं रखते। व्यवसाय के वर्तमान दर्जे के बारे में शिक्षकों का मत सर्वेक्षम के माध्यम से उपलब्ध किया गया। अधिकतर शिक्षकों की राय थी कि व्यवसाय का समाज में औसत दर्जा है, एक-चौथाई इसे नीचे अथवा बहुत नीचे मानते थे। केवल 16 प्रतिशत शिक्षकों की दृष्टि में शिक्षण व्यवसाय का दर्जा ऊंचा अथवा बहुत ऊंचा था। शिक्षकों से यह पूछा गया था कि विभिन्न वर्गों में शिक्षण व्यवसाय की कैसी छवि है। प्राप्त उत्तरों के विश्लेषण से पता चला कि उनमें से एक तिहाई की राय में शिक्षण व्यवसाय के प्रति प्रशासकों तथा राजनीतिज्ञों में अच्छी धारणा नही थी। अन्य वर्गों के अधिकतर लोगों में इस व्यवसाय की अच्छी छवि थी, विशेषकर छात्रों के माता-पिता की दृष्टि में। किंतु बहुसंख्यक लोगों के उत्तर "उदासीनतापूर्ण" थे। समाज के आधे से अधिक सदस्य, एक तिहाई छात्र तथा शिक्षकों का कुछ प्रतिशत शिक्षण व्यवसाय के प्रति या तो कोई अच्छी धारणा नही रखता था या फिर उसकी छवि के प्रति "उदासीन" भाव रखता है। किसी भी व्यवसाय के समाज में दर्जे का एक पैमाना वह प्रभाव होता है जो उस व्यवसाय के सदस्य साधारण रूप से लोगों तथा समाज पर रखते हैं। अधिकतर शिक्षकों का विचार था कि सरकार पर, किसी भी स्तर पर उनका प्रभाव नही के बराबर है। जहां तक समाज पर उनके प्रभाव का प्रश्न है, लगभग आधे शिक्षक अनुभव करते हैं कि इनका प्रभाव शून्य है। बहुत से शिक्षकों का विचार था कि न केवल छात्रों पर उनका भारी प्रभाव होता है, बल्कि वे उनके मूल्यों तथा चरित्र को भी रूप देते हैं ।

3.03.01 सापेक्ष व्यवसाय-अग्रता.—किसी भी व्यवसाय का क्या दर्जा है, इसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि अन्य व्यवसायों की तुलना में उसे क्या स्थान दिया जाता है। उसके सापेक्ष स्थान का निश्चयन इसी प्रकार के तुलनात्मक मूल्यांकन पर किया जा सकता है। दस व्यवसायों की सूची मे से, अग्रता के क्रम में, इस व्यवसाय की जानकारी देने को कहा गया जो वे अपने पुत्र/पुत्री अथवा छोटे भाई को अपनाने की सलाह देंगे। प्रथम श्रेणी सिविल सेवा, मेडिसिन तथा इंजीनियरी, इसी क्रम में, लगभग सभी विश्वविद्यालय तथा कालेज-छात्रों की पहली दो अग्रताएं थीं। विश्वविद्यालय छात्रों के लगभग पांचवें भाग ने विश्वविद्यालय में शिक्षण को चुना तथा इसे चुनने वाले कालेज-छात्रों की संख्या 12 प्रतिशत थी। कालेज के शिक्षण के व्यवसाय का कालेज-छात्रों के अग्रता-क्रम में छठा स्थान था। यह द्रष्टव्य है कि विश्वविद्यालय में शिक्षण को अग्रता-क्रम में अंतिम स्थान देने वाले कालेज-छात्र एक-चौथाई तथा विश्वविद्यालय छात्र पांचवां भाग थे। कालेज में शिक्षण को सबसे नीची अग्रता देने की प्रतिशतता अधिक थी।

3.03.02 समाज की प्रतिक्रिया.—समाज के सदस्यों की प्रतिक्रिया भी ऐसा ही चित्र प्रस्तुत करती है। उत्तरदाताओं में से आधे प्रथम श्रेणी सिविल सेवा, एक-तिहाई से कुछ अधिक ने डाक्टरी तथा पांचवें भाग से कुछ अधिक ने इंजीनियरी को अग्रता-क्रम में पहले या दूसरे स्थान पर रखा। केवल 12 प्रतिशत ने विश्वविद्यालय शिक्षण को तथा केवल 8 प्रतिशत ने कालेज शिक्षण को अग्रता प्रदान की; अग्रता-क्रम में इनका स्थान छठा तथा नवां था। यह भी द्रष्टव्य है कि विश्वविद्यालय के उत्तरदाताओं का लगभग पांचवां भाग तथा कालेज के उत्तरदाताओं का एक-तिहाई से कुछ अधिक भाग विश्वविद्यालयों तथा कालेजों में शिक्षण को अंतिम दो अग्रताएं प्रदान करता है।

3.04 हितलाभों की दृष्टि से शिक्षण व्यवसाय का स्थान

3.04.01 समाज में स्थान.—समाज के सदस्य शिक्षण व्यवसाय को, आर्थिक हितलाभों, सेवा-सुरक्षा तथा कार्य-स्वतंत्रता के संदर्भ में, क्या स्थान देते हैं?

(क) आर्थिक हितलाभ

आर्थिक हितलाभों की दृष्टि से विश्वविद्यालय तथा कालेज शिक्षकों को अंतिम दो स्थान प्राप्त है। केवल तीन प्रतिशत उत्तरदाताओं ने शिक्षण व्यवसाय को पहला या दूसरा स्थान दिया। वास्तव में, लगभग 40 प्रतिशत ने शिक्षण (विश्वविद्यालय अथवा कालेज, किसी में भी) को, आर्थिक हितलाभों की दृष्टि से, विभिन्न निम्नतम दर्जे वाले व्यवसायों में रखा। पहले चार स्थान, जैसाकि अपेक्षित है, डाक्टरों, प्रथम श्रेणी सिविल सेवा के अधिकारियों प्राइवेट फर्मों के अधिकारियों तथा बैंक अधिकारियो को दिए गए।

(ख) सेवा-सुरक्षा

सेवा-सुरक्षा की दृष्टि से शिक्षण-व्यवसाय को तनिक बेहतर स्थान दिया गया। इस सदर्भ में भी, सात में से एक उत्तरदाता ने ही शिक्षण को पहले दो स्थान दिए। सम्पूर्ण अग्रता-क्रम में विश्वविद्यालय तथा कालेज में शिक्षकों को, सेवा-सुरक्षा की दृष्टि से, चौथा तथा पांचवां स्थान दिया गया। इसमें भी शिक्षक प्रथम श्रेणी सिविल सेवा के अधिकारियों तथा बैंक अधिकारियों से पीछे थे, जिन्हें कि सूचीगत किसी भी व्यवसाय की अपेक्षा उच्च अग्रताक्रम ही दिए गए थे।

(ग) कार्य-स्वतंत्रता

जहां तक कार्य-स्वतंत्रता का सम्बन्ध है, शिक्षण को व्यवसाय के रूप में उच्च स्थान प्राप्त था, विश्वविद्यालय के शिक्षकों को, सम्पूर्ण अग्रता-क्रम में, तीसरा तथा कालेजों के शिक्षकों को चौथा, जबकि पहला तथा दूसरा स्थान वकीलों और डाक्टरो को मिला।

3.04.02 स्वयं शिक्षकों द्वारा स्थान-निर्धारण.—उपर्युक्त तीन लक्षणो के आधार पर, तुलनात्मक दृष्टि से, विश्वविद्यालय तथा कालेज शिक्षक स्वयं अपने व्यवसाय को क्या स्थान देते हैं? इनके उत्तर भी इसी प्रकार थे।

(क) "वर्तमान हितलाभों" के आधार पर, मुश्किल से 5 तथा 8 प्रतिशत विश्वविद्यालय तथा कालेज शिक्षकों ने शिक्षण को पहले दो स्थान दिए। वास्तव में तो अधिकतर शिक्षकों ने इसे अंतिम दो स्थान दिए। आशानुसार, लगभग 40 प्रतिशत शिक्षकों ने, "वर्तमान हितलाभों" की दृष्टि से अन्य व्यवसायों की अपेक्षा प्रथम श्रेणी सिविल सेवाओ को प्रथम स्थान दिया। अग्रताक्रम में अगले दो स्थान डाक्टरों तथा एयरलाइन अधिकारियों को दिए गए।

(ख) गैस कनेक्शन, चीनी या सीमेंट के परमिट लेने, बच्चों को अच्छे स्कूलों में प्रवेश आदि जैसी अन्य सुविधाओं की दृष्टि से भी स्थान निर्धारण ऐसा ही था। इस आधार पर मुश्किल से 2-3 प्रतिशत शिक्षक इस व्यवसाय को सर्वोच्च अग्रता देते हैं। उसे सबसे नीचा स्थान दिया गया जबकि सिविल सेवाओं, प्राइवेट फर्मों तथा एयरलाइनों को शिक्षण व्यवसाय की तुलना में कहीं श्रेष्ठ माना गया।

(ग) "काम की परिस्थितियों" की दृष्टि से स्थिति कुछ बेहतर थी। इस आधार पर 15 से 19 प्रतिशत विश्वविद्यालय तथा कालेज शिक्षकों ने शिक्षण व्यवसाय को पहले दो स्थान दिए और व्यवसायों में अग्रता-क्रम में इसे चौथा स्थान प्राप्त था। यह तथ्य भी द्रष्टव्य है कि जहां तक काम की सामान्य परिस्थितियों का सम्बन्ध है, इसे प्रथम श्रेणी सिविल सेवाओं से कहीं निम्न स्थान दिया गया।

(घ) कार्य-स्वतंत्रता के संदर्भ में, स्थिति भिन्न थी। तुलनात्मक आधार पर व्यवसाय के रूप में विश्वविद्यालयों के शिक्षकों को पहला तथा कालेजों के शिक्षकों को दूसरा स्थान प्राप्त था। लगभग एक-तिहाई शिक्षकों ने अपने व्यवसायों को पहले दो स्थान दिए।

3.05 प्रत्युत्तरों का समग्र विश्लेषण

अतएव, जहां तक भौतिक लाभों और सुविधाओं का प्रश्न है, न केवल समाज के सदस्यों ने बल्कि स्वयं शिक्षकों ने शिक्षण व्यवसाय को बहुत ही निम्न दर्जे का व्यवसाय माना । कार्य की सामान्य परिस्थितियों की दृष्टि से शिक्षण व्यवसाय बीच की कोटि मे आता है । किन्तु कार्य की स्वतंत्रता की दृष्टि से इसे सर्वाधिक उपयुक्त व्यवसाय माना गया है । अन्य व्यवसायों की तुलना में शिक्षण व्यवसाय की सापेक्ष स्थिति के बारे में विश्वविद्यालयों और कालेजों के अध्यापको में ही नही बल्कि उनके और समाज के बीच भी सामान्य सहमति पाई गई है । विश्लेषण से यह स्पष्ट संकेत मिलता है कि शिक्षक और समाज दोनों ही शिक्षण व्यवस्था को एक ऐसा व्यवसाय समझते हैं जिसमें भौतिक सुविधाएं तो अत्यल्प है किंतु जो कार्य-स्वातंत्र्य की दृष्टि से बहुत उपयुक्त है ।

3.06 प्रतिष्ठा के ह्रास के लिए उत्तरदायी कारक

पचास प्रतिशत से अधिक शिक्षकों ने वेतन और सेवा की परिस्थितियों को प्रतिष्ठा या हैसियत के ह्रास का कारण माना है । महत्व की दृष्टि से दूसरा कारण सरकार द्वारा मान्यता न दिया जाना है । लगभग आधे उत्तरदाताओ ने इसे प्रथम दो कोटियों में रखा है । "कार्य निष्ठा, ईमानदारी और गर्व की भावना का अभाव" यह तीसरा कारण था जिसे शिक्षकों की स्थिति के ह्रास के लिए उत्तरदायी माना गया । यह महत्वपूर्ण है कि बीस प्रतिशत से भी अधिक उत्तरदाताओ ने इसे उपरिलिखित कारणो मे से सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना । अन्य कारण यथा, कार्यकुशलता और पांडित्य का निम्न स्तर, अनुपयुक्त शिक्षाशास्त्रीय प्रवीणता और छात्र-कल्याण की प्रतिबद्धता का अभाव इन्हें अधिक महत्वपूर्ण नहीं समझा गया ।

संक्षेप में, शिक्षको ने, "वेतन और सेवा की परिस्थितियां", "सरकार की ओर से मान्यता का अभाव" तथा "कार्य-निष्ठा, ईमानदारी और गर्व की भावना की कमी" इन तीन कारणों को अपनी स्थिति के ह्रास के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना ।

3.07 अच्छे शिक्षकों के लिए अनिवार्य गुण

3.07.01 **कर्तव्यनिष्ठा.**—इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि "कर्तव्यनिष्ठा" को समाज ने बहुधा एक अच्छे शिक्षक का महत्वपूर्ण गुण माना । 55 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने इसे सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना । उनके दिमाग में कोई भी अन्य कारण इतना प्रमुख नहीं था । बहुत बड़ी संख्या में उत्तरदाताओं ने जिन दो अन्य गुणों को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना वे हैं "अच्छा शैक्षिक रिकार्ड" और "ज्ञान तथा उत्कृष्टता की तलाश" ।

3.07.02 **छात्रों को प्रेरणा/अभिप्रेरणा देना.**— शिक्षकों ने काफी बड़े प्रतिशत में "छात्रों को सीखने तथा रचनात्मक कार्यकलापों के लिए प्रेरित/अभिप्रेरित करने के गुण को, एक अच्छे अध्यापक के काम का मूल्यांकन करने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारण माना । बड़ी संख्या में कालेज शिक्षकों ने इसे महत्वपूर्ण माना । कुल मिलाकर विश्वविद्यालयों के शिक्षकों ने इसे द्वितीय कोटि में रखा ।

3.07.03 **अच्छा शैक्षणिक रिकार्ड और शोध कार्य.**—महत्व की दृष्टि से अगला कारण है अच्छा शैक्षणिक रिकार्ड और शोध कार्य । कालेजों के लगभग आधे शिक्षकों ने इसे अत्यधिक महत्वपूर्ण माना । लगभग 60 प्रतिशत विश्वविद्यालय-शिक्षकों ने इस तथ्य को पहली दो कोटियों में रखा । उच्च शिक्षा शास्त्रीय कुशलता और पांडित्य जिसकी झलक शिक्षक के व्यापक अध्ययन और आलोचनात्मक निर्णयों में मिलती है, समग्रत: तीसरी और चतुर्थ कोटियों में रखे गए । इन्हें कालेजों और विश्वविद्यालयों के लगभग एक-चौथाई से लेकर एक-तिहाई तक शिक्षकों ने क्रमश: महत्वपूर्ण माना । ऐसे शिक्षकों की संख्या जो ज्ञान की प्रयोज्यता और विस्तार-कार्य में दिलचस्पी या संस्था के सफल प्रबंधन की योग्यता तथा पाठ्येत्तर क्रियाकलापों में सहभागिता जैसे गुणों को महत्वपूर्ण समझते है—कुछ कम ही रही ।

3.07.04 **उत्कृष्टता की तलाश और ख्याति अर्जन.**—शिक्षकों मे यह सामान्य सहमति पाई जाती है कि जनसाधारण की, और यहां तक कि इस व्यवसाय के अपने ही सदस्यों की दृष्टि में शिक्षकों की स्थिति को ऊंचा उठाने के लिए आर्थिक लाभ एक अनिवार्य शर्त है किंतु यह एक शर्त ही काफी नहीं है । व्यावसायिक सक्षमता का प्रवर्धन, छात्रों को प्रेरित/अभिप्रेरित करने की क्षमता, काम के प्रति निष्ठा, ऊँचे दर्जे का पांडित्य और अच्छा शैक्षणिक रिकार्ड, ज्ञान और उत्कृष्टता की तलाश इन सभी का बराबर महत्व है । यदि व्यावसायिक सक्षमता का स्तर आर्थिक स्थितियों में सुधार के साथ-साथ ऊँचा नही उठता तो फिर शिक्षकों की स्थिति में कुछ सुधार नहीं हो सकता । उत्कृष्टता की तलाश और शिक्षक तथा शोधकर्ता के रूप में ख्याति—इन दो कारकों पर बार-बार बल दिया जा रहा है । शिक्षकों की स्थिति को ऊँचा उठाने में इन दोनों कारकों की महत्वपूर्ण भूमिका है भले ही इनसे प्राप्त होने वाली भौतिक सुविधाएं अन्य व्यवसायो से मिलने वाली भौतिक सुविधाओं के बराबर नही हैं ।

3.08 शिक्षकों की प्रतिष्ठा में सुधार लाने के लिए आवश्यक माने गए कारक

3.08.01 **व्यावसायिक-सक्षमता, इसकी मान्यता और परिलब्धियों में बढ़ोत्तरी.**—समाज के सदस्यो के बड़े प्रतिशत ने "सराहनीय सेवा की मान्यता", "शैक्षिक सक्षमता को बढ़ाने के लिए प्रेरणा" और "सुविधाओं तथा परिलब्धियों में वृद्धि" को ऐसे कारक माना जो शिक्षकों की स्थिति में सुधार ला सकते हैं । "पदोन्नति के अपेक्षाकृत अधिक अवसर" तथा "विभिन्न स्तरों पर निर्णय लेने वाले निकायों मे समावेश" इनको अन्य कारकों की तुलना में कम महत्वपूर्ण माना गया, यद्यपि लगभग एक तिहाई उत्तरदाताओं ने इसका "हाँ" में उत्तर दिया । कम से कम समाज की दृष्टि में तो व्यावसायिक सक्षमता की मान्यता और सुविधाओं तथा परिलब्धियो में बढ़ोत्तरी दोनों सर्वाधिक प्रमुख कारण थे जिनसे शिक्षकों की स्थिति को ऊँचा उठाने की आशा की जा सकती है । शिक्षक भी इसी बात को महसूस करते हैं । बड़े प्रतिशत में शिक्षकों ने "शिक्षक के रूप मे सक्षमता" को पहली दो कोटियों में रखा ।

(क) **शिक्षक और समाज दोनों ही व्यावसायिक-सक्षमता को निर्णायक मानते हैं।**— समाज के सदस्य और शिक्षक दोनों के उत्तरों के विश्लेषण से जो महत्वपूर्ण बात स्पष्टतया प्रदर्शित होती है वह यह है कि एक शिक्षक को "अच्छा" मानने के लिए जो गुण महत्वपूर्ण माने गए हैं, शिक्षकों की स्थिति के ह्रास के लिए जो कारक उत्तरदायी समझे गए हैं तथा जो तथ्य अध्यापक की स्थिति को ऊँचा उठाने के लिए महत्वपूर्ण माने गए है उन सब में पारस्परिक सादृश्यता है। व्यावसायिक सक्षमता बनाने वाले कारक वही थे जो एक अच्छे शिक्षक के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण माने गए। इनके पूर्ण अभाव अथवा कमी को प्रायः ही शिक्षकों की स्थिति में ह्रास का उत्तरदायी माना गया। व्यावसायिक सक्षमता को बढ़ाने वाले गुणों का विकास और संवर्धन भी ऐसे कारण थे जो शिक्षक की स्थिति सुधारने मे अत्यधिक महत्वपूर्ण समझे जाते हैं।

(ख) **व्यावसायिक सक्षमता आर्थिक कारक से अधिक महत्वपूर्ण है।**—संक्षेप में, व्यावसायिक उत्कृष्टता और भौतिक स्थितियां दोनो ही शिक्षक की स्थिति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। आज के जमाने में प्रतिष्ठा हासिल की जाती है आरोपित नही की जाती, इसलिए शिक्षक का अपनी वृत्तिक उत्कृष्टता और अपने चरित्र द्वारा यह साबित करना है कि समाज ने उनमें जो विश्वास व्यक्त किया है वे उसके सुपात्र हैं। यद्यपि ये कुछ अप्रत्यक्ष से कारण लगते हैं किंतु निस्संदेह इन का अपना ही महत्व है। यह इस बात से स्पष्ट है कि आज एक व्यवसाय के रूप में अध्यापन-वृत्ति को समाज में ऊँची प्रतिष्ठा भले ही प्राप्त नही है, किंतु वैयक्तिक रूप में कुछ शिक्षको ने अपनी अध्यापन-उत्कृष्टता के कारण बहुत ऊंची स्थिति प्राप्त कर ली है, उन्होंने पीढ़ी दर पीढ़ी छात्रों को प्रेरित किया है, या फिर अपने अपने क्षेत्रों में वे विशिष्ट शोधकर्ता रहे हैं या अपने काम के प्रति निष्ठावान और वृत्ति के प्रति समर्पित रहे हैं। आर्थिक कारक के महत्व को किसी भी रूप में कम नहीं आंका जा सकता किंतु यह महसूस किया गया है कि यदि शिक्षक अपने काम की उपेक्षा करता है और अपने व्यवसाय में उसकी पूर्ण निष्ठा नही है तो वेतन और अन्य सुविधाओं में चाहे कितनी ही बढ़ोत्तरी क्यों न कर दी जाएं उसकी स्थिति ऊँची नहीं हो पाएगी। हाल ही में उच्चतर वेतनमान में न्यूनाधिक रूप से स्वतः पदोन्नति के जो उपाय किए गए हैं उनसे समाज में शिक्षकों की स्थिति में कुछ सुधार हुआ प्रतीत नही होता। जब तक "कैरीयर" विकास को वृत्तिक विकास से संबद्ध नही किया जाता, मात्र पदोन्नति योजनाएं न तो शिक्षक की सामाजिक स्थिति और न ही उसकी प्रभाविता को बढ़ा सकती है।

3.09 शिक्षको को मान्यता देने की अधिमान्य विधि

समाज के विभिन्न स्तरों के लोगों मे यह एक सामान्य भावना पाई जाती है कि एक शिक्षक को जितनी मान्यता मिलनी चाहिए वह उसे मिल नही रही है। यही एक बात कि अन्य व्यवसायों की तुलना में अध्यापन में बराबर की भौतिक सुविधाएं नहीं है इसका प्रमाण है कि आज समाज मे अध्यापक की अपेक्षाकृत अधिक उपेक्षा की जा रही है। इसके उपचारी उपाय क्या हों? इस संबंध में जिन बातों पर जोर दिया गया उन पर विश्वविद्यालयों और कालेजो के शिक्षकों में कुछ विचार-वैभिन्न्य रहा। विश्वविद्यालयों के दो तिहाई शिक्षकों ने तो यह महसूस किया कि नेहरू अध्येता वृत्ति अथवा राष्ट्रीय अध्येतावृत्ति जैसी सम्मानित-अध्येतावृत्तियां प्रदान करना ही सर्वाधिक सफल तरीका है जिससे शिक्षक की उत्कृष्टता को मान्यता दी जानी चाहिए, किंतु कालेजों के केवल 54 प्रतिशत शिक्षक ही इससे सहमत थे। इनके विचार में सर्व प्रमुख विकल्प यह था कि शिक्षकों के लिए "विशेष सुविधाओं और रियायतों" की व्यवस्था की जाए। यही विकल्प समग्र कोटिक्रम में पहले स्थान के उत्तरदाताओं में से 58 प्रतिशत से भी अधिक ने बेहतर माना। विश्वविद्यालय के शिक्षकों ने इसे निम्न अधिमान्यता दी और चार विकल्पो मे से इसे अंतिम कोटि में रखा। शिक्षकों को मान्यता देने के अन्य दो तरीके जैसाकि विश्वविद्यालय के शिक्षको के नमूने मे बताया गया है—ये थे कि शिक्षको को सरकारी और गैरसरकारी समितियों का सदस्य बनाया जाए और उन्हें नकद पुरस्कार दिए जाए। मान्यता के लिए नकद पुरस्कार के तरीके को अपेक्षाकृत निम्न कोटि में स्थान मिला।

भौतिक जीवन स्तर

शिक्षकों का भौतिक जीवन स्तर

इस अध्याय में हम शिक्षकों के भौतिक जीवन-स्तर की जाँच करेंगे । यह जाँच अन्य व्यवसायों की तुलना मे भी की जाएगी ।

प्रश्न के निम्नलिखित पक्ष प्रस्तुत किए जाएंगे, जो अधिकांशतया सर्वेक्षण-आंकड़ों पर आधारित हैं किंतु इनमें अन्य जानकारी भी जोड़ दी गई है ।

1. शिक्षकों की आय—सकल वेतन और अन्य संबद्ध मामले।
2. निवृत्ति-लाभ—भविष्य निधि, पेंशन आदि ।
3. सुविधाएं-आवास, चिकित्सा, बच्चों की शिक्षा, सवारी आदि ।
4. सम्पत्ति—स्टाक—टिकाऊ उपभोक्ता मदें यथा कार, स्कूटर, टी०वी०, वीडियो, टेलीफोन आदि ।
5. सेवा परिस्थितियां—छुट्टी यात्रा-सुविधाएं, वृत्तिक विकास के अवसर और निवृत्ति आयु, आदि ।
6. कार्य की परिस्थितियां—स्वाध्याय मे संबद्ध, प्रयोगशाला, पुस्तकालय, टेलीफोन और शोध कार्य की सुविधाएं ।

4.02 शिक्षकों का सकल वेतन

4.02.01 कालेज.—सकल वेतन (अर्थात् मूल वेतन और भत्ते) के अनुसार अध्यापकों के विभाजन से यह पाया गया है कि अधिकांश कालेज-अध्यापकों (62 प्रतिशत) का सकल वेतन 2000.00 रुपए प्रति माह से कम था । इस वर्ग में 20 प्रतिशत का वेतन 1000 रुपए से 1500 रुपए प्रतिमास और 3 प्रतिशत का 1000 रुपए प्रतिमास से कम था । एक चौथाई अध्यापकों का सकल वेतन 2000 से 2500 रुपए प्रतिमास के बीच था । 2500 रुपए से 3500 रु० प्रतिमास के बीच सकल वेतन पाने वाले अध्यापक केवल 3 प्रतिशत थे । 1000 रु० प्रतिमास से कम वेतन पाने वाले अध्यापकों की संख्या गैर-सरकारी असहायताप्राप्त कालेजों में अधिक थी । अन्य प्रकार के कालेजों में यह संख्या केवल 1 से 3 प्रतिशत के बीच थी ।

4.02.02 विश्वविद्यालय.—विश्वविद्यालयों के शिक्षकों का आय-वितरण कालेजों के शिक्षकों के आय वितरण से थोड़ा बेहतर था । विश्वविद्यालयों के लगभग 40 प्रतिशत शिक्षकों की आय 2000 रुपए प्रतिमास से कम थी । (इस वर्ग में लगभग 9 प्रतिशत का सकल 1000 रुपए और 1500 रु० के बीच तथा 1 प्रतिशत का 1000 रुपए प्रतिमास से कम था) दूसरे एक तिहाई शिक्षकों का मासिक वेतन 2000 रु० से 2500 रु० तथा एक चौथाई का 2500 रु० से 3500 रु० के बीच था । ब्यौरों के लिए सारणी 1 देखें ।

सारणी 1

नमूना शिक्षकों का सकल वेतन आय वर्गों के आधार पर विभाजन, कालेज और विश्वविद्यालय

आय वर्ग (रुपयों में)

	500 से कम	501—1000	1001—1500	1501—2000	2001—2500	2501—3500	कोई उत्तर नहीं ।	कुल
1	2	3	4	5	6	7	8	9
कालेज								
संवर्ग से								
लेक्चरार	0.35	2.31	24.79	40.37	24.03	02.85	04.73	5,130
रीडर	0.00	0.62	07.12	18.89	41.18	28.48	03.10	321
प्रोफेसर/प्रिंसिपल . . .	0.32	0.81	01.70	28.33	36.79	27.19	04.56	614
कुल . . .	0 60	2.76	21.31	37.50	25.80	06.60	04.76	6,246

सारणी 1—जारी

1	2	3	4	5	6	7	8	9
कालेज के प्रकार से								
सरकारी	0.16	1.38	20.11	35.96	29.95	08.51	3.30	1,868
गैर-सरकारी सहायता प्राप्त . .	0.03	3.00	22.02	39.89	39 89	04.30	05.31	5,750
गैर-सरकारी अ-सहायता प्राप्त .	0.00	15.14	23.86	22.94	18.35	10.55	09.17	218
संघटक	0.00	0.35	15.63	22.22	34.03	20.83	04.86	282
कुल	0.60	2.76	21.31	37.50	25.83	06.60	04.76	6,260
विश्वविद्यालय संवर्ग से								
लेक्चरार	0.44	0.44	14.50	47.47	30.32	02.87	03.14	1,147
रीडर	0.49	0.00	00.37	12.62	57 25	34.79	03.40	612
प्रोफेसर/प्रिंसिपल . . .	0.30	0.30	00.60	04.81	12.95	78.61	02.40	322
कुल	0.42	0.51	08.72	30.18	32.51	23.93	03.17	2,132

4.03 शिक्षकों के अनुभव-वर्ष और आय-स्तर

शिक्षकों के अनुभव वर्ष और उनके सकल वेतन आय के संबंध में आगे के आकड़ों से यह पता चलता है कि :

कालेजों के दस वर्ष तक के अध्यापन अनुभव वाले लगभग सभी अध्यापक (85–95 प्रतिशत) प्रतिमास 2000 रुपए से कम कमाते हैं। कालेजों के आधे से अधिक अध्यापक जिनके पास 15 वर्ष का अध्यापन अनुभव है इसी आय वर्ग में आते हैं।

विश्वविद्यालयों के शिक्षकों में, 5 वर्ष तक के अनुभव वाले लगभग सभी शिक्षक (86 प्रतिशत) और 10 वर्ष तक के अध्यापन अनुभव वाले आधे से भी अधिक शिक्षक (53 प्रतिशत) प्रतिमास 2000 रुपए से कम पाते हैं। (ब्यौरों के लिए सारणी 2 देखिए)।

सारणी 2

नमूना शिक्षकों का सकल वेतन आय वर्गों और अनुभव वर्षों के वर्गों के अनुसार विभाजन : विश्वविद्यालय और कालेज

आय वर्ग (रु० प्रतिमास)

अनुभव वर्ष	2000 से कम	2000—2500	2501—3500	कुल संख्या
1	2	3	4	5
कालेज				
1—5 .	95.00	4.36	1.24	1,443
6—10 .	85.39	18.39	2.73	1,172
11—15 .	56 59	36.82	6.61	1,195
16—20 .	42.08	47.02	3.36	851
21—25 .	23.42	54.97	21.36	422
26—30 .	14.79	52.07	33.13	169
कुल .	66.37	27.06	6.59	5,885

सारणी 2—जारी

1	2	3	4	5
विश्वविद्यालय				
1—5 .	85.81	12.05	2.12	423
6—10 .	53.29	14.37	5.37	394
11—15 .	29.24	49.07	21.72	359
16—20 .	19.03	41.17	37.79	289
21—25 .	8.66	34.89	56.54	237
26—30 .	6.97	21.71	71.31	129
कुल .	42.51	33.95	23.52	1,988

4.04 अन्य सेवाओं के अनुभव वर्ष और आय-स्तर

सारणी 3, 4 और 5 से यह स्पष्ट होता है कि शिक्षकों के विपरित भारतीय प्रशासन-सेवाओं, भारतीय वन सेवा और भारतीय पुलिस सेवा में लगे व्यक्तियों की आय सामान्यतया काफी अधिक है। यह भी, कि जैसे-जैसे उनका अनुभव बढ़ता जाता है उनका आय-स्तर कहीं अधिक तेजी से बढ़ जाता है। भारतीय प्रशासन सेवा के अधिकारी का सकल वेतन 2000 से 6000 रु० प्रति मास तक होता है। इनकी बहुत ही कम संख्या—यों कहिए कि 15–24 प्रतिशत निम्नतम आय वर्ग अर्थात् रु० 2000—2800 में है, इसकी तुलना में उन शिक्षकों की संख्या जो रु० 2000 से भी कम वेतन पाते हैं, कालेजों में 66 प्रतिशत और विश्वविद्यालयों में 42

प्रतिशत थी। यह भी स्पष्ट है कि भारतीय प्रशासन सेवा, भारतीय वन सेवा और भारतीय पुलिस सेवा में 20-25 वर्षों के अनुभव वाला कोई एक व्यक्ति भी निम्नतम आय वर्ग में नहीं था, उनके सकल वेतन में उनके अनुभव के साथ-साथ बढ़ोतरी होती गई, जबकि कालेजों के शिक्षकों का लगभग 38 प्रतिशत और विश्वविद्यालयों के शिक्षकों का 15 प्रतिशत बीस से भी अधिक वर्षों के अनुभव के बावजूद निम्नतम सकल वेतन वर्ग में रहा। इससे यह संकेत मिलता है कि शिक्षकों के वेतन में काफी गतिरोध है।

सारणी 3

भारतीय प्रशासन सेवा के 279 कर्मचारियों का आ० प्र० में अनुभव वर्षों और सकल वेतन आय वर्गों के आधार पर विभाजन

(आंकड़े प्रतिशत में)

अनुभव के वर्ष	सकल वेतन आय वर्ग (रुपए प्रतिमास)						कुल सं०
	2200—2800	2850—3100	3200—3550	3600—4800	4850—5500	5500—6000	
1	2	3	4	5	6	7	8
1—5 . .	66.66	17.16	27.71	12.70	..	1.59	63
6—10. .	2.50	53.75	42.50	..	1.25	..	80
11—15. .	..	17.50	55.00	25.00	2.50	..	40
16—20. .	..	..	2.63	5.26	92.10	..	38
21—25. .	..	..	4.54	4.54	90.90	..	22
26—30. .	..	..	..	..	92.86	7.14	28
31—35. .	..	..	..	..	25.00	75.00	8
कुल सं० . .	44	61.00	66.00	14.00	85.00	9.00	279
प्रतिशत . .	15.77	21.86	23.66	5.02	30.46	3.52	100.00

†भारतीय प्रशासन सेवा।

स्रोत : भारत सरकार सिविल सूची, 1984

सारणी 4

भारतीय पुलिस सेवा के 104 कर्मचारियों का आंध्र प्रदेश में अनुभव के वर्षों और सकल वेतन आय वर्गों के आधार पर विभाजन

(आंकड़े प्रतिशत है)

अनुभव के वर्ष	सकल वेतन आय-वर्ग (रु० प्रति मास)						कुल सं०
	2200—2800	2800—3100	3200—3550	3600—4800	4850—5500	5500—6000	
1	2	3	4	5	6	7	8
1—5 . .	88.23	11.76	..	..	..	..	17
6—10. .	40.90	45.45	13.64	..	..	..	22
11—15. .	8.33	91.67	..	..	..	..	12
16—20. .	..	..	73.68	26.31	..	..	19
21—25. .	..	..	..	80.95	19.05	..	21
26—30. .	..	..	..	66.66	33.33	..	9
31—35. .	..	..	..	..	75.00	25.00	4
कुल सं० . .	25.00	23.00	17.00	28.00	10.00	1.00	104
प्रतिशत . .	24.03	22.11	16.35	26.02	9.62	0.96	100.00

भारतीय पुलिस सेवा

स्रोत : भारत सरकार, सिविल सूची, 1984.

सारणी 5

***भारतीय वन सेवा के 70 कर्मचारियों का आंध्र प्रवेश में अनुभव के वर्षों और सकल वेतन आय-वर्गों के आधार पर विभाजन**

(आंकड़े प्रतिशत में)

अनुभव के वर्ष	सकल वेतन आय वर्ग (रु० प्रति माह) 2200—2800	2800—3100	3200—3550	3600—3800	1550—5500	5500—6000	कुल संख्या
1	2	3	4	5	6	7	8
1—5 . .	40.74	59.26	..	..	..	..	27
6—10. .	..	50.00	50.00	..	..	..	2
11—15. .	..	..	100.00	..	..	..	18
16—20.	..	..	64.70	35.29	..	..	17
21—25. .	..	..	..	80.00	20.00	..	5
26—30. .	..	..	..	..	100.00	..	1
31—35. .	..	..	..	..	..	..	..
कुल सं० . .	11.00	17.00	30.00	10.00	2.00	..	74
प्रतिशत . .	15.71	24.28	42.86	14.28	2.86	..	100.00

*भारतीय वन सेवा

स्रोत : भारत सरकार, सिविल सूची, 1984 ।

4.05 आय के निम्न स्तर और वेतनवृद्धि गतिरोध के लिए उत्तरदायी कारक

शिक्षकों के अपेक्षाकृत निम्न आय स्तर, और अध्यापन वृत्ति में, अनुभव के वर्षों की वृद्धि के साथ आय में लगभग नगण्य बढ़ोत्तरी के लिए अनेक कारक उत्तरदायी हैं। इनमें से महत्वपूर्ण निम्नलिखित हैं :

(क) संवर्ग संरचना,

(ख) वेतनमानो मे अन्तर्भूत गतिरोध,

(ग) वेतनमानो को लागू न किया जाना ।

4.05.01 **संवर्ग संरचना**.—*शिक्षण व्यवसाय* की संवर्ग संरचना पिरामिड की तरह है, यहां बहुत बड़ी संख्या लेक्चररो की है, कुछेक रीडर और बहुत ही कम प्रोफेसर हैं। भारतीय प्रशासन सेवा, भारतीय पुलिस सेवा और भारतीय वन सेवा में यह संवर्ग संरचना उलटे पिरामिड जैसी है। वहां उच्चतर वेतनमानों में अधिक स्थान है और निम्न वेतनमानों में अपेक्षाकृत कम। भारतीय प्रशासन सेवा के 3023 कर्मचारियों में से (जैसा कि सिविल सूची, 1984 में दिखाया गया है) 87 प्रतिशत उच्च वेतनमानों और केवल 13 प्रतिशत निम्न वेतनमानों में है। इसका अनुपात उच्चतर वेतनमान के 6 स्थानों के पीछे निम्न वेतनमान का एक स्थान है। इसके विपरित, कालेजों में यह अनुपात 8:1 है अर्थात् लेक्चरर के 8 स्थान और वरिष्ठ अध्यापक का एक स्थान। इसी प्रकार विश्वविद्यालयों में संवर्ग का अनुपात 6:2:1 आता है अर्थात् रीडर के दो स्थान और प्रोफ़ेसर के एक स्थान के पीछे लेक्चरर के छः स्थान है। इस संवर्ग संरचना के कारण अध्यापन-वृत्ति में बहुत सारे व्यक्तियों की आय में लम्बी अवधि तक गतिरोध आ जाता है और वे एक ही आय-स्तर पर पड़े रहते हैं।

4.05.02 **वेतनमानों में अन्तर्भूत गतिरोध**.—शिक्षण व्यवसाय के व्यक्तियो के वेतनमानो की समयावधि इस प्रकार है:

पद	वेतनमान 1974/83	समयावधि † (वर्षों में)
1. लेक्चरर	रु० 700-40-1000-50-1600	19
2. रीडर	रु० 1200-50-1300-60-1900	12
3. प्रोफेसर/ प्रिंसिपल	रु० 1500-60-1800-100-2000-125-(द्विवार्षिक)-2500	15

†वेतनमान के अधिकतम तक पहुंचने की अवधि।

(i) वेतनमानो की उपर्युक्त योजना के अन्तर्गत, यदि कोई व्यक्ति इस व्यवसाय मे 25 वर्ष की आयु में लेक्चरर बनकर आता है तो वह 19 वर्ष में वेतनमान के अधिकतम तक पहुंच जाएगा और इसके बाद उसे कोई वेतनवृद्धि नही मिलेगी। चूंकि सेवा की अवधि सामान्यतया 35 वर्ष होती है इसलिए ऐसे व्यक्ति को अपने सेवाकाल के शेष 16 वर्षों मे कोई वेतनवृद्धि नही मिलेगी।

(ii) इसी प्रकार, यदि कोई व्यक्ति लेक्चरर के पद पर आठ वर्षों के अनुभव के बाद रीडर के संवर्ग में, अर्थात् लगभग 33 वर्षों की आयु में आता है तो 45 वर्ष की आयु के बाद उसकी वेतनवृद्धि रुक जाएगी। इस तरह वह (पुरूष अथवा महिला) अपने सेवाकाल के शेष 16 वर्षों में एक ही आय स्तर पर पड़ा रहेगा। कुछ अंशों तक यही स्थिति प्रोफेसर के संवर्ग मे भी है। यदि कोई व्यक्ति 40 वर्ष की आयु में, 15 वर्षों के अनुभव के बाद प्रोफेसर के पद पर आता है तो वह अपने सेवाकाल के अंतिम 5 वर्षों के दौरान शिक्षण-व्यवसाय में अपने योगदान के बदले कोई वेतनवृद्धि नहीं पाएगा।

(iii) अत: शिक्षण व्यवसाय में प्रत्येक संवर्ग के कार्य-चक्र मे किसी न किसी बिंदु के बाद व्याप्त गतिरोध की स्थिति में आ जाता है। गतिरोध का समय लेक्चररों के मामले में अधिक है। चूकि उच्च शिक्षा की प्रणाली पिरामिडी है, लेक्चरर के पद अधिक हैं, रीडर के कम और प्रोफेसर के बिल्कुल ही कम। इसलिए बहुत बड़ी संख्या मे शिक्षक चाहे वे शैक्षिक रूप में अच्छे, साधारण या उदासिन ही हो, अपने कार्यकाल में काफी समय तक गतिरोध की स्थिति मे रहते है।

उच्च शिक्षा के शिक्षकों और भारतीय प्रशासन सेवाओ, वित्तीय प्रशासन यथा बैंकों और जीवन बीमा निगम मे नियुक्त व्यक्तियों के वेतनमानों की तुलना से यह प्रदर्शित होता है कि इन व्यवसायों में नए-नए आने वालों के वेतनमान तो एकसमान हैं किन्तु शिक्षण व्यवसाय मे उच्चतर संवर्ग का वेतनमान भारतीय प्रशासन सेवा, जीवन बीमा निगम और बैंकों में काम कर रहे व्यक्तियो के वेतनमानों की तुलना मे निम्न हैं। यह निम्नलिखित सारणी से स्पष्ट हैं।

सारणी 6

विभिन्न व्यवसायों के व्यक्तियों का वेतनमान

ग्रोहदा	भारतीय प्रशासन सेवा	भारतीय पुलिस सेवा	भारतीय वन सेवा	जीवन बीमा निगम	बैंकिंग	अध्यापन
वेतनमान						
1.	700—1300	700—1300	700—1300	700—1300	700—1800	700—1600
2.	1200—2000	1200—1700	1200—2000	1000—1675	1200—2000	1200—1900
3.	2000—2200	2000—2200	2000—3000	1250—2000	1800—2250	1500—2500
4.	2500—3500	2500—2700	3000(नियत)	1600—2250	2000—2400	..
5.	3500	3000(नियत)	..	2000—2500	2500—3000	..
6.	..	..	..	2500—3000	3000—3250	..
7.	..	..	..	3250(नियत)	3250—3500	..
8.	..	..	..	..	3500(नियत)	..

4.05.03 **संशोधित वेतनमानों को लागू न करना.**—अध्ययन से यह भी पता चला कि संशोधित वेतनमान (1973) सभी संस्थाओं में पूरे तौर पर लागू नहीं किए गए हैं :

(क) लगभग 8 प्रतिशत शिक्षकों को मानक वेतनमानों के आधार पर वेतन नहीं दिया गया। रु० 700–1600, रु० 700–1300 और रु० 700–1100 से कम वेतन पाने वाले लेक्चररो का अनुपात क्रमश: 4, 3 और 1 प्रतिशत था। मानक वेतन से कम वेतन पा रहे लेक्चररों का अनुपात (16 प्रतिशत) छोटे शहरो के कालेजो मे अधिक था। इसी प्रकार, गैर-सरकारी असहायताप्राप्त कालेजों के 13 प्रतिशत लेक्चररों को मानक वेतनमानों से कम वेतन दिया जा रहा था।

(ख) राज्यों में, केरल में कालेजो के लगभग एक-तिहाई (33 प्रतिशत) लेक्चररों को मानक वेतनमानों से कम वेतन दिया गया। बिहार, मध्यप्रदेश और आंध्र प्रदेश मे 11 से 12 प्रतिशत के बीच कालेज लेक्चररों को मानक वेतनमानों से कम वेतन दिया गया।

(ग) कालेजो में मानक वेतनमानो से कम वेतन पा रहे रीडरों और प्रिंसिपलों का अनुपात बहुत कम था, यह 2 से 4 प्रतिशत के बीच था।

(घ) मानक वेतनमानो से कम वेतन पा रहे अध्यापकों का अनुपात विश्वविद्यालयो मे कही कम था। मानक वेतनमान से कम वेतन पाने वाले लेक्चररों, रीडरों और प्रोफेसरों का अनुपात केवल 1-2 प्रतिशत के आसपास था। उपर्युक्त से यह स्पष्ट है कि समस्या की व्यापकता गैर-सरकारी असहायताप्राप्त कालेजों और केरल, बिहार, आंध्र प्रदेश और मध्य प्रदेश के कालेजों मे केंद्रित होती जा रही प्रतीत होती है।

(ङ) इसके कई कारण हो सकते हैं यथा तदर्थ पदों का सृजन, कम अर्हता वाले स्टाफ की नियुक्ति, राज्य सरकार द्वारा पदों के अनुमोदन में विलम्ब आदि। इस स्थिति को सुधारना आवश्यक है क्योंकि इससे शिक्षको के अभिप्रेरण और इस तरह उच्च शिक्षा में अध्यापन-अधिगम प्रक्रिया की गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

4.06 वेतनमानों और सकल वेतन आयों के वास्तविक मूल्य में ह्रास

यद्यपि मुद्रास्फीति का नियत आय वर्गो के सभी व्यक्तियो पर गंभीर प्रभाव पड़ा है, तथापि निम्नतर आय वर्गो वाले व्यक्तियों पर जिनको आवास की सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं, इसका प्रभाव और भी गंभीर है। मुद्रास्फीति का उच्चतर आय वर्गो की बचतों और विलास वस्तुओं के उपभोग पर विपरीत प्रभाव पड़ता है किंतु वे लोग जो निम्न आय वर्गों में हैं, जीवन की

आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति कर पाने में भी कठिनाई महसूस करते हैं। यह कठिनाई तब और बढ़ जाती है जब वेतन का एक बड़ा हिस्सा मकान का किराया देने मे चला जाता है। आय के वास्तविक मूल्य में जो कमी हुई है उसके आंकड़ो से यह पता चलता है कि शिक्षकों के मूल वेतन के वास्तविक मूल्य मे दस वर्षों की अवधि मे, 1973-74 की तुलना मे 100 से लेकर 400 रुपए तक की कमी हो गई है। इसी तरह शिक्षकों के सकल वेतन जिसमें महंगाई भत्ता, अतिरिक्त महंगाई भत्ता, नगर प्रतिकर भत्ता और गृह किराया भत्ता भी शामिल होते है— मे सामान्यतया 300 से 800 रु० तक की और प्रोफेसरों के मामले मे 1000 रुपए तक की कमी हुई है। नीचे की सारणियों से यह स्पष्ट हो जाता है :—

सारणी 7

1983-84 की स्थिति के अनुसार वास्तविक मूल्य

(आधार 1973-74)

	1973-74 का वेतनमान	स्थिर कीमतों पर वेतनमानों का वास्तविक मूल्य		1973 के संशोधनों से पहले के वेतनमान	
		न्यूनतम	अधिकतम	न्यूनतम	अधिकतम
	रू०	रू०	रू०	रू०	
1. लेक्चरर	700—1,600	327	718	400	900
2. रीडर/प्रिंसिपल . . .	1,200—1,900	561	887	700	1,250
3. प्रोफेसर/प्रिंसिपल . . .	1,500—2,500	701	1,168	1,150	1,500

सारणी 8

उच्च शिक्षा में शिक्षकों का सकल वेतन

	चालू कीमतें				स्थिर कीमतों के अनुसार 1983 का वास्तविक मूल्य 1973-74	
	1973		1983			
	न्यूनतम मूल वेतन पर (क).	अधिकतम मूल वेतन पर (ख)	न्यूनतम मूल वेतन पर (क)	अधिकतम मूल वेतन पर (ख)	न्यूनतम मूल वेतन पर (क)	अधिकतम मूल वेतन पर (ख)
लेक्चरर	1,096	2,218	1,667	3,020	779	1,412
रीडर	1,765	2,563	2,507	3,440	1,173	1,660
प्रोफेसर	2,178	2,875	3,132	4,675	1,344	2,137

4.07 यूनेस्को—अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की सिफारिशें

इस संबंध में आयोग ने उन सिफारिशों की ओर भी ध्यान दिया जो "शिक्षकों की स्थिति" पर यूनेस्को—अ०श्र०सं० की रिपोर्ट (1967) में की गई थीं। रिपोर्ट में शिक्षकों के वेतन के विषय में कहा गया है :

(क) इन वेतनों से यह परिलक्षित होना चाहिए कि समाज में अध्यापन कार्य को कितना अधिक महत्व दिया जाता है। इससे शिक्षकों का महत्व और वे सभी प्रकार के उत्तरदायित्व भी सामने आएंगे जो उन पर उनके सेवा में आने के समय से ही आ जाते हैं।

(ख) वे वेतन उन व्यवसायों के वेतनमानों के समकक्ष होने चाहिए जिनके लिए एक जैसी अथवा बराबर की अर्हताएं अपेक्षित होती हैं।

(ग) इनसे शिक्षकों को वे सभी साधन उपलब्ध होने चाहिए जिससे वे अपने और अपने परिवार वालों का समुचित जीवन-स्तर बनाए रख सकें या अपनी वृत्तिक योग्यताओं को बढ़ाने के लिए और आगे अध्ययन कर सकें या फिर सांस्कृतिक क्रियाकलापों में बराबर सहयोग दे सकें।

(घ) इनमें यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि कुछ पदों के लिए अपेक्षाकृत उच्च योग्यताओं और अनुभव की आवश्यकता होती है और उनके दायित्व भी अधिक होते हैं।

4.08 नकद या अन्य प्रकार के लाभ और सुविधाएं

भौतिक जीवन-स्तर को प्रभावित करने वाला एक अन्य तथ्य आवास, चिकित्सा देखभाल, बच्चों की शिक्षा और सवारी

जैसी सुविधाएं या इन के बदले नकद या अन्य रूप में दी जाने वाली सुविधाए है ।

4.08.01 आवास.—भौतिक जीवन-स्तर को निश्चित करने वाले सभी कारकों मे सबसे महत्वपूर्ण कारक आवास है, विशेषतया शिक्षको के लिए क्योंकि उन्हें घर पर पढ़ना पड़ता है और अपने लेक्चर तथा सेमिनारों के लिए शोधपत्र तैयार करने होते है। यदि अधिसंख्य शिक्षको को शिक्षा-संस्था में ही आवास उपलब्ध नही है तो उन्हें प्राइवेट मकानो मे रहना पड़ता है जिनके किराए आकाश को छू रहे हैं। उन पर कई प्रकार के ऐसे बोझ और तनाव आ जाते है जो मकान-मालिक और किराएदार के संबंधो मे व्याप्त रहते है। यदि शिक्षकों से यह प्रत्याशा की जाती है कि सलाह-मशविरे और अन्य कार्यों के लिए छात्र और संस्थाए उनसे जब चाहें सम्पर्क कर सकें तो यह आवश्यक है कि जहा तक संभव हो शिक्षकों को परिसर मे ही या परिसर के नजदीक ही आवास की सुविधाएं दी जाएं ।

(क) कालेज

कालेजों के शिक्षकों के लिए जो आवास सुविधाए विद्यमान हैं उनसे बड़ी निराशाजनक स्थिति सामने आती है। कालेजों के लगभग 84 प्रतिशत शिक्षको को अपनी-अपनी सस्थाओ द्वारा आवास की सुविधाए नही दी गई है। छोटे शहरो और महानगरो मे भी स्थिति इतनी ही विकट है, यहा क्रमशः 97 और 85 प्रतिशत शिक्षको के लिए आवास की व्यवस्था नही है। व्यावसायिक कालेजो यथा इंजीनियरी, आयुर्विज्ञान, कृषि और पशु चिकित्सा के कालेजो में स्थिति थोड़ी बेहतर है। इन कालेजो मे आधे शिक्षकों को आवास सुविधाए मिली हुई हैं ।

(ख) विश्वविद्यालय

विश्वविद्यालयों के शिक्षकों के लिए कुल मिलाकर स्थिति कालेजों के शिक्षकों की स्थिति से कुछ अच्छी है। यहां लगभग 39 प्रतिशत शिक्षको को आवास सुविधाएं प्राप्त हैं। किंतु इस विवरण से वे विभिन्नताएं सामने नहीं आई है जो सामान्य शिक्षा और व्यावसायिक विश्वविद्यालयों मे पाई जाती हैं। विश्वविद्यालय के शिक्षको के लिए आवास सुविधाओं की व्यवस्था अलग-अलग विश्वविद्यालयों मे अलग-अलग है। कुछ विश्वविद्यालयो ने अपने आधे से भी अधिक स्टाफ के लिए आवास-व्यवस्था कर दी है जबकि अन्य अपने 10 प्रतिशत शिक्षकों के लिए भी यह व्यवस्था नहीं कर पाए हैं। मद्रास, बम्बई, हैदराबाद, अहमदाबाद, दिल्ली जैसे महानगरों में स्थित विश्वविद्यालयों तथा उत्तर-पूर्वी पर्वतीय विश्वविद्यालय (एन० ई० एच० यू०), मणिपुर विश्वविद्यालय तथा जादवपुर विश्वविद्यालय जैसे नए विश्वविद्यालयों में काम कर रहे शिक्षक, छोटे शहरों मे स्थित विश्वविद्यालयों तथा अपेक्षाकृत पुराने विश्वविद्यालयों मे काम कर रहे शिक्षकों की तुलना में अनुकूल स्थिति में हैं। प्रथम वर्ग मे उन शिक्षकों का अनुपात जिनके पास आवास सुविधाएं नही है 70 और 98 प्रतिशत के बीच था जबकि दूसरे वर्ग मे, आवास सुविधा प्राप्त शिक्षको की सख्या 40 और 50 प्रतिशत के बीच थी।

(i) आवास सुविधा के बदले आवास किराया भत्ता

(क) शिक्षकों को आवास के बदले किराया भत्ता देने की व्यवस्था है। इस सुविधा के बदले दिया जाने वाला भत्ता अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग है। विभिन्न श्रेणियों के नगरो मे दिया जाने वाला मानक मकान किराया भत्ता (केंद्रीय सरकार की दरें) इस प्रकार है: नगर ए—मूल वेतन का 15 प्रतिशत; नगर बी—मूल वेतन का 10 प्रतिशत; नगर सी—मूल वेतन का 8 प्रतिशत।

(ख) कर्मचारी को अपने मूल वेतन का 10 प्रतिशत आवास-सुविधा के अंशदान रूप में देना होता है। नियोक्ता की ओर से कर्मचारियों को दिए जाने वाले आवास भत्ते की कुल राशि ए श्रेणी के नगरो में लेक्चरारों के लिए न्यूनतम मूल वेतन पर 175 रु० और प्रोफेसर के लिए न्यूनतम मूल वेतन पर 425 रु० तक है। इनकी अनुरूपी ऊपर की सीमाएं 400 रु० से 625 रु० प्रतिमास हैं। 1973 की स्थिर कीमतों के आधार पर इस राशि का वास्तविक मूल्य न्यूनतम मूल वेतन पर 81 रु० से 180 रु० और अधिकतम मूल वेतन पर 186 रुपए से 222 रुपए रह गया है।

(ग) मकान किराया भत्ता चूंकि मूल वेतन के आधार पर निश्चित होता है और पिछले एक दशक से मूल वेतनों का पुनरीक्षण नहीं किया गया है, इसलिए इस भत्ते का वास्तविक मूल्य बहुत कम रह गया है। अतएव, एक ओर तो, शिक्षको को दिए जाने वाले भत्ते का वास्तविक मूल्य 1973-74 की तुलना मे गिर गया है और दूसरी ओर, समय के साथ-साथ मकानो का किराया भी अन्य वस्तुओं की कीमतो की अपेक्षा कही अधिक बढ़ गया है।

(घ) हमारे पास जो आंकड़े है उनसे यह भी पता चलता है कि यह भत्ता भी कालेजो के 41 प्रतिशत शिक्षकों और विश्वविद्यालयो के 19 प्रतिशत शिक्षकों को नहीं दिया जा रहा है।

(ii) शिक्षकों द्वारा दिया गया वास्तविक किराया

शिक्षकों द्वारा दिए जा रहे वास्तविक किराए के विषय में उन्होंने जो तथ्य प्रस्तुत किए हैं उनसे यह पता चला कि जो शिक्षक प्राइवेट मकानों मे रह रहे हैं उनमें से विश्वविद्यालयों के 45 प्रतिशत शिक्षक और कालेजों के 28 प्रतिशत शिक्षक अपने वेतन का 21 से 40 प्रतिशत मकान के किराए के रूप में दे देते हैं। विश्वविद्यालयों और कालेजो के अन्य 36 और 40 प्रतिशत अपने मूल वेतन का क्रमश: 11 और 20 प्रतिशत मकान किराए के लिए दे देते हैं। इसी तरह विश्वविद्यालयों के 3 प्रतिशत और कालेजों के 2 प्रतिशत शिक्षक भी अपने वेतन का 40 प्रतिशत मकान किराए के लिए देते हैं।

(iii) रिहायशी स्थितियां

(क) अधिसंख्या शिक्षकों को चूंकि संस्थाओ द्वारा आवास नही मिले हुए है और चूंकि उन्हे जो मकान किराया भत्ता मिलता है वह किराए का मकान लेने के लिए बहुत ही अपर्याप्त है इसलिए स्थिति यह है कि शिक्षक या तो घटिया घरों में या दूर-दूर की बस्तियो में रहते हैं । शिक्षको की रिहायश स्थितियो संबंधी आंकड़ों से यह पता चलता है कि विश्वविद्यालयो के 10 प्रतिशत शिक्षको को अलग से स्नानागार और शौचालय की सुविधाए प्राप्त नही है । इनका प्रयोग वे साझे रूप मे अन्य परिवारों के साथ करते हैं। ऐसे शिक्षको में से 3 प्रतिशत प्रोफेसर है, 6 प्रतिशत रीडर और 14 प्रतिशत लेक्चरर हैं । कालेज के 17 प्रतिशत शिक्षक स्नानागार और शौचालय का अन्य परिवारों के साथ सांझा प्रयोग करते है । विश्वविद्यालय के 11 प्रतिशत शिक्षकों. के आवासों में व्यक्ति और स्थान का अनुपात क्रमशः 3 : 1 और दूसरे 34 प्रतिशत शिक्षकों के आवासों में यह अनुपात 2 : 1 है । कालेजो के 13 प्रतिशत शिक्षकों के आवासो मे व्यक्ति और स्थान का अनुपात क्रमशः 3 : 1 तथा 33 प्रतिशत शिक्षकों के आवासों मे 2 : 1 है । विश्वविद्यालय और कालेजों के क्रमशः 4 और 5 प्रतिशत शिक्षक चार व्यक्ति प्रति कमरा वाले आवासो में रहते है ।

(ख) लेक्चर तैयार करने, पढ़ने लिखने या शोध कार्य के लिए शिक्षकों को अपने आवास या अपने संस्थान मे अलग स्थान चाहिए जहां वे निर्विघ्न अपना काम कर सकें । किंतु कालेजो के 75 प्रतिशत और विश्व-विद्यालयों के 34 प्रतिशत शिक्षकों को अपने कार्य-स्थान पर अलग कमरे/कैबिन की सुविधा नहीं है । विश्वविद्यालयों और कालेजों के लगभग 55 प्रतिशत शिक्षकों के पास भी अपने घरों में पढ़ाई के लिए कोई अलग कमरा नही है । अतएव, आधे से भी अधिक शिक्षकों के पास अपने घरों अथवा अपने कार्य-स्थानों पर कोई ऐसा स्थान नहीं है जहां वे अपनी पढ़ाई-लिखाई कर सकें । महिला शिक्षकों और अकेले रहने वाले पुरुष शिक्षको के लिए स्थिति और भी खराब है ।

4.08.02 अपना मकान

(क) व्यक्ति के लिए आवास सुविधा केवल उसके सेवाकाल के लिए ही नहीं अपितु उसके सेवानिवृत्त होने के बाद भी आवश्यक है । शिक्षकों द्वारा प्रदत्त आंकड़ों के विश्लेषण से यह प्रदर्शित होता है कि शिक्षक सामान्यतया धनी वर्गों के नही होते । लगभग 60 प्रतिशत शिक्षकों का अपना कोई आवास नही है । विश्वविद्यालय के शिक्षकों में 69 प्रतिशत लेक्चरार, 56 प्रतिशत रीडर और 35 प्रतिशत प्रोफेसरो के अपने मकान नहीं हैं ।

(ख) अपना मकान बनाने को प्रोत्साहन देने के लिए सरकार ने आवास-सहकारी समितियां बनाने और ऋण देने आदि की कई योजनाएं प्रारम्भ की हैं किंतु ऐसा प्रतीत होता है कि इन योजनाओं से शिक्षकों को पर्याप्त लाभ नही पहुंचा है । शिक्षकों द्वारा उपलब्ध कराए गए तथ्यों से यह सामने आया है कि विश्वविद्यालयो के 62 प्रतिशत शिक्षकों और कालेजों के 73 प्रतिशत शिक्षकों को अपनी अपनी संस्थाओं से गृह निर्माण ऋण नहीं मिलता । कालेजों के जो अध्यापक मकान बना पाए है उनका अनुपात केवल 13 प्रतिशत है । विश्वविद्यालय के शिक्षको मे केवल 9 प्रतिशत ने अपने मकान बना लिए हैं । जिन शिक्षकों ने मकान बना लिए उनमें से केवल एक प्रतिशत ने ही, उन सहकारी समितियो के माध्यम से निर्माण कार्य करवाया जो केवल अध्यापकों के लिए ही बनाई गई थीं ।

(ग) हमारे देश मे, द्रुत शहरी करण, न्यूक्लीय परिवार-व्यवस्था के बढ़ते प्रचलन और गृह निर्माण मे पूजी निवेश के अभाव के कारण आवासों की सामान्यता कमी है । हुडको (HUDCO) जैसी वित्तीय संस्थाओ की स्थापना एव गृह निर्माण सहकारी समितियों को बढ़ावा देकर इस समस्या को सुलझाने के प्रयास किए गए है । इन सुविधाओ से शिक्षकों को लाभ नही पहुंचा है, इसका कारण केवल प्रारंभिक पूंजी का अभाव नहीं बल्कि शिक्षकों को अपनी अपनी संस्थाओं से ऋण-सुविधाएं न मिल पाना भी है । इनके अभाव मे, गृह निर्माण सहकारी समितियों के प्रोत्साहन तथा वित्तीय-सस्थाओं द्वारा पूंजी निवेश के संवर्धन की सभी योजनाओ से केवल उन्ही लोगों को सहायता मिली है जो गृह निर्माण-सहकारी योज-नाओं के अधीन प्रारम्भिक पूजी निवेश कर सकते थे । अत: गृह निर्माण में पूजी-निवेश को बढ़ावा देने और लोगों को अपने लिए मकान लेने में सहायता देने के परम्परागत तरीके से अध्यापकों को कोई सहायता नही मिल पाती क्योंकि वे प्रारम्भिक पूंजी की व्यवस्था नही कर पाते । शिक्षकों को अपना मकान लेने हेतु प्रोत्साहन देने के लिए गृह निर्माण निवेश की योजनाओं को नए सिरे से बनाने की आवश्यकता है ।

4.08.03 चिकित्सा सुविधाएं

(क) भौतिक जीवन का एक अन्य महत्वपूर्ण पक्ष शिक्षकों और उनके परिवारों के लिए चिकित्सा की सुविधाओं की व्यवस्था है । सरकार और गैर-सरकारी क्षेत्रक तो अपने कर्मचारियों और उनके परिवारों के लिए

नि:शुल्क चिकित्सा-देखभाल की व्यवस्था करते हैं किन्तु उच्च शिक्षा के शिक्षक इस क्षेत्र में भी अनुकूल स्थिति में नहीं हैं। नमूना शिक्षको ने जो तथ्य प्रस्तुत किए उनसे यह पता चलता है कि 60 प्रतिशत अध्यापको को कोई चिकित्सा सहायता या किसी प्रकार का भत्ता नहीं दिया जाता। गैर सरकारी सहायता प्राप्त कालेजों के काफी बड़े अनुपात (75 प्रतिशत) को कोई चिकित्सा सहायता या भत्ता नहीं दिया जाता। इस प्रकार 85 छोटे शहरों के कालेजों मे पढ़ाने वाले अध्यापको मे से 85 प्रतिशत अध्यापकों को कोई चिकित्सा सहायता या भत्ता नहीं मिलता।

(ख) विश्वविद्यालयों के शिक्षकों की स्थिति कुछ बेहतर है। विश्वविद्यालयों के 71 प्रतिशत शिक्षकों को कुछ न कुछ चिकित्सा सहायता, अथवा भत्ता प्रतिपूर्ति दी जाती है। विश्वविद्यालयो के शिक्षकों मे, उस्मानिया विश्वविद्यालय के 74 प्रतिशत और पूना विश्वविद्यालय के 81 प्रतिशत शिक्षकों को किसी प्रकार की चिकित्सा सहायक या भत्ता नही दिया जाता। एस एन डी टी विश्वविद्यालय ने अपने शिक्षकों को यह सुविधा दी हुई है। ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ विश्वविद्यालय अपने शिक्षकों को किसी प्रकार की चिकित्सा सहायता या भत्ते नहीं देते और चिकित्सा व्यय की प्रतिपूर्ति भी नही करते। अन्य विश्वविद्यालयो मे चिकित्सा व्यय की प्रतिपूर्ति की व्यवस्था विद्यमान है।

(i) **चिकित्सा देखभाल पर व्यय**

(क) कालेजों के लगभग 40 प्रतिशत शिक्षक चिकित्सा देखभाल पर 100 रु० से 200 रु० प्रतिवर्ष, 21 प्रतिशत 500 रु० प्रतिवर्ष, 9 से 10 प्रतिशत 500 रु० से 1000 रु० या इससे अधिक व्यय करते हैं। किंतु सभी को इस व्यय की प्रतिपूर्ति नहीं की जाती। कालेजों के लगभग 40 प्रतिशत शिक्षक अपनी चिकित्सा देखभाल का पूरा खर्चा स्वयं वहन करते हैं। 11 प्रतिशत इस खर्च का 80 प्रतिशत स्वयं वहन करते है। 60 प्रतिशत से 40 प्रतिशत चिकित्सा व्यय को स्वयं वहन करने वाले शिक्षक क्रमश: 6 से 17 प्रतिशत है। एक तिहाई शिक्षक अपने चिकित्सा व्यय का 20 प्रतिशत स्वयं वहन करते हैं।

(ख) विश्वविद्यालयों के शिक्षको की स्थिति भी कोई अधिक भिन्न नहीं है। यहा के 40 प्रतिशत शिक्षक चिकित्सा देखभाल पर 100 से 200 रु० प्रतिवर्ष खर्च करते हैं। लगभग 20 प्रतिशत अध्यापक 201 रुपए से 500 रुपए प्रतिवर्ष व्यय करते हैं। 501 से 1000 रु० या इससे अधिक खर्च करने वाले शिक्षकों की संख्या क्रमशः 17 प्रतिशत और 10 प्रतिशत है। कालेजों के शिक्षको की तरह, विश्वविद्यालयों के सभी शिक्षकों को चिकित्सा व्ययों की पूरी प्रतिपूर्ति नहीं की जाती। विश्वविद्यालयों मे 37 प्रतिशत अध्यापक अपने चिकित्सा-व्यय का 100 प्रतिशत स्वयं वहन करते है, 8 प्रतिशत शिक्षक 80 से 60 प्रतिशत और 5 प्रतिशत शिक्षक 40 प्रतिशत व्यय स्वयं वहन करते हैं, 35 प्रतिशत अध्यापक ऐसे है जो 20 प्रतिशत तक व्यय स्वयं उठाते हैं।

(ग) अतएव, विश्वविद्यालयों के अधिकांश शिक्षको को चिकित्सा सहायता या भत्ता दिया जाता है किंतु कुछ विश्वविद्यालय ऐसे हैं जिनमें अध्यापकों के लिए चिकित्सा सुविधाओं की कोई व्यवस्था नहीं की गई है। जिन अध्यापकों को यह सुविधा उपलब्ध है उनमें से भी सभी को चिकित्सा-व्ययों की पूरी प्रतिपूर्ति नहीं की जाती।

4.08.04 **बच्चों की शिक्षा।**—शिक्षकों के लिए अपने बच्चों को उपयुक्त और अच्छे स्कूलो में पढ़ाना दिन प्रतिदिन कठिन होता जा रहा है। सबसे पहले तो अच्छे स्कूलों में प्रवेश मिलना कठिन है, दूसरे, एक अच्छे प्राइवेट स्कूल में बच्चे को पढ़ाने का खर्च बहुत अधिक है। औसतन एक व्यक्ति को प्रत्येक बच्चे के लिए तीन-तीन हजार रुपया प्रतिवर्ष शिक्षा-शुल्क के लिए अलग रख देना पड़ता है। अच्छे आवासीय स्कूलो में बच्चों को शिक्षा दिलाना एक औसत अध्यापक की पहुंच से बाहर की बात है। केंद्रीय सरकार के कर्मचारियों के लिए केंद्रीय स्कूलों की व्यवस्था है किंतु अध्यापकों के बच्चों के लिए इस तरह के कोई स्कूल विद्यमान नहीं हैं।

(i) **बच्चों की शिक्षा के लिए ऋण की सुविधाएं**

बच्चों की शिक्षा के संबंध मे एक अन्य समस्या यह सामने आती है कि अध्यापक प्रवेश के समय शुल्को और अन्य खर्चों के लिए दी जाने वाली 3000 या 5000 रु० की राशि का एकमुश्त भुगतान नहीं कर सकते और यदि कोई अध्यापक अपने बच्चों को उच्चतर व्यावसायिक शिक्षा मे भेजना चाहता है तो वहां की ऊंची फीसें नहीं दे सकता। ऐसी स्थितियों में, शिक्षक अपनी बचतों में से पैसा निकालते हैं या फिर बहुत भारी ब्याज पर गैर-सरकारी स्रोतों से उधार लेते हैं। बच्चों की शिक्षा के बड़े खर्चों की पूर्ति के लिए संस्थाओं द्वारा ऋण-सुविधाओं की व्यवस्था भी नहीं के बराबर है। कालेजों और विश्वविद्यालयों से, नमूने के तौर पर चुने गए शिक्षकों के प्रत्युत्तरों के विश्लेषण से यह पता चलता है कि कालेजों और विश्वविद्यालयों के 90 प्रतिशत शिक्षकों को अपने बच्चों की शिक्षा के लिए अपनी संस्थाओं से ऋण लेने की सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं।

4.08.05 **सवारी-सुविधाएं**

(क) हमारे देश में अपने कार्य-स्थान तक पहुंचना समय और श्रम दोनों दृष्टियों से कठिन है। बहुत बार तो यह बहुत महंगा भी पड़ता है। केवल कुछ ही

संस्थाओं के पास अपनी परिवहन-सुविधाएं हैं और कुछ थोड़ी-सी संस्थाएं ही अपने अध्यापकों को सवारी खरीदने के लिए ऋण देती हैं। कालेजों के 80 प्रतिशत शिक्षकों को इसके लिए ऋण की सुविधाएं प्राप्त नहीं हैं।

(ख) विश्वविद्यालयों के शिक्षकों में स्थिति कुछ अच्छी है। विश्वविद्यालयों के लगभग 40 प्रतिशत शिक्षकों को सवारी खरीदने के लिए ऋण की सुविधाएं उपलब्ध हैं। किंतु सभी विश्वविद्यालयो में ये सुविधाएं मौजूद नहीं हैं। नमूने के लिए चुने गए 21 विश्वविद्यालयों में से 9 विश्वविद्यालयों में अधिकांश अध्यापकों को ये सुविधाएं प्राप्त हैं। इन विश्वविद्यालयों में जिन शिक्षकों को सवारी के लिए ऋण दिए गए हैं उनकी संख्या 56 से 90 प्रतिशत है।

4.09 सेवा-शर्तें

अध्ययनार्थ और विश्राम छुट्टियों को मिला कर छुट्टी की सुविधाएं, निवृत्ति-लाभ और यात्रा-सुविधाएं शिक्षकों की सेवा शर्तों के महत्वपूर्ण अंग हैं। इनसे ये तथ्य सामने आते हैं:

नमूने के शिक्षकों के प्रत्युत्तरों से यह पता चलता है कि उनमें से लगभग एक तिहाई को अर्जित अवकाश नहीं मिलता। कालेजों के 50 प्रतिशत शिक्षक और विश्वविद्यालयों के 36 प्रतिशत शिक्षकों को कोई असाधारण छुट्टी नहीं दी जाती। इसी प्रकार अध्ययनार्थ छुट्टी और विश्राम छुट्टी भी जो शिक्षक के वृत्तिक-विकास के लिए अत्यंत आवश्यक हैं---एक समान रूप से अध्यापकों को सुलभ नहीं होती। कालेजों के 67 प्रतिशत और विश्वविद्यालयों के 52 प्रतिशत अध्यापकों को विश्राम-छुट्टी नहीं दी जाती। इससे भी बुरी स्थिति यह है कि बहुत सारे स्थानों पर किसी न किसी बहाने, अध्यापिकाओं को प्रसूति छुट्टी भी नहीं दी जाती। इनमें से 18 प्रतिशत अध्यापिकाओं ने यह सूचित किया कि उन्हें प्रसूति छुट्टी नहीं दी गई। अतएव, कुल मिलाकर स्थिति काफी असंतोषजनक है।

4.09.01 सेवा निवृत्ति और दुर्घटना हितलाभ.---अंशदायी भविष्य निधि, उपदान, पेंशन और समूह बीमा आदि सेवा निवृत्ति लाभों की सुविधाएं, और दुर्घटना तथा काम के खतरों के लिए पर्याप्त मुआवजों की सुविधाएं भी पर्याप्त प्रतीत नहीं होती। कालेजों के लगभग 30 प्रतिशत शिक्षकों और विश्वविद्यालयों के 22 प्रतिशत शिक्षकों को अंशदायी भविष्य निधि और उपदान की सुविधाएं प्राप्त नहीं हैं। इसी प्रकार कालेजों के 34 प्रतिशत शिक्षकों और विश्वविद्यालयों के लगभग 50 प्रतिशत शिक्षकों को पेंशन-लाभ नहीं दिए गए। समूह बीमा और काम के खतरों के मुआवजे की सुविधाओं का भी अधिकांश मामलों में अभाव पाया गया। प्रयोगशालाओं आदि मे काम के खतरो के प्रति मुआवजे की कोई व्यवस्था नही थी।

4.09.02 सेवा निवृत्ति-आयु.---सामान्यतया अन्य व्यवसायों में लोग स्नातक-उपाधि या स्नातकोत्तर-उपाधि प्राप्त करने के बाद अर्थात् 21-23 वर्ष की आयु में आते हैं और 58 अथवा 60 वर्ष की आयु तक सेवारत रहते हैं, दूसरे शब्दों मे उनका सेवाकाल 35-39 वर्ष होता है (इनमे रक्षा सेवाओं के कर्मचारी शामिल नही हैं)। इसके विपरीत विश्वविद्यालय या कालेज का शिक्षक सामान्यतया एम० फिल०, पी० एच० डी०, जो अध्यापन-वृत्ति के लिए न्यूनतम योग्यता निर्धारित है—के बाद 26 या 27 वर्ष की आयु में अध्यापन कार्य शुरू करता है। सेवा निवृत्ति की नियत आयु 58 अथवा 60 वर्ष ही लें तो उस अध्यापक/अध्यापिका का सेवाकाल केवल 31-34 वर्ष ही रह जाता है। इनका सेवाकाल अन्य व्यवसायों के व्यक्तियों के सेवाकाल की तुलना में 4-5 वर्ष कम है। इससे अध्यापकों के निवृत्ति लाभों पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है। फिर, अध्यापकों की शिक्षा और उनके वृत्तिक विकास पर काफी कुछ खर्च किया गया होता है, अतः यदि अध्यापकों का सेवाकाल बढ़ा दिया जाए तो समाज को अपेक्षाकृत लम्बे समय के लिए अध्यापको की शिक्षा और उनके वृत्तिक-विकास का लाभ मिल सकता है।

4.09.03 अन्य सुविधाएं

(क) यात्रा

सरकारी कर्मचारी को दो वर्ष में एक बार अपने घर जाने और चार वर्ष में एक बार देश को अच्छी तरह देखने के लिए विभिन्न भागों की यात्रा करने के लिए उन्हें स्वगृह यात्रा रियायतें तथा छुट्टी-यात्रा रियायतें दी जाती हैं, किंतु कालेजों और विश्वविद्यालयों के सभी शिक्षकों को ये सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं। नमूना-अध्यापकों के प्रत्युत्तरों से विदित हुआ है कि विश्वविद्यालयों और कालेजों के लगभग 75 से 87 प्रतिशत शिक्षकों को अपनी अपनी संस्थाओं से यह सुविधा प्राप्त नही है। इसमें यह संकेत मिलता है कि केवल कुछ चुनिंदा संस्थाएं ही ये सुविधाएं देती हैं, अधिकांश संस्थाओं मे इनकी कोई व्यवस्था नहीं है।

4.10 अन्य सेवाओं के सामान्य लाभों से तुलना

आवास, चिकित्सा देखभाल, सवारी भत्ता, छुट्टी यात्रा सुविधाएं आदि आर्थिक लाभों के विश्लेषण से यह प्रदर्शित होता है कि ये सुविधाएं भारतीय प्रशासन सेवा, जीवन-बीमा-निगम, बैंक, सरकारी कार्पोरेशनों आदि के सभी कर्मचारियों को तो नेमी तौर पर उपलब्ध हैं, किंतु उच्च शिक्षा के अध्यापकों को ये सुविधाएं उनकी सेवा-शर्तों के अंग रूप में स्वतः ही नहीं मिलती। अतएव, उच्च शिक्षा अध्यापकों की तथा सरकारी और वित्तीय-प्रशासन के कर्मचारियों की सापेक्ष आर्थिक स्थिति मे वास्तविक अन्तर पाया जाता है। प्रायः ही अध्यापकों को आवास, चिकित्सा, सवारी आदि के लिए अपनी आय का बहुत बड़ा भाग खर्च करना पड़ता है, इसके विपरित भारतीय प्रशासन सेवा, भारतीय वन सेवा और भारतीय पुलिस सेवा संवर्ग के सरकारी कर्मचारियों को ये सुविधाएं सेवा और वस्तु रूप में मिलती हैं जबकि गैर सरकारी कंपनी क्षेत्र में काम करने वाले व्यक्तियो को ये सुविधाएं नकद के अतिरिक्त अन्य रूपों में या पर्याप्त मात्रा में नकद रूप मे मिलती हैं।

कार्य पर्यावरण

5.01 कार्य पर्यावरण और शिक्षकों की कार्य कुशलता

अध्यापक की स्थिति, उसकी व्यावसायिक सक्षमता और उसका कल्याण ये सभी उस कार्यपर्यावरण के साथ जुड़े हैं जिसमें रहकर उसे काम करना होता है। यदि कार्य का पर्यावरण अनुकूल है तो उसे यह ज्ञात हो जाएगा कि समाज की दृष्टि में उसके क्रियाकलापों का महत्व है और उसे अपनी भूमिका पर गर्व होगा, इसलिए वह अपनी भूमिका के योग्य होने के प्रयास करेगा। हमारे जैसे परिवर्तनशील समाज मे शिक्षक सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन के लिए परम महत्वपूर्ण हैं। समाज मे अच्छे व्यक्तियों का निर्माण करने मे चूंकि अन्य आर्थिक निविष्टियां पैदा करने की अपेक्षा अधिक समय लगता है और चूंकि व्यक्ति विकास के मात्र साधन नही बल्कि वे स्वयं साध्य होते है इसलिए हमे समाज मे अध्यापक के कार्य को, विकास-प्रक्रियाओं में सर्वाधिक महत्वपूर्ण निवेश के रूप में महत्व देना होगा। अतएव, ऐसा पर्यावरण जो शिक्षकों की कार्यकुशलता और उनके कल्याण को अधिकाधिक बढ़ाए-एक स्वस्थ और विकासोन्मुख समाज के लिए अनिवार्य शर्त है।

5.02 कार्य पर्यावरण की विशिष्टताएं

उच्च शिक्षा में शिक्षकों की भूमिका, उनके उत्तरदायित्व और उनके कार्यों की विस्तृत चर्चा शिक्षा और राष्ट्रीय विकास अध्याय में की गई है। यहां हम यह चर्चा करेंगे कि किस प्रकार का पर्यावरण उन अपेक्षाओ को जो शिक्षकों से की जाती हैं—सुकर बनाने और पूरा करने मे सहायक होता है।

5.03 कार्य की परिस्थितियां

5.03.01 **कमरों/कक्षकों की व्यवस्था.**—अपेक्षित कार्य-कुशलता के इष्टतम स्तर तक पहुंचने के लिए यह आवश्यक है कि अध्यापक एक विशेष प्रकार के कार्य पर्यावरण मे कार्य करें। उसका कार्यस्थल उसके लिए दिलचस्प और उतना ही आकर्षक होना चाहिए जितना उसका अपना घर। उसका कार्य स्थान ही उसको बौद्धिक विकास का अवसर देता है और उसी से उसके समग्र व्यक्तित्व का विकास हो सकता है। इसमें कोई अपवाद नहीं कि शिक्षक संगठनों और अध्यापनों ने अपने कार्य-स्थल की परम आवश्यकता पर जोर दिया है भले ही यह कार्य-स्थान कालेज या विश्वविद्यालय-विभाग मे एक छोटा सा कक्षक ही क्यों न हो। उन्होने स्पष्ट बताया है कि यदि उन्हें कालेज या विश्वविद्यालय मे 5–6 घंटे तक रहना है तो इस समय का सफल उपयोग तभी किया जा सकता है यदि वे वहां अपनी पढाई-लिखाई कर सकें और अलग-अलग छात्रों को उनकी समस्याओं को सुलझाने मे सहायता देने के लिए मिल सकें।

(क) कुछेक एकात्मक विश्वविद्यालयों को अपवाद रूप छोड़कर, आज स्थिति बहुत विकट है। हमारे सर्वेक्षण के निष्कर्ष इसकी पुष्टि करते हैं। जब शिक्षकों को शिकायतों की सूची बनाने के लिए कहा गया तो उन्होंने गम्भीर शिकायतों में "कार्य की खराब परिस्थितियों" को सबसे ऊँचे स्थान पर रखा। विश्वविद्यालयों में तो कुल मिलाकर दो तिहाई शिक्षकों के लिए अलग अलग कमरों की व्यवस्था है किन्तु अधिकांश कालेजों में ये सुविधाएं नहीं है। बेहतर दर्जे के कालेजों मे विभागीय अध्यक्षों के लिए अलग अलग कार्यालय के साथ-साथ स्टाफ के लिए विनोद कक्ष हैं किन्तु अधिसंख्य शिक्षको (लगभग 75 प्रतिशत) के लिए एक अलग अलग डेस्क की भी व्यवस्था नही है।

चूंकि शिक्षकों को काम करने के लिए न घर में और न ही कालेज में कोई अलग स्थान प्राप्त है, यह स्पष्ट नहीं कि वे वस्तुतः अपने लेक्चर कहां तैयार करें और छात्रों को सहायतार्थ उन्हें कहां मिले। अतः कार्य-स्थान पर अध्यापक के लिए एक कक्षक की व्यवस्था उसके लिए आराम की नहीं

(ख) संबद्ध-विश्वविद्यालयों में, जो हमारी शिक्षा-प्रणाली में काफी संख्या में हैं, एक एक विश्वविद्यालय के साथ बीसियों कालेज संबद्ध होते हैं, अत: पाठ्यक्रम तैयार करने में बहुत ही कम शिक्षक वास्तव में भाग ले पाते हैं। शेष शिक्षकों को यन्त्रवत् वही पढ़ाना होता है जो निर्धारित किया गया हैं। ऐसी स्थिति मे शैक्षिक स्वतंत्रता और भी कम हो जाती है क्योंकि शिक्षकों को अपने छात्रों की परीक्षा लेने का अवसर ही नही मिलता, परीक्षाएं केन्द्रीय रूप में विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित की जाती हैं। ऐसी स्थिति में व्यवहार्यत: किसी को भी स्वतन्त्रता का सुख नहीं मिलता क्योकि विश्वविद्यालय के शिक्षकों को भी यह शिकायत रहती है कि पाठ्य समितियो में प्राय: कालेजों के शिक्षक भरे होते है और विश्वविद्यालय किसी तरह से भी उन पाठ्यक्रमों को लागू नहीं कर सकते जिन्हें कालेज अपनी सीमित सुविधाओं के साथ लागू करने की स्थिति में नही होते। ऐसी स्थिति मे हमें न्यूनतम पाठ्यक्रम स्तर को लेकर चलना पडता है, इससे अधिकांश शिक्षको के शैक्षिक संतोष का स्तर भी निम्नतम हो जाता है। इस समस्या का स्पष्ट हल यह है कि संबंधन की पूरी व्यवस्था मे सशोधन किया जाए जिससे कि कालेजों को अपेक्षाकृत अधिक स्वतन्त्रता मिल सके। परन्तु बहुत से कालेज अपनी कमजोर स्थिति के कारण अपने पांवों पर खड़ा नहीं हो सकते इसलिए नीति यह रही है कि चुने हुए गुस्थापित कालेजों को "स्वायत्त" हैसियत दे दी जाए। इन कालेजो के शिक्षक अपने पाठ्यक्रम स्वयं तैयार कर सकेंगे या फिर विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों को उपयुक्त फेरबदल के साथ स्वीकार करने की स्थिति में होंगे। वे अधिकाधिक रूप में, विश्वविद्यालय की ओर से अपने छात्रों की परीक्षाएं लेंगे। यह विचार सराहनीय है किन्तु कभी-कभी शिक्षक इसका गलत अर्थ ग्रहण करते है। उनके अनुसार, यह विचार संस्थाओं मे "सम्भ्रात वर्गवाद" को जन्म देता है। यदि उत्कृष्टता प्राप्ति के लिए जहां कही सभव हो उपयुक्त परिस्थितिया पैदा करने और धीरे धीरे अन्य सस्थाओ में इसका प्रसार करने के काम को "संभ्रांत वर्गवाद" का नाम दिया जाता है तो हमें इसकी चिंता नहीं है क्योंकि शिक्षकों को यदि उनकी आधारभूत शैक्षिक स्वतंत्रता से वंचित कर दिया जाए, तो उनमे परले दर्जे की "अति-सामान्यता" आ जाएगी या इससे भी बुरी स्थिति पैदा हो जाएगी। हमारा यह भी विचार है कि पूर्वस्नातक और स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों के लिए अलग-अलग पाठ्य समितियां होनी चाहिए क्योंकि ये पाठ्यक्रम विभिन्न संस्थाओं में लागू किए जाते हैं और उन्हें जो सुविधाएं उपलब्ध हैं उनमे भी काफी अन्तर पाया जाता है। इस उपाय से दोनों स्तरो पर, संभवतया विभिन्न उपागमों के माध्यम से, गुणवत्ता बढ़ जाएगी। इस तरह पाठ्यचर्या तैयार करने के काम में बहुत सारे शिक्षक भी सहयोग दे सकेंगे।

(ग) हम देखते है कि अध्यापन की आयोजना और इसका पर्यवेक्षण सामान्यतया पाठ्य समितियां अध्यापकों के सहयोग से करती हैं किंतु शोध कार्य अपेक्षतया गुपचुप तरीके से कराया जाता है। केवल विषयों के अनुमोदन और परीक्षकों की नियुक्ति (और वस्तुत: परीक्षकों की रिपोर्ट पर निर्णय) के मामले गैर विशेषज्ञ समिति के सम्मुख रखे जाते हैं। क्योंकि अनुसंधान विश्वविद्यालय के काम का एक बहुत बड़ा अंग बन गया है—कुल मिला कर 40,000 इस समय पंजी मे दर्ज हैं—अत: हमारा यह सुझाव है कि आयोजना, अधिक प्रभावी पर्यवेक्षण, समन्वय और हमारे समाज की जीवंत समस्याओं सबधी प्रयोज्यता के बारे में निर्णयन के लिए अलग माध्यम होने चाहिए। शोध अभिकरणों के साथ सम्पर्क भी बढ़ाया जाना होगा ताकि विश्वविद्यालयों जो उच्च कोटि की जनशक्ति के स्त्रोत होते हैं और शोध अभिकरणों की इस मांग की पूर्ति करते है उन्हे भी बदले में इन अभिकरणों का समर्थन प्राप्त हो।

(घ) शिक्षकों की, विशेषतया संबद्ध विश्वविद्यालयों में, सीमित सहभागिता मे यह मांग उभरने लगी है कि शैक्षिक मामलों मे इनकी अपेक्षाकृत अधिक सहभागिता होनी चाहिए। मूल समस्या और इसके अधिकांश युक्तिसंगत समाधानों पर पहले ही विचार किया जा चुका है। फिर भी, सारे शिक्षक चूंकि विद्या परिषद और यहाँ तक कि संकाय के भी सदस्य नही हो सकते, इसलिए प्रतिनिधित्व और इसकी पद्धति संबंधी प्रश्न पर वर्षों तक विचार होता रहा है। शिक्षकों को भेजी गई प्रश्नावली के प्रत्युत्तर में कालेजों के 22 प्रतिशत और विश्वविद्यालयों के 20 प्रतिशत शिक्षकों ने वरिष्ठता क्रम से प्रतिनिधित्व का समर्थन किया। कालेजों और विश्वविद्यालयों के अन्य क्रमश: 21 प्रतिशत और 23 प्रतिशत शिक्षकों ने चक्रावृत्ति (उपयुक्त तरीके से) से प्रतिनिधित्व के पक्ष में मत दिया। कालेजों और विश्वविद्यालयों के 9 प्रतिशत शिक्षक इन निकायों मे नामित करने के पक्ष में थे। कालेजों और विश्वविद्यालयों के क्रमश: 15 और 17 प्रतिशत शिक्षकों के अल्पमत ने इस प्रयोजन के लिए निर्वाचन पद्धति का समर्थन किया विभिन्न संस्थाओं ने भी इसी निर्वाचन पद्धति के पक्ष मे मत दिया। हम बहुमत के विचार से सहमत हैं। इसे हम एक स्वस्थ विचार समझते हैं। निर्वाचन प्राय: अकादमिक योग्यता के अतिरिक्त अन्य बातों पर आधारित होते हैं और इनके फलस्वरूप कभी तो सीमित प्रभाव शक्ति वाले प्रतिनिधि चुन लिए जाएंगे और कभी कट्टर विचार वालों का बोलबाला हो जाएगा। अत: हम चक्रावृत्ति से प्रतिनिधित्व की पद्धति की सिफारिश करते हैं जिससे कि उन अध्यापकों के अतिरिक्त जो अपनी नेतृत्व शक्ति के बल पर संकाय या विद्या परिषद के सदस्य बन गए हैं—अन्य प्रोफेसर, सह प्रोफेसर और सहायक प्रोफेसर इन निकायों के कार्यों में भाग ले सकें और अपने विविध प्रकार के अनुभवों और परामर्श से इन्हें समृद्ध बना सकें।

5.04.02 शासी निकायों में प्रतिनिधित्व.—(क) विश्वविद्यालय के अन्य निर्णायक निकायों यथा कार्यकारी परिषद (सिंडीकेट) अथवा (सीनेट) में प्रतिनिधित्व का जहा तक प्रश्न है, शिक्षकों का प्रतिनिधित्व निश्चित ही महत्वपूर्ण है और कार्यकारी परिषद् के लगभग आधे और सीनेट के कम से कम 30 प्रतिशत सदस्य निश्चित रूप से शिक्षक ही होने चाहिए। आखिरकार हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि "यूनिवर्सिटी" मध्यकाल के "यूनिवर्सिटीज सोसाइटीज मैजिस्ट्रेरम एट स्कोलरियम" (यूनिवर्सल सोसायटी आफ टीचर्स एंड स्कालर्ज) का संक्षिप्त नाम है। विश्वविद्यालय

अपितु ऐसी व्यवस्था समझी जानी चाहिए जो उन सब कार्यों के निष्पादन के लिए आवश्यक है जिनकी एक शिक्षक से अपेक्षा की जाती है। इसी प्रकार, शिक्षकों को टेलीफोन की कोई सुविधा नहीं है और न उन्हें टंकण अथवा आशु टंकण की कोई सहायता दी जाती है।

5.03.02 **पुस्तकालय सुविधाएं.**—(क) अधिकांश संस्थाओं में पुस्तकालय सुविधाएं अत्यल्प हैं। विश्वविद्यालयों की अपेक्षा कालेजों में ये सुविधाएं बहुत ही कम हैं। बहुत से विश्वविद्यालयों में संबंधन की शर्त जिनके अन्तर्गत कालेजों के लिए किसी एक विषय में स्नातकोत्तर कक्षाएं चालू करने के लिए केवल 5 से 6 हजार रुपए और वार्षिक आवर्ती आधार पर प्रति विषय मात्र 750 रु० की व्यवस्था है—बहुत ही अपर्याप्त हैं। पूर्व स्नातक स्तर पर कालेज प्रति विषय 300 रु० से 500 रु० तक ही खर्च कर सकते हैं—; इस राशि से मुश्किल से 10 अच्छी पुस्तकें खरीदी जा सकती हैं। अतः इसमें आश्चर्य नहीं कि बहुत से अध्यापक और अधिकांश छात्र बाजार में उपलब्ध सस्ती पुस्तकें खरीद कर काम चलाते हैं।

5.03.03 **प्रयोगशाला की सुविधाएं.**—उच्च शिक्षा संस्थाओं के लिए प्रयोगशाला की सुविधाएं भी पुस्तकालय की सुविधाओं जितनी महत्वपूर्ण हैं किन्तु यहां भी स्थिति उतनी ही बुरी है। काफी लम्बे समय से उपस्करों और प्रयोग-सामग्री की कीमतें बहुत बढ़ गई हैं किंतु इनके लिए आवंटित निधियों में तदनुसार वृद्धि नहीं हुई। इसके परिणामस्वरूप उपस्कर अपर्याप्त हो जाते हैं, उनके काफी महत्वपूर्ण कलपुर्जे पुराने पड़ जाते हैं, इसके साथ जब प्रयोगशाला भवनों की हालत भी खस्ता हो तो इस सब का छात्रों के समस्त प्रयोगात्मक कार्य पर हानिकर प्रभाव पड़ता है। अध्यापक हतोत्साह हो जाते हैं और अन्ततोगत्वा वे प्रयोगशाला के कार्य को मात्र ऐसा यांत्रिक कार्य मानने लगते हैं जिसमें कोई चुनौती अथवा रचनात्मक प्रयोजन नहीं है।

5.03.04 **शोध-सुविधाएं.**—(क) उच्च शिक्षा के शिक्षकों का अपने क्षेत्र में शोध कार्य करना सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्यों में से है। इस समय शोध कार्य की जो सुविधाएं अध्यापकों को उपलब्ध हैं वे मुख्यतया विश्वविद्यालय के विभागों में ही विद्यमान हैं यद्यपि शोध-उपाधि के लिए लगभग 11 प्रतिशत शोधकर्ता कालेजों की पंजी में दर्ज हैं। यहां तक कि विश्वविद्यालयों में भी, मुख्य शिक्षा संस्थाओं को जिस कोटि के उपस्कर उपलब्ध कराये जाते हैं उनमें तथा राज्यों के अपेक्षाकृत नए और छोटे विश्वविद्यालयों को उपलब्ध उपस्करों की कोटि में बहुत अंतर होता है। वास्तव में विश्वविद्यालयों के अधिकांश शिक्षकों ने यह बताया कि उनके पुस्तकालय और प्रयोगशालाएं शोध के लिए अपर्याप्त हैं। विशिष्ट परियोजनाओं के लिए शोध-सहायता की संभावनाएं तो मौजूद हैं किंतु यहां भी कुछ आधारभूत संरचना की आवश्यकता है ताकि परियोजनाओं का कार्यान्वयन हो सके। विश्वविद्यालय विभागों के शिक्षक अधिकांशतया उच्च कोटि के प्रशिक्षित विशेषज्ञ होते हैं इस पर भी उनको यदि शोध कार्य के अपेक्षाकृत सीमित अवसर उपलब्ध हो तो यह अत्यधिक दुर्भाग्यपूर्ण और साथ ही मूल्यवान राष्ट्रीय संसाधनों का अपव्यय है।

(ख) इस समय पूर्वस्नातक कालेजों के अध्यापकों के लिए विज्ञान में शोध कार्यों के लिए बहुत कम गुंजाइश है, मानविकी और सामाजिक विज्ञानों के क्षेत्र में तो यह और भी कम है। जहां अध्यापक ऐकिक विश्वविद्यालय या स्नातकोत्तर कालेजों के साथ संबद्ध होता है वहां स्थिति कुछ बेहतर है। चूंकि अधिकांश अध्यापक पूर्वस्नातक स्तर पर भरती किए जाते हैं, अतः कम आयु में ही उनकी सर्जनात्मक सामर्थ्य समाप्त हो जाती है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के संकाय-सुधार कार्यक्रम और शोध-संगोष्ठियों से केवल बहुत थोड़े अध्यापकों को लाभ मिल पाता है।

5.04 कार्य पर्यावरण

शिक्षकों के कार्य पर्यावरण में यह बात शामिल है कि अध्यापक का किस सीमा तक अपने कार्यों पर नियंत्रण है, इसमें संस्थाओं के सजीव एवं सक्रिय वातावरण की बात भी आ जाती है। वास्तव में पर्यावरण के ये दो पक्ष परस्पर सम्बद्ध हैं। यदि संस्था का शैक्षिक वर्ग अपने अध्यापन और शोध कार्यक्रमों को थोड़ी बहुत स्वतंत्रता के साथ चला सकता है, यदि शिक्षक सामान्यतः अपने छात्रों को अपना सर्वोत्तम योगदान देने में रुचि रखते हैं और यदि वे परिचर्चाओं, संगोष्ठियों और क्षेत्रीय कार्यकलापों के आयोजन द्वारा बौद्धिक प्रेरणा के महत्व को समझते हैं तो उनकी यह इच्छा भी होगी कि प्रत्येक क्षेत्र में उत्कृष्टता प्राप्त की जाए। सम्भवतया, इससे उनकी संस्था का नाम भी होगा और उससे स्थानीय और क्षेत्रीय विकास में, तथा जिस नगर में यह संस्था है उसके सामाजिक और सांस्कृतिक क्रियाकलापों में वृहद भूमिका के निर्वाह की अपेक्षा की जाएगी। स्पष्ट है कि यह एक जटिल प्रश्न है और इसके साथ जो विभिन्न तथ्य जुड़े हैं उनके संबंध में ठोस आंकड़े प्राप्त करना हमारे लिए कठिन रहा है।

5.04.01 **अकादमिक स्वतंत्रता.**—(क) यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि अकादमिक स्वतंत्रता शिक्षक समुदाय के सर्वाधिक मूल्यवान अधिकारों में से है। विश्वविद्यालयों में शिक्षक स्वयं ही शैक्षिक कार्यक्रम निर्धारित करते हैं और पाठ्य समितियों, संकायों और विद्या परिषदों में लगभग सारे सदस्य, विभिन्न विद्याओं के शिक्षक ही होते हैं। बहुत बार शिक्षा संस्थाओं को अन्य शोध संस्थाओं और व्यावसायिक निकायों के विशेषज्ञों की तथा उन व्यक्तियों के जो विश्वविद्यालयों से निकलने वाले छात्रों को नौकरियां देते हैं, अधिक सहयोग की आवश्यकता पड़ती है। यह अच्छी बात है इससे उनके पाठ्यक्रमों में अधिक संगति आएगी और नियोक्ताओं के साहस तथा उनके विश्वास के प्रति अधिक विश्वसनीयता पैदा होगी। शोध-कार्यकलाप भी समाज की वास्तविक आवश्यकताओं की ओर उन्मुख होंगे, हो सकता है इन कार्यों को उन व्यक्तियों का भी समर्थन प्राप्त हो जाए जो अब तक विश्वविद्यालय व्यवस्था से अलग-अलग खड़े रहे हैं। किंतु यह दूसरी बात है। यहां हमारा ताल्लुक शिक्षकों की भूमिका से है।

में विसम्मति का मुकाबला करने की उपयुक्त पद्धति निर्वाचन के संख्यात्मक दबावों की अपेक्षा, परिचर्चा की गुणात्मक उत्कृष्टता होनी चाहिए ।

(ख) यदि हम यह विचार सही समझते हैं तो शासी निकायों में प्रतिनिधित्व का निर्धारण वरिष्ठता और चक्रावृत्ति इन दोनों के मिले जुले रूप के माध्यम से होगा । निर्वाचन से जो प्रबंध-मंडल चुना जाता है उनमें वर्गीय तथा अल्पकालीन हितों के प्रति पक्षपात की भावना रहती है और इसी कारण वे व्यापक हितों के लिए हानिकर सिद्ध हुए हैं । अतः वांछनीय यह है कि प्रबंध मंडल एकरूप हो जिसे शिक्षकों/छात्रों और अध्यापकेतर स्टाफ के अलग-अलग परामर्शी मंचों का समर्थन प्राप्त हो । यदि सलाहकार अथवा परामर्शी निकायों की यह प्रणाली स्थापित कर दी जाए तो उस स्थिति में निर्णय स्वतः ही निकल आएंगे, उन्हें सायास लाना नही पड़ेगा, इस प्रकार निर्णयों में सर्वसम्मत्ति भी हासिल हो जाएगी । वास्तव मे, परामर्शी प्रक्रिया में छात्र और कर्मचारी दोनों अलग-अलग रूप से शामिल होने चाहिए ताकि प्रस्तावित निर्णय के संबंध में, विभिन्न वर्गों के सर्वाधिक व्यापक विचार और इसके प्रभाव का मूल्यांकन शासी निकायों को ज्ञात हो जाए । हमारा यह विचार है कि यह प्रक्रिया, शासी निकायों मे इन वर्गों के कुछेक व्यक्तियों को सदस्य बना लेने की प्रक्रिया से बेहतर है ।

(ग) कालेजों के शासी निकायों में शिक्षकों के प्रतिनिधित्व के सम्बन्ध में एक चौथाई शिक्षकों (24 प्रतिशत) ने निर्वाचन अथवा चक्रावृत्ति (23 प्रतिशत) के पक्ष में मत दिया । इतने ही शिक्षक (25 प्रतिशत) वरिष्ठता नामन के पक्ष में थे । 25 प्रतिशत शिक्षकों ने कोई प्रत्युत्तर नही दिया । विश्वविद्यालयों के शिक्षकों ने थोड़े भिन्न प्रत्युत्तर दिए हैं । । निर्वाचन (21 प्रतिशत), चक्रावृत्ति (18 प्रतिशत), नामन (7 प्रतिशत), वरिष्ठता (13 प्रतिशत) और 35 प्रतिशत शिक्षकों ने प्रत्युत्तर नहीं भेजे ।

(घ) ऐसे बहुत से वित्तीय और प्रशासनिक निर्णय होते हैं जो छुट्टी, वेतन नियतन, आवास-आवंटन और इसी तरह के अन्य रोजमर्रा के मामलों में शिक्षकों की स्थिति को प्रभावित करते हैं । एक शिक्षक को जब रजिस्ट्रार, अथवा वित्त अधिकारी या विश्वविद्यालय के अन्य संबद्ध अधिकारियों से कोई स्पष्टीकरण लेना होता है तो वह स्वयं को अत्यधिक विवश और घबराहट की स्थिति में पाता है । इन समस्याओं को दूर करने के लिए हम यह सिफारिश करते हैं कि अध्यापकों की एक छोटी सी परामर्श समिति का गठन किया जाय जिससे कालेज या विश्वविद्यालय के वित्त और स्थापन विभाग सलाह ले सकें । सुविधाओं की व्यवस्था अथवा कार्य और निधियों के बंटन के मामलों में भेदभाव बरते जाने की भावना से उत्पन्न बहुत सारी शिकायतों का निपटान इन परामर्शी निकायों द्वारा बड़ी तेजी से किया जा सकता है ।

5.04.03 निर्णयन में शिक्षक-संगठनों की भूमिका.—*शिक्षकों* के सामाजिक और वृत्तिक उत्तरदायित्वों की चर्चा हम अगले अध्याय में करेंगे, यहां चूंकि हम कार्य के वातावरण का विश्लेषण कर रहे हैं, इसलिए यह उचित होगा कि कार्य का उचित वातावरण पैदा करने और संगत निर्णय लेने में शिक्षक संगठनों की भूमिका पर विचार कर लिया जाए । हम यहां सर्वेक्षण के इस परिणाम को फिर से उद्धृत करते हैं कि लगभग एक चौथाई शिक्षकों का अल्पमत यह चाहता है कि शैक्षिक और कार्यकारी निकायों में शिक्षकों को प्रतिनिधित्व निर्वाचन के माध्यम से दिया जाए । संस्थाओं के वर्तमान वातावरण के बारे में शिक्षकों के विचार जानने के लिए पूछे गए एक अन्य प्रश्न के उत्तर में 55 प्रतिशत ने इसे "लोकतांत्रिक" कहा । जो शिक्षक इसे स्वेच्छाचारी तथा गुटबंदीयुक्त समझते थे उनकी संख्या क्रमश. 10 प्रतिशत और 7 प्रतिशत थी । नवीन पद्धतियों के प्रति विभागीय अध्यक्षों के दृष्टिकोण के बारे में पूछे गए एक अन्य प्रश्न के उत्तर में 74 प्रतिशत शिक्षकों ने इसे उत्साह-वर्धक और 17 प्रतिशत ने "हतोत्साही" कहा । इस तरह के आंकड़ों से यह प्रदर्शित होता है कि हमारी संस्थाओं में इस एक बिंदु के बारे मे वातावरण काफी संतोषजनक है । किसी भी बृहद संस्था-प्रणाली में कुछ न कुछ असंतोष तो होगा ही, इसका संबंध सम्भवतया व्यवस्था-संबंधी कारणों की अपेक्षा वैयक्तिक कारणों से अधिक होता है । अतएव हमारा यह विचार है कि यह प्रणाली अधिकांशतया ऐसी अलोकतांत्रिक नहीं है जहां विचार अभिव्यक्ति के लिए नई पद्धतियां लाना महत्वपूर्ण हो । शिक्षकों की अपेक्षाकृत अधिक सहभागिता के लिए हमने पहले भी यह सिफारिश कर दी है कि पूर्व स्नातक और स्नातकोत्तर पाठ्य समितियों को अलग-अलग गठित किया जाए तथा शोध-कार्य की आयोजना एवं समन्वय के लिए मंडलो का गठन किया जाए । कालेजो की स्वायत्तता का वास्तविक अर्थ यही है कि वृत्तिक कार्यकलापों के संबंध में शिक्षकों को स्वतंत्र ढंग से कार्य करने दिया जाए । पिछले पैराओं में हमने अधिक व्यापक परामर्शी-तंत्र स्थापित करने की भी सिफारिश की है । अतः हमारा यह विचार है कि शैक्षिक अथवा कार्यकारी निकायों में संस्थाओं के प्रतिनिधित्व से कोई लाभ नहीं होगा । हमारे देश में अधिकांश संस्थाएं शिक्षकों के मजदूर संघों के रूप में कार्य करती हैं जिनका उद्देश्य उनके भौतिक हितों की रक्षा करना होता है । अतः प्रबंध वर्ग में इस प्रकार का प्रतिनिधित्व दोनों के लिए वस्तुतः अलाभदायक ही साबित होगा । प्रबंध-वर्ग उत्तरदायी होता है, उसे संस्थाओं के बृहद एवं दीर्घकालीन हितों और साथ ही इनके अवयवों-शिक्षक, छात्र, कर्मचारी की ओर ध्यान देना होता है, अतएव वर्गीय हितों और प्रायः तुरत मांगो की स्पष्टतया सुरक्षा के लिए आए प्रतिनिधि समग्र नेतृत्व की भूमिका का निर्वाह नहीं कर पाएंगे ।

शिक्षक संघों को निश्चित ही अब शिक्षकों की भौतिक एवं सेवा-परिस्थितियों को सुधारने का प्रयत्न करना चाहिए, उन्हें कल्याण कार्य हाथ में लेने होंगे और सबसे बढ़कर बात यह है कि उन्हें शिक्षकों के वृत्तिक सम्मान तथा उनकी प्रतिष्ठा की रक्षा करनी होगी । विकसित देशों में शिक्षक-संगठन उच्च वृत्तिक-मानक बनाए रखने तथा संस्थाओं की विश्वसनीयता और बराबरी स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । वे शिक्षकों के वृत्तिक विकास के लिए कार्यक्रमों का आयोजन करते हैं । किंतु हमारे देश में इन पक्षों की ओर ध्यान नहीं दिया जाता और भौतिक हितों की सुरक्षा ही मुख्य आधार बन जाता है और कभी-कभी तो इस सीमा तक कि उन शिक्षकों के हितों के बचाव के प्रयत्न किए जाते हैं जिन्होंने अपने

मूल कर्तव्यों की भी उपेक्षा कर दी है। हमारी प्रश्नावली के प्रत्यु-त्तरों से यह प्रकट होता है कि कालेजो के 22 प्रतिशत और विश्व-विद्यालयों के 18 प्रतिशत शिक्षक ऐसे हैं जिनके बारे में छात्रों मे यह धारणा है कि वे बिना तैयारी के कक्षाएं लेते हैं (एक राज्य में ऐसे शिक्षकों की संख्या 38 प्रतिशत थी)। इस प्रश्न का कि क्या शिक्षक अपने काम को गंभीरता से लेते हैं, समाज के सदस्यों ने उत्तर दिया कि उनके विचार मे कालेजों के 86 प्रतिशत और विश्व-विद्यालयों के 90 प्रतिशत शिक्षक इस कसोटी पर बहुत खरे नहीं उतरते। उनके शब्दों में "कुछ ही अथवा बहुत ही कम अध्यापक अपने काम को गंभीरता से लेते है।" संघों को इन मामलों में भी उतनी ही रुचि लेनी चाहिए जितनी वे बेहतर वेतन, आवास आदि के लिए शिक्षकों की वैध मांगों में लेते हैं। हमारा शिक्षक संघों से यह अनुरोध है कि वे अधिकाधिक विषयों में रुचि ले, शिक्षक की छवि को सुधारने में सहायता करें, यह सुधरी छवि शिक्षकों को काफी समय से देय लाभों की मांग करने मे वल प्रदान करेगी।

5.05 शिकायतों का निवारण

शिक्षकों के कार्य की परिस्थितियों के मूल्यांकन में, हमें केवल भौतिक परिस्थितियां तथा काम का स्थान या विभिन्न स्तरों पर निर्णयन में भूमिका की ओर ही नहीं बल्कि उन मनोवैज्ञानिक स्थितियो की ओर भी ध्यान देना होगा जिनमें शिक्षक काम करते है। शैक्षिक कर्त्तव्यों के कुशल निर्वाह के मार्ग की बाधाओ को हम तभी समझे और उन्हें दूर कर सकेंगे जब हम यह मान ले कि यह प्रणाली चिरकाल से चली आ रही शिकायतों को सहन नहीं करेगी। सर्वेक्षण के आंकड़ों से यह पता चलता है कि शिकायतें मुख्यत: वेतन की अनिय-मित अदायगी, काम की खराब परिस्थितियां, गलत-समझी जाने वाली नियुक्तियां और विशेषतया पदोन्नतिया तथा लम्बे अर्से के लिए तदर्थ एवं अस्थायी नियुक्तियां जारी रखने के मामलों को लेकर की जाती हैं। शिकायतों का अगला आधार विभिन्न प्रकार के भेदभाव और अन्ततः उपयुक्त क्रियाविधि के बिना की गई अनुशासनिक कार्रवाई है। राज्य सरकारों को वेतनों की नियमित अदायगी की सुनिश्चित व्यवस्था के लिए तुरंत उपाय करने चाहिए क्योंकि आर्थिक दायित्व सामान्यत: राज्य सरकारो का ही होता है। तदर्थ और अस्थायी नियुक्तियां एक वर्ष से अधिक नहीं होनी चाहिए। काम की परिस्थितियों पर विस्तार से चर्चा की गई हैं, साथ ही शिक्षाप्रणाली में ही ऐसा तंत्र होना चाहिए जो भेदभाव और निरंकुश व्यवहार संबंधी मामलों में कार्रवाई करे। 88 प्रतिशत शिक्षकों ने यह बताया कि वे अन्य सभी उपायों के असफल हो जाने पर ही न्यायालय जाएगे, यह अफसोस की बात है कि वर्तमान प्रणाली के परिणामस्वरूप इतनी अधिक मुकदमेंबाजी हो रही है। पीड़ित अध्यापक सामाजिक दृष्टि से जागरुक प्राणी होते हैं और काफी समय से चली आ रही उनकी शिकायतो का निराकरण नहीं होता तो कभी कभी वे अवांछित व्यवहार करने लगते हैं।

5.05.01 शिकायतों के प्रकार.—जब हम शिक्षकों की शिका-यतों पर विचार [illegible] शिकायतें तीन वर्गों में रखी जा सकती हैं :—

(1) वैयक्तिक शिकायतें

(2) शिक्षक-समूहों की शिकायतें जिनमें सेवा की सामान्य परिस्थितियां और काम की परिस्थितियां आदि शामिल हैं;

(3) ऐसी शिकायतें जिनका निपटान कॉलेज अथवा विश्व-विद्यालय के अतिरिक्त अन्य प्राधिकारियों प्राधिकरणों दूसरे शब्दों में, राज्य या केन्द्र सरकार जैसी भी स्थिति हो, द्वारा ही किया जा सकता है।

5.05.02 शिकायत निवारण-तंत्र.—(क) वैयक्तिक शिका-यतों के निपटान के लिए कुछ विकल्पों पर विचार किया जा सकता है। केंद्रीय विश्वविद्यालयों के अभिशासन पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की रिपोर्ट में सुझाए गए अम्बुद्समैन (लोकपाल) की नियुक्ति पर विचार किया जा सकता है। इसके अनुसार "—इस प्रकार की शिकायतों पर विचार एक अलग कार्यालय में ऊंचे दर्जे की विश्वसनीयता वाले अधिकारी के अधीन किया जाना चाहिए जो कुलपति से सीधा यह सिफारिश करेगा कि किस प्रकार शिकायत दूर की जा सकती है। इस पद पर केवल वही व्यक्ति नियुक्त किया जाएगा जिसने पहले वरिष्ठ प्रशासनिक, शैक्षिक अथवा विधिक पदों पर कार्य किया हो, उसकी नियुक्ति कुलपति द्वारा सुझाई गई नामिका में से विजिटर द्वारा की जाएगी। इस पद पर नियुक्त व्यक्ति को यह अधिकार होगा कि वह जिन कागजातों को आवश्यक समझे मंगवा ले और यदि वह चाहे तो कुलपति की अनुमति से, वरिष्ठ शिक्षा शास्त्रियों का अपने काम में सहयोग ले। किंतु यह सुनिश्चित हो कि इस पद पर वही व्यक्ति नियुक्त हो जो न तो विश्वविद्यालय की किसी समिति का सदस्य हो और न ही किसी अन्य हैसियत से विश्वविद्यालय से संबद्ध हो। यह आशा की जाती है कि इस अधिकारी की सिफारिशों की ओर उचित ध्यान दिया जाएगा और कुलपति इन्हें सम्भवतया स्वीकार कर लेगा। कुलपति का निर्णय अंतिम होगा जब तक कि मामला ही ऐसा न हो कि उसको विद्या परिषद या कार्यकारिणी परिषद के सामने रखने की आवश्यकता पड़े।" चूंकि वह अधिकारी सीधा कुलपति के अधीन कार्य करेगा इसलिए वह उन समस्याओं पर अलग से विचार कर सकेगा जो मौजूदा नियमों और विनियमों के अन्तर्गत आती हैं, यह काम वह तेजी से पूरा कर लेगा।

(ख) अलग-अलग कालेजों मे इसी तरह की क्रियाविधि सम्भवतया सुकर नही होगी जब तक कि संबद्ध कालेजों का आकार अपेक्षाकृत बड़ा न हो। वहां सम्भवतया यह वांछनीय होगा कि इस प्रकार के अम्बुद्समैन की नियुक्ति की जाए जो संबद्ध विश्व-विद्यालय की कार्यकारिणी परिषद के प्रत्यक्ष अधीन कार्य करे। विकल्प रूप में, ऊपर सुझाई गई अध्यापक सलाहकार समिति वैयक्तिक शिकायतों पर अलग-अलग विचार कर सकती है और यह सिफारिशी निकाय का कार्य करेगी।

(ग) जिन शिकायतों का संस्था स्तर पर निपटान न किया जा सके, वे गुजरात सेकेंडरी एजुकेशनल ट्रिब्यूनल की तरह के एक सरलीकृत क्रियाविधियों वाले ट्रिब्यूनल (अधिकरण) के सामने रखी जानी चाहिए। इस अधिकरण में कालेज तथा विश्व-विद्यालय दोनों के वैयक्तिक शिक्षकों और प्रबंध मंडल के बी

होने वाले झगड़े समाधान के लिए लाए जा सकते हैं। यह महत्वपूर्ण है कि क्रियाविधि संबंधी कठिनाइयां न्यूनतम हों और अधिकरण को विश्वविद्यालयों के विशिष्ट लक्षणों की काफी व्यापक जानकारी हो। चूंकि यह अधिकरण विश्वविद्यालय की प्रणाली से बाहर होगा अतः यह उम्मीद की जा सकती है कि यह उन दबावों से मुक्त होगा जिनसे अम्बुद्समैन भी स्वयं को अप्रभावित नहीं रख सकेगा। इससे शिक्षकों को भी अपनी समस्याओं के तुरंत निवारण के लिए अपने संघ अथवा संस्था की सहायता लेने की जरूरत नहीं रहेगी। अधिकरण की विश्वसनीयता के लिए यह आवश्यक है कि इसके सदस्यों को स्वतंत्र विशेषज्ञ ही समझा जाए।

(छ) सामूहिक शिकायतों के मामले में यह अधिकरण स्पष्टतया एक वैकल्पिक संभावना है। राज्य सरकारें अन्य प्रशासनिक अधिकरणों की बात भी सोच सकती है जिनके माध्यम से ये अपने विचारों को प्रस्तुत कर सकेंगी—इसका कारण यह है कि सामूहिक शिकायतें एकदम जोर पकड़ लेती हैं और वे समग्र व्यवस्था की मांगें बन जाती हैं। इस अधिकरण में तीसरे प्रकार की शिकायतों के संबंध में भी कार्रवाई की जा सकती है। कालेजों के शिक्षकों की एक मुख्य शिकायत—वेतन देने में अनियमितता का समाधान भी केवल इसी स्तर पर किया जा सकता है।

(ड़) संयुक्त परामर्श तंत्र (Joint Consultative machinery) का सुझाव दिया गया है। किंतु इसमें अल्पसंख्यक प्रतिनिधित्व और ध्रुवीकरण की कठिनाइयां हैं और अध्यापकों में आन्तरिक प्रतिद्वन्द्विता का दोष भी आ सकता है। कुल मिलाकर, अधिकरण ही ऐसा सरलतम तरीका है जिसके द्वारा, मनमाने स्थानांतरणों और अन्य वित्तीय उपायों संबंधी शिकायतें और इसके साथ ही पदोन्नति और सेवा-परिस्थितियों संबंधी शिकायतों पर विचार किया जा सकता है।

5.05.03 **स्पष्ट निर्देशक सिद्धान्तों, और क्षेत्रों के सीमांकन की आवश्यकता.**—इसका वस्तुतः अर्थ यह है कि निम्नलिखित के संबंध में स्पष्ट निर्देशक सिद्धान्त होने चाहिए :

(i) शिक्षकों के कर्तव्य और अधिकार, सदाचार संहिता के संबंध में ही नहीं अपितु उनके हितों, जिनमें अल्पमत के हित भी शामिल हैं—को प्रतिनिधित्व दिए जाने के अधिकार के संबंध में।

(ii) वे शिकायतें जिन पर प्रशासनिक अधिकरणों जैसे तंत्रों में विचार किया जाना चाहिए। ये शिकायतें उन सामान्य मांगों से बिल्कुल अलग हैं जिनके लिए सौदाकारी क्रियाविधि अधिक उपयुक्त होती है।

(iii) इस प्रकार की शिकायतों के लिए सरलीकृत और समयबद्ध क्रियाविधि-अपील के अधिकार सहित।

5.05.04 **दण्ड की श्रेणियां.**—इस समय अनुशासन प्राधिकारियों के सामने सब से बडी कठिनाई यह है कि दण्ड-श्रेणियों की कोई व्यवस्था विद्यमान नहीं है। या तो शिक्षक के व्यवहार को माफ कर दिया जाता है या फिर उसे निलंबित करके बाद में नौकरी से हटा दिया जाता है। अतः एक ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए जिसके माध्यम से वेतन वृद्धि रोकना या निम्न पद पर पदावनति या फिर बरखास्तगी के अलावा अन्य प्रकार के दण्ड दिए जा सकें। इस तरह के दण्ड बोर्ड द्वारा किए जाएंगे जिसमें ऐसे शिक्षाशास्त्री होंगे जो उस विश्वविद्यालय से संबद्ध नहीं हैं।

5.06 कार्य-व्यवहार और कार्य पर्यावरण

निष्कर्ष रूप में, यह कहा जा सकता है कि शिक्षक का कार्य-व्यवहार उसकी मनो-वैज्ञानिक स्थिति और उसके कार्य पर्यावरण द्वारा निर्धारित होता है। यह शिक्षण-व्यवसाय के लिए प्रशंसनीय है कि जिन्हें अधिकांश व्यक्ति न्यूनतम सुविधाएं मानते हैं उनसे भी वंचित होते हुए इस व्यवसाय के लोगों ने हमारे आर्थिक विकास के लिए विशाल और सक्षम तकनीकी जनशक्ति पैदा की है। फिर भी, यदि हम समाज में परिवर्तन लाना चाहते हैं तो हमें यह स्वीकार करना होगा कि शिक्षण-व्यवसाय केवल आर्थिक विकास हेतु जनशक्ति तैयार करने के लिए ही अत्यधिक महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि इससे भी अधिक यह सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों के विकास के लिए महत्वपूर्ण है। अतः यह आवश्यक है कि शिक्षा-प्रणाली की कार्यकुशलता का स्तर बहुत ऊंचा हो और शिक्षण-व्यवसाय का कार्य-व्यवहार ऊंचे दर्जे का हो। यदि शिक्षक को अपनी वृत्ति में गौरव अनुभव करना है और अपने काम के प्रति निष्ठा की भावना रखनी है तो यह आवश्यक है कि उसका कार्य पर्यावरण बौद्धिक चुनौतियां वाला हो, उसके कार्यकलापों के लिए जो निर्णय महत्वपूर्ण हों उन्हें लेने में उस का भी सहयोग हो और यह भी कि समय-समय पर उसे जो शिकायतें हों उनका तुरंत निवारण किया जाए। यदि हम उनके कार्य-निष्पादन में उत्कृष्टता की उम्मीद करते है तो हमें वे भौतिक और मनोवैज्ञानिक परिस्थितियां जो उत्कृष्टता-प्राप्ति को संभव बनाती हैं पैदा करने के लिए तैयार रहना चाहिए। आज जो परिस्थितियां मौजूद हैं, वे सभी शिक्षकों के लिए अलग-अलग हैं किंतु वे इस दिशा में हमारी विगत की असफलता का प्रमाण हैं।

व्यावसायिक उत्कृष्टता—भर्ती और वृत्तिक विकास

6.01 शिक्षकों की व्यावसायिक उत्कृष्टता और उनकी प्रतिष्ठा

भौतिक जीवन का उपयुक्त स्तर शिक्षकों की स्थिति को ऊंचा उठाने के लिए एक आवश्यक शर्त माना जाता है किंतु अपने आप में यह भी वांछित परिणामो की प्राप्ति नहीं करवा सकता। प्रतिष्ठा केवल व्यावसायिक उत्कृष्टता से ही बनाई जा सकती है। शिक्षण की दुकान लगाकर छात्रों को बासी जानकारी देना और पश्चिम की पुरानी पड़ गई पुस्तकों के विवेकहीन रूपान्तरणों को धड़ल्ले के साथ बेचने से कई शिक्षक काफी सम्पन्न हो गए हैं किन्तु इस तरह से प्राप्त दूषित धन से शिक्षक प्रतिष्ठा नहीं खरीद सकते। छात्रों में छठी ज्ञानेन्द्रिय होती है जिसकी सहायता से वे असली और नकली में भेद कर सकते हैं। सौभाग्य की बात है कि सभी क्षेत्रों में और सभी संस्थाओं में ऐसे बहुत से अध्यापक हैं जिन्हें वे देख कर आदर की भावना पैदा होती है और जिनका समाज में बहुत सम्मान हैं। इस सम्मान के पात्र वे अनिवार्यतः या अपनी व्यावसायिक उत्कृष्टता के कारण बने हे। भौतिक जीवन का स्तर प्रतिष्ठा के लिए आवश्यक शर्त है किंतु व्यावसायिक उत्कृष्टता इसके लिए उपयुक्त शर्त है।

6.01.01 व्यावसायिक उत्कृष्टता लाने वाले कारक.—यद्यपि शिक्षकों की व्यावसायिक उत्कृष्टता का अनुमान नहीं लगाया जा सकता किंतु इसे रहस्यमय गूढ़ गुण भी नहीं समझा जाना चाहिए। यह पहले से निश्चित कार्यों के निष्पादन में सक्षमता के स्तर का पर्यायवाची है और इसी अर्थ में इसका मूल्यांकन किया जाना चाहिए। यह स्तर बहुत से कारको की अन्योन्यक्रिया से निर्धारित होता है। सर्वप्रथम, परिणामोत्पादक श्रृंखला में सबसे पहली कड़ी इस वृत्ति को अपनाने वाले व्यक्तियों की गुणवत्ता माना जा सकता है। अतः शिक्षक का यह प्रथम प्रवेश जिन क्रियाविधियों और प्रक्रियाओं से नियंत्रित होता है वे अध्यधिक महत्वपूर्ण हैं। दूसरे व्यावसायिक कौशलों में प्रवेश-पूर्व और प्रवेशोपरान्त प्रशिक्षण, और मूल्यों के बोध और मूल्यांकन में गहनता व्यावसायिक उत्कृष्टता के आवश्यक गुण माने जाएंगे। तीसरे, अध्याप चूंकि पूरे जीवन का व्यवसाय होता है, इसलिए व्यावसायि सक्षमता पर गतिशील ढांचे में विचार किया जाना चाहिए। यह द्रुत गति से बदलते समाज में निश्चित कार्यों की निष्पाद क्षमता के बढ़ते स्तरों का अटूट क्रम होता है। शिक्षकों व्यावसायिक विकास की उपयुक्त सुविधाएं उपलब्ध करा तो आवश्यक है ही, किंतु इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बा यह सुनिश्चित करना है कि "कैरियर" विकास व्यावसायि विकास का अनुषांगिक हो और वह श्रृंखलाबद्ध रूप उसके साथ मिल जाए। चौथे, अध्यापन वृत्ति के अन्दर औ अध्यापन तथा अन्य व्यवसायों के बीच अध्यापकों की अपेक्षाकृ अधिक सक्रियता, और संस्था के अन्दर से ही नियुक्तियां क लेने के कुप्रभावों को न्यूनतम करना—इन दोनों से शिक्ष व्यवसाय में नवीनता और गतिशीलता आती है।

6.01.02 व्यावसायिक उत्कृष्टता की मांगें.— संक्षेप व्यावसायिक उत्कृष्टता की यह मांग है कि अध्यापन-वृ की ओर निष्ठावान, सक्षम और प्रेरणावान व्यक्ति आकर्षि हों, इसमें नए आए व्यक्तियों के उचित प्रशिक्षण की व्यवस हो, और यह "कैरीयर" और व्यावसायिक विकास को ए दूसरे के साथ मिलाए और उन्हें एक व्यवस्था में बनाए रखे

6.02 शिक्षकों की भर्ती

देश में व्यावसायिक उत्कृष्टता वाला शिक्षक समूह इसके लिए यह आवश्यक है कि इस व्यवसाय की ओर सक्ष और प्रतिभाशाली व्यक्ति आकर्षित हों। इस संदर्भ में प लब्धियां और कार्य की स्थितियां काफी महत्वपूर्ण हैं कि

जाती है । अतः यह स्पष्ट है कि कोई ऐसा तरीका निकालना ही होगा जिससे यह सिद्ध हो कि न केवल न्याय किया जा रहा है बल्कि न्याय किया गया प्रतीत भी हो रहा है ।

(ख) **राष्ट्रीय कसौटी—अखिल भारतीय योग्यता परीक्षा**—आयोग के साथ हुई चर्चाओं के दौरान बहुत से शिक्षकों ने अन्तः विश्वविद्यालयीय तुलना की समस्या पर काबू पाने और यह सुनिश्चित करने के लिए उपाय सुझाए है कि संदिग्ध शैक्षिक रिकार्ड वाले व्यक्तियो को संकाय में, विपयतैर आधारों पर नियुक्त न किया जाए । तकनीकी दृष्टि से सक्षम तथा ऊंचे दर्जे की विश्वसनीयता वाले एक राष्ट्रीय निकाय के तत्वावधान में, प्रत्येक विषय में अखिल भारतीय स्तर पर योग्यता परीक्षा ली जा सकती है और इसमे निश्चित निवेदन-रेखा से ऊपर के ग्रेड पाने वाले उम्मीदवार को देश के किसी भी कालेज अथवा विश्वविद्यालय मे प्राध्यापक के पद पर नियुक्ति के लिए योग्य-पात्र माना जाना चाहिए । यहां यह सुझाव नही किया जा रहा कि संकाय में नियुक्तियां इसी परीक्षा के आधार पर की जाएं । विश्वविद्यालय कालेज, संकाय मे नियुक्तियां सम्बद्ध संविधियों और अध्यादेशों के अनुसार चयन समितियो के माध्यम से करे, किंतु यह अवश्य होना चाहिए कि अध्यापक बनने की अभिलाषा रखने वाला प्रत्येक नागरिक आरंभिक स्तर पर, राष्ट्रीय मापदण्ड पर पूरा उतरे । विभिन्न प्रकार की असमानताओं के प्रतिकार के लिए प्रणाली में सुरक्षात्मक पृथक्करण लाया जा सकता है । चूंकि प्रथम नियुक्ति के लिए डाक्टरेट आवश्यक माना गया है और चूंकि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग तथा वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद् इस स्तर पर अध्यैतावृत्तियो के लिए एक परीक्षा का आयोजन करता है, इसलिए इसमे उम्मीदवार को जो भी ग्रेड मिले उसके आधार पर देश के कालेजों तथा विश्वविद्यालयों में प्राध्यापक के पद के लिए उपयुक्त उम्मीदवारों की सूची तैयार की जा सकती है । यह ठीक है कि प्रत्येक विषय में अखिल भारतीय परीक्षा का आयोजन काफी जटिल है । इसलिए यह सुझाव है कि यदि यह प्रस्ताव इस तरीके से कार्यान्वित किया जाए कि योग्यता-परीक्षा अकादमिक और तकनीकी दृष्टियों से विश्वसनीय, विधिमान्य और तुलनीय हो जाए तो फिर देश के विश्वविद्यालयों और कालेजो मे उच्च प्रतिभा वाले व्यक्तियों के प्रवेश को नियमित करने की समस्या अधिकांशतया हल हो जाएगी और ऊंचे दर्जे की अन्तःक्षेत्रीय गतिशीलता वाले अकादमिकों का एक राष्ट्रीय संवर्ग बनाने का स्वप्न भी पूरा

हो जाएगा। हमारी यह सिफारिश है कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को शिक्षकों के लिए न्यूनतम अर्हताएं निर्धारित करने के अपने विनियम मे यह शामिल कर लेना चाहिए कि उम्मीदवार के लिए किसी एक विषय की राष्ट्रीय परीक्षा के सात सूत्री पैमाने पर कम से कम बी + ग्रेड में उत्तीर्ण होना आवश्यक है। यह विनियम दो वर्ष की अवधि में लागू कर दिया जाना चाहिए।

6.02.04 ग्रहण क्षेत्र का विस्तार और विश्वविद्यालयों द्वारा अन्दर से ही नियुक्तियां कर लेने को न्यूनतम करना.— अखिल भारतीय परीक्षा के आधार पर भावी शिक्षकों की छंटाई का एक अतिरिक्त लाभ यह है कि भरती का क्षेत्र बड़ा हो जाता है और विश्वविद्यालयों द्वारा अपने अन्दर से नियुक्तियां करने की प्रथा जो काफी विकट रूप से बढ़ गई है को न्यूनतम किया जा सकता है। केंद्रीय विश्वविद्यालयो के कार्य-संचलन की जांच के लिए स्थापित एक समिति का हाल ही का मूल्यांकन यह था कि एक विश्वविद्यालय में अपने अंदरसे नियुक्तियां करने का अनुपात प्रथम स्तर की नियुक्तियों के मामले मे 85 प्रतिशत और संबद्ध राज्यों तथा आसपास के राज्यो से आए संकाय-सदस्यों के मामले मे 92 प्रतिशत था। यदि केंद्रीय विश्वविद्यालयों की स्थिति यह है तो फिर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि राज्यों के विश्वविद्यालयों और कालेजों में स्थिति कितनी भयानक होगी। ग्रहण-क्षेत्र (कैचमेंट एरिया) के सीमित होने का अकादमिक विकास पर, प्रारंभिक स्तर पर निषेधात्मक प्रभाव पड़ रहा है विशेषतया तब जबकि इससे नये पाठ्यक्रमों को लाने तथा अनुसंधान के क्षेत्र में रुकावटें पैदा होती हैं, विचारों का प्रतिनिषेचन मंद हो जाता है और सामान्यतया पिटे पिटाए रास्ते पर ही कार्य होता है। बहुत से शिक्षाविदों ने इसका जोरदार समर्थन किया है कि अध्यापकों की अखिल भारतीय स्तर पर नियुक्तियों से राष्ट्रीय एकता की भावना बढ़ेगी। अत: हम यह सिफारिश करते हैं कि प्रारम्भिक स्तर पर भरती किए गए कम से कम 25 प्रतिशत अध्यापक उस राज्य से बाहर के होने चाहिए जिसमे उन्हें भरती किया गया है। शिक्षण-माध्यम के प्रश्न को लेकर हमारा यह सुझाव है कि इस तरह से भरती किए गए अध्यापको को दो वर्ष के अन्दर भाषा प्रवीणता प्राप्त करने का अवसर दिया जाना चाहिए।

6.02.05 प्रवेश प्रक्रिया में अनुचित तरीकों को रोकना.— यद्यपि अखिल भारतीय योग्यता परीक्षा से संकाय-नियुक्तियों की योग्यता के स्तर में काफी सामान्य सुधार हो सकता है, फिर भी भाई-भतीजावाद, प्रांतीयता और अवांछनीय प्रभावों तथा हस्तक्षेपों जैसी बुराइयों को दूर करने के लिए प्रवेश-पद्धतियों के अनुचित तरीकों को बंद करने की आवश्यकता है। नियुक्ति-प्रक्रिया इतनी जटिल और समय लेने वाली है कि इससे बड़ी संस्था में पद रिक्त रह जाते हैं। ऐसी स्थि[illegible] कम योग्य व्यक्ति पिछले दरवाजे से प्रवेश पाने का ला[illegible] उठा जाते हैं और तदर्थ तथा अस्थायी नियुक्तियों के द्वा[illegible] व्यवसाय में आ जाते हैं। इस तरह की नियुक्तियों को कि[illegible] भी हालत में एक वर्ष की अवधि से अधिक नहीं बढ़ाया जाना चाहिए।

6.02.06 विज्ञापन.—विश्वविद्यालय अनुदान आयोग [illegible] सेन समिति ने यह सिफारिश की कि विश्वविद्यालय [illegible] के चयन खुली भर्ती द्वारा होने चाहिए, जिसमें रिक्त पदों [illegible] विज्ञापित किया जाए और अखिल भारतीय आधार पर च[illegible] किया जाए। स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि अधिकां[illegible] मामलो में इस सलाह को नहीं माना गया। अक्सर पदों [illegible] स्थानीय समाचार पत्रों में विज्ञापित किया जाता है और कि[illegible] अखिल भारतीय विज्ञापन के माध्यम से पूरे राष्ट्रीय क्षेत्र [illegible] उसे प्रचारित करने का कोई व्यवस्थित प्रयत्न नहीं किया गया [illegible] नियुक्ति-प्रक्रियाओं में सुधार करने की दिशा में अखि[illegible] भारतीय विज्ञान को महत्वपूर्ण कदम माना जाना चाहिए।

(क) किसी उपयुक्त अभिकरण (जैसे भारतीय विश्व-विद्यालय संघ) द्वारा एक पाक्षिक रोजगार बुलेटि[illegible] निकालने की सिफारिश की गई है और देश के सभी संकाय पदों को इसमें विज्ञापित किया जाना चाहिए। सभी संस्थाओं और इच्छुक व्यक्तियों को इसका ग्राहक बनना चाहिए। इस प्रकार का बुलेटिन वित्तीय तौर पर विकासक्षम होगा और इसके लिए किसी प्रकार की आर्थिक सहायता की जरूरत नहीं पड़ेगी। यद्यपि विश्वविद्यालय कालेज को इस बात की पूरी स्वतंत्रता होगी कि वह अपनी इच्छानुसार अन्यत्र कहीं भी विज्ञापन दे सकता है परन्तु उनके लिए यह अनिवार्य बना दिया जाए कि वे ए[illegible] बुलैटिन के द्वारा विज्ञापन अवश्य दें। इस तथ्य को व्यापक रूप से प्रसारित किया जाए ताकि संकाय पदों की तलाश करने वाला प्रत्येक व्यक्ति यह जान जाए कि इस प्रकार की सूचना उसे कहां से प्राप्त हो सकती है।

(ख) अपना आवेदन-पत्र भेजने के लिए उम्मीदवार को दिए जाने वाले समय का ध्यान रखना भी आवश्यक है। किसी भी हालत में, यह पन्द्रह दिन से कम नहीं होना चाहिए, यद्यपि इसके लिए तीन सप्ताह का नियम माना जाना चाहिए। कुछेक मामलों में यह अवधि चार सप्ताह की भी हो सकती है। दूसरे शब्दो में, समयावधि दो से चार सप्ताह के बीच होनी चाहिए।

6.02.07 **आवेदन फार्म.**—अलग-अलग विश्वविद्यालयों के अलग-अलग आवेदन फार्म हैं। यही नही, कई विश्वविद्यालय फार्म भेजने के लिए कुछ राशि भी लेते हैं। कई मामलों में, आवेदन पत्रों के लिए भेजे गए पत्रों पर समय पर कार्रवाई नहीं होती और उम्मीदवार को सभी प्रकार की औपचारिकताए पूरी करने के लिए बिल्कुल समय ही नही मिलता। ऐसे भी उदाहरण मिले है जहां इस प्रकार के पत्रों का उत्तर ही नही दिया गया और इस प्रकार प्रत्याशित उम्मीदवार को नियुक्ति के लिए विचार किए जाने से वंचित रखा गया। हम यह सुझाव देना चाहेंगे कि आवेदन पत्र को मानकीकृत किया जाना चाहिए। प्रोफार्मा का मसौदा संलग्न है। इस प्रोफार्मा को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और भारतीय विश्वविद्यालय संघ आपस में विचार-विमर्श करके अन्तिम रूप दे सकते हैं। ये आवेदन पत्र सभी कालेजों में टोकन राशि जैसे एक रुपया अदा करके उपलब्ध होने चाहिए।

6.02.08 **उम्मीदवारों की एक छोटी सूची तैयार करना.**—साक्षात्कार के लिए बुलाए जाने वाले उम्मीदवारों की एक छोटी सूची तैयार करना एक पेचीदा काम है। अधिकांश विश्वविद्यालयों में अपनाई गई प्रक्रिया के अनुसार सभी आवेदन पत्र विभागाध्यक्ष को भेज दिए जाते हैं। कुछेक अन्य मामलों मे वह संकाय के डीन से परामर्श करने के बाद कार्रवाई करता है। यदि वह स्वयं ही डीन है, तो किसी दूसरे व्यक्ति को भी यह जिम्मेदारी सौंपी जाती है। ये दोनों व्यक्ति साक्षात्कार के लिए बुलाए जाने वाले उम्मीदवारो के लिए कोई कसौटी तैयार करते हैं। इस कसौटी पर खरे उतरने वाले सभी उम्मीदवारों को साक्षात्कार के लिए आमंत्रित किया जाता है।

(क) यद्यपि एक विधा से दूसरी विधा तथा एक संस्था से दूसरी संस्था के बीच स्थितियां भिन्न-भिन्न हो सकती हैं, फिर भी निम्नलिखित निर्देशक सिद्धान्त सुझाए जा सकते हैं ;

(i) छोटी सूची तैयार करने का कार्य कभी भी क्लर्कों को नहीं सौंपना चाहिए। यह निर्णय अनिवार्य रूप से अकादमिक है और इसलिए इसका निर्णय अवश्य ही अकादमिक व्यक्तियों को ही लेना चाहिए।

(ii) ऐसे सभी उम्मीदवारों को उस छोटी सूची में शामिल कर लिया जाना चाहिए जिन्होंने प्रस्तावित अखिल भारतीय परीक्षा उत्तीर्ण कर ली हो और जो विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के नियमों को पूरी करते हों। यदि ऐसे उम्मीदवारों की संख्या सात से अधिक हो तो एक पद के लिए योग्यता के आधार पर प्रथम सात उम्मीदवार को साक्षात्कार के लिए छांटा जाना चाहिए। यदि पदों की सख्या अधिक हो तो पदों की संख्या के लगभग तीन गुना उम्मीदवारों को साक्षात्कार के लिए बुलाया जाना चाहिए।

(iii) उम्मीदवारों की सूची तैयार करने की कसौटी का स्पष्ट उल्लेख जीवनवृत्त शीटों पर किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, यह भी प्रमाणित किया जाना चाहिए कि यह कसौटी पहले अपनाई गई कसौटी के ही अनुरूप है, यदि ऐसा न हो तो उसे बदलने के कारणों का उल्लेख होना चाहिए, और दूसरा यह कि इन सभी उम्मीदवारों को आमंत्रित किया गया है जो इस कसौटी के अनुसार योग्य हैं।

6.02.09 **विशेषज्ञों का चयन.**—योग्यता पर आधारित चयन के लिए विशेषज्ञों का चयन और चयन समिति की बैठकों में उनकी वास्तविक उपस्थिति महत्वपूर्ण है। अलग-अलग विश्वविद्यालयो मे विशेषज्ञो का पैनल अलग-अलग तरीके से बनाया जाता है। चूंकि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और भारतीय विश्वविद्यालय संघ ने अब सभी विश्वविद्यालय के स्टाफ की सूची तैयार कर ली है, इसलिए इसे मास्टर पैनल के रूप में काम में लाया जाना चाहिए। चूंकि प्रत्येक विषय में बहुत सी विशेष शाखाएं होती हैं और किसी विभाग को या किसी पद के लिए विशेष प्रकार की शाखा के व्यक्ति की जरूरत होती है, तो दो वर्षों में एक बार विभाग के विशेष हितों को पहचान कर उस क्षेत्र के विशेषज्ञों को, मास्टर पैनल में से छांटना, उचित होगा। चयन समिति की बैठक में आमंत्रित किए जाने वाले विशेषज्ञो का कथन कुलपति के अधिकार मे होना चाहिए। हम कुलाधिपति द्वारा इस कार्य को करने के पक्ष में नही है, क्योंकि एक तो कुलपति को इस प्रकार के विश्वास के योग्य समझा जाना चाहिए और दूसरे हो सकता है कि कुलाधिपति अन्य कार्यों मे व्यस्त हों और उसके कारण, वास्तविक चयन उसके कार्यालय के उन व्यक्तियों द्वारा ही किया जाए, जिनके पास अपेक्षित योग्यता और विवेक होना मुमकिन नही है।

6.02.10 **चयन समिति का गठन.**—कुछ विश्वविद्यालयों में, कार्यकारी परिषद् या सिंडिकेट भी चयन समिति में सदस्य मनोनीत करता है। अक्सर ऐसा व्यक्ति अकादमिकेतर व्यक्ति होता है। हमारे मतानुसार, अध्यापकों का चयन अनिवार्य रूप से एक अकादमिक कार्य है और इसलिए, चयन समिति में, अकादमिकेतर व्यक्ति को मनोनीत करना तुरंत बंद कर दिया जाए।

(क) बाहरी विशेषज्ञों का भाग लेना और अकादमिकेतर व्यक्तियों को हटाया जाना, कालेज की चयन समिति के मामले में भी लागू किया जाना चाहिए। बाह्य व्यक्ति का अभिप्राय विश्वविद्यालय से बाहर का व्यक्ति है, न कि कालेज के बाहर का व्यक्ति।

† परिशिष्ट 'क'

केन्द्रीय विश्वविद्यालय के संबंध में, केन्द्रीय विश्वविद्यालयों के कार्यकलाप की जांच करने के लिए नियुक्त की गई समिति का निम्नलिखित कथन उपयुक्त है और इसे ध्यान में रखा जाना चाहिए : "हमें यह जानकर खेद है कि यद्यपि कालेज शिक्षकों की अहर्ताएं और वेतनमान विश्वविद्यालयों में नियुक्त किए शिक्षकों के समान हैं, किन्तु अधिकांश नियुक्त किए गए व्यक्ति ऐसे हैं जिन्होंने अपनी स्नातकोत्तर डिग्रियां दिल्ली विश्वविद्यालय से प्राप्त की हैं। समिति जिन खास व्यक्तियों से मिली, उनसे प्राप्त प्रमाणों के अनुसार, चयन समितियों के गठन और संबंधित विभागाध्यक्षों द्वारा अपनाई गई भूमिका के कारण ऐसा हुआ। हमें बताया गया कि शैक्षिक वर्ष के प्रारम्भ में, जब विभिन्न कालेजों द्वारा लेक्चरारों के पद विज्ञाप्ति किए जाते हैं, तो विश्वविद्यालय के संबंधित विभागाध्यक्ष (जिनको उसी विभाग के एक अन्य अध्यापक विशेषज्ञ के रूप में सहायता देते हैं) चयन होने से पहले ही, ऐसे व्यक्तियों की सूची बना लेते हैं, जिन्हें किसी विशेष कालेज में भर्ती किया जाना है। इसलिए हम सिफारिश करते हैं कि चूंकि कालेजों और विश्वविद्यालयों के लैक्चरारों के वेतनमान एक-समान है और उनकी योग्यताएं भी समान ही हैं, इसलिए चयन समितियों का गठन विशेषतः विशेषज्ञों की नियुक्ति, उसी आधार पर होनी चाहिए जिस पर विश्वविद्यालयों में लेक्चरारों की नियुक्ति के लिए चयन समिति का गठन होता है।"

(ख) अतीत में, लेक्चरारों और रीडरों के लिए दो-दो और प्रोफेसरों के लिए तीन विशेषज्ञों को आमंत्रित किया जाता था। हमें जानकारी मिली है कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने अब यह सिफारिश की है कि प्रत्येक मामले में तीन विशेषज्ञ बुलाए जाने चाहिए और कोरम को इस प्रकार परिभाषित किया जाना चाहिए ताकि कम से कम दो विशेषज्ञों की उपस्थिति अपरिहार्य हो जाए। हम इस सिफारिश के पक्ष में हैं। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने एक अन्य सिफारिश यह सुनिश्चित करने के लिए परिचालित की है कि "आंतरिक" उम्मीदवार अपनी स्थिति के कारण अनुचित लाभ प्राप्त न कर लें, इसलिए यह अपेक्षा की जाती है कि विश्वविद्यालय के अपने विभागाध्यक्ष/डीन उपस्थित नहीं होने चाहिए। यद्यपि हम ज्यादा न कहकर यही कहेंगे कि हम विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की चिंता से सहमत हैं। वास्तव में, प्रथम स्तर की नियुक्ति किसी भी प्रकार के पक्षपात से मुक्त होनी चाहिए और पूर्णतया योग्यता पर आधारित होनी चाहिए।

6.0 2.11 **साक्षात्कार की तिथि.**—कुछ मामलों में, कभी-कभी साक्षात्कार की तिथि में चालबाजी की जाती है, और उसके लिए जो कारण दिया गया है, उसके लिए गहरी छानबीन नहीं की जा सकती। इस स्थिति से निपटने के लिए हम यह प्रस्तावित करना चाहेंगे कि अगर विलम्ब दो महीने से अधिक या इसके आसपास हो, तो इस विलंब का लिखित कारण चयन समिति की बैठक में दिया जाए और कार्यकारी परिषद्/सिंडिकेट को उस समय दिया जाए जब उसे मामले की रिपोर्ट दी जा रही हो।

(क) इस समस्या का दूसरा महत्वपूर्ण आयाम यह तथ्य है कि नियुक्तियां प्रत्याशित रिक्त पदों को ध्यान में रखकर पहले से ही नही की जाती अपितु कभी-कभी तो रिक्त पद हो जाने के बहुत बाद नियुक्तियां की जाती हैं। यह एक सूचित अनुमान है कि आमतौर पर किसी रिक्त पद को भरने में लगभग एक वर्ष लग जाता है। इस बीच, अस्थायी और तदर्थ नियुक्तियां कर ली जाती हैं, जो अवास्तविक दावे उत्पन्न करती है और अक्सर वर्षों तक चलती रहती है। इसलिए, नियुक्ति-प्रक्रिया को ठीक समय पर हाथ में लेना चाहिए और इसे ठीक समय पर पूरा करना चाहिए। अधिकांश मामलों में, चुने गए व्यक्तियों को कार्यभार ग्रहण के लिए पर्याप्त समय नही दिया जाता। इससे भी विभाग में एक प्रकार की अनिश्चितता की स्थिति उत्पन्न होती है। थोड़ी सी दूरदृष्टि और आयोजन से ऐसी समस्याएं हल हो जाती है।

6.0 2.12 **चयन समिति की बैठक.**—चयन की कसौटी क्या होनी चाहिए ? साफ-साफ और सुस्पष्ट शब्दों में इस प्रश्न का उत्तर देना कठिन है। कोई भी कसौटी, भले ही कितनी पारिभाषित क्यो न हो, वह किसी मानवीय निर्णय का पूर्ण विकल्प नही हो सकती। चयन समिति को निम्नलिखित बातों की ओर पर्याप्त ध्यान देना चाहिए :

(क) संबंधित व्यक्ति को विषय के मूल सिद्धान्तों की पर्याप्त जानकारी होनी चाहिए। स्पष्ट है कि कोई भी उम्मीदवार अपने डाक्टरीय कार्य के सीमित क्षेत्र के बारे में विश्व के किसी अन्य व्यक्ति से अधिक जानकारी रखता है। परन्तु यह अपने आप में पर्याप्त नहीं है। किसी भी शिक्षक के लिए इस व्यापक सन्दर्भ में अपनी विशिष्ट समस्या को समझ लेना विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। इस प्रकार की जानकारी मूल सिद्धान्तों के बोध से विकसित की जा सकती है न कि कम से कम विषय में ज्यादा से ज्यादा जानते थे।

(ख) उस अवस्था में किसी भी, व्यक्ति के बारे में ज्यादा से ज्यादा यह कहा जा सकता है कि वह बहुत होनहार है। यह बात इससे स्पष्ट हो जानी चाहिए

कि उसका शैक्षिक जीवन कैसा रहा है और किस प्रकार का पर्यवेक्षण प्राप्त करने का उसे अवसर मिला है। इन दोनों बातों से उसकी योग्यता–क्षमता के स्तर और उसमें छिपी संभाव्यता का पता लगेगा। कुल मिला कर, यह नियमों की अपेक्षा निर्णय का मामला अधिक है। जिसे आमतौर पर अध्यापन-योग्यता कहा जाता है, उसे कितना महत्व दिया जाना चाहिए? लेक्चरार के स्तर पर, इस बात को पर्याप्त महत्व दिया जाना चाहिए। विचारों और सूचनाओं को प्रकट करने की क्षमता, उन्हें प्रस्तुत करने के ढंग और प्रस्तुतीकरण की सुबोधता को उच्च महत्व दिया जाना चाहिए। यदि संभव हो तो उसकी रुझान और अभिप्रेरण की भी परख की जानी चाहिए, परन्तु यह एक ऐसा क्षेत्र है जहां पर्याप्त अनुसंधान की आवश्यकता है।

(ग) किसी व्यक्ति की संप्रेषण योग्यता को किस प्रकार परखा जाए, यह एक पेचीदा प्रश्न है। सर्वाधिक निर्णायक पद्धति मे उम्मीदवार के वास्तविक निष्पादन को देखने की अपेक्षा की जाती है। जहां संभव हो, सामूहिक चर्चाएं या क्लास लेक्चरों की व्यवस्था की जानी चाहिए। यदि ये संभव न हों, तो समिति को उम्मीदवारों के साथ चर्चा के द्वारा उनकी सप्रेषण योग्यता और कठिन संकल्पनाओं को समझाने की योग्यता का मूल्यांकन करना चाहिए। हमें आशा है कि कुछेक वर्षों में यह संभव हो जाएगा कि उम्मीदवार को एक संक्षिप्त अध्यापन सत्र मे बोलने को कहा जाए और उसका वीडियो रिकार्ड बनाकर विशेषज्ञों द्वारा उसका मूल्यांकन किया जाए। यह चयन समिति के कार्य के लिए एक बहुत उपयोगी योगदान होगा।

6.02.13 **किए गए चयन की पुष्टि.**—आयोग के नोटिस में कई ऐसे उदाहरण लाए गए जिनसे यह स्पष्ट था कि चयन-प्रक्रिया की शुद्धता को दलबंदी और राजनैतिक दावपेचों द्वारा विकृत कर दिया जाता है। यह सुनिश्चित करने के लिए कि इस प्रकार की बातें न हों, हम निम्नलिखित सिफारिशें करना चाहेंगे :

(क) चयन समिति की सिफारिशों को साक्षात्कार के बाद सील कर दिया जाना चाहिए और उसे तभी खोला जाए जब कार्यकारी परिषद्/सिंडिकेट को इस मद पर विचार करना हो। तब तक, चयन समिति की सिफारिशें गोपनीय रहनी चाहिए।

(ख) किसी भी हालत में कार्यकारी परिषद्/सिंडिकेट को चयन समिति द्वारा की गई सिफारिशों को बदलने का अधिकार नहीं होना चाहिए। जैसा कि कई विश्वविद्यालयों में किया जा रहा है, कार्यकारी परिषद्/सिंडिकेट को, केवल यह अधिकार हो या तो वह चयन समिति की सिफारिशों को स्वीकार करे या अपनी टिप्पणी सहित, मामले को कुलाधिपति या विजीटर के पास भेज दें। ऐसी स्थिति में कुलाधिपति या विजीटर का निर्णय अंतिम और बाध्य माना जाता है यदि इस प्रक्रिया मे कोई कानूनी त्रुटि भी नजर आ जाए तो भी मामले को कुलाधिपति या विजीटर के पास भेजा जाना चाहिए।

6.02.14 **तदर्थ नियुक्तियां.**—नियुक्तियों पर किए गए अध्ययनों से पता चलता है कि सरकारी संस्थाओं के 22 प्रतिशत, गैरसरकारी सहायता प्राप्त संस्थाओं के 9 प्रतिशत और गैर सरकारी असहायता प्राप्त संस्थाओं के 11 प्रतिशत शिक्षकों ने तदर्थ रूप में काम किया है। सरकारी संस्थाओं के 43 प्रतिशत शिक्षकों की तुलना मे, गैरसरकारी सहायता प्राप्त संस्थाओं के 43 प्रतिशत और गैरसरकारी असहायता प्राप्त संस्थाओं के 31 प्रतिशत शिक्षकों ने अस्थायी नियुक्तियों पर कार्य किया है। अस्थायी नियुक्तियों की अवधि कई वर्षों तक हो सकती है, और वास्तव में, ऐसे मामले भी है जहां शिक्षकों ने अस्थायी नियुक्ति से आरम्भ किया और अस्थायी ही सेवा-निवृत हो गए। यह विक्षुब्ध करने वाली बात है कि इस बारे में सरकारी संस्थाएं अन्य संस्थाओं की अपेक्षा अधिक दोषी हैं।

(क) नियुक्तियों के सम्बन्ध में पर्याप्त मात्रा मे जो दांवपेंच लगाए जाते हैं, वे तदर्थ आधार पर की गई नियुक्तियों से संबंधित हैं। ऐसे उदाहरण पता लगे हैं जहां इस प्रकार की नियुक्तियां की गई और वे वर्षों चलती रहीं। आमतौर पर, इस श्रेणी से संबंधित अधिकाश व्यक्ति अकादमिक रूप मे घटिया हैं और उन्हें संकाय मे पीछे के दरवाजे से लाया जा रहा है। या तो साक्षात्कारों मे जानबूझ कर विलम्ब कर दिया जाता है ताकि वे अनुभव का दावा कर सकें या फिर कभी-कभी किसी विशेष व्यक्ति को हटा कर उसे फिर से तदर्थ आधार पर लगे रहने की इजाजत दे दी जाती है ताकि वह कई वर्षों का अनुभव होने का दावा कर सके। इसलिए, इस सबध मे अपनाई जाने वाली प्रक्रियाओं को विशिष्ट रूप से परिभाषित करने की आवश्यकता है ताकि इसमें व्याप्त दुरुपयोगों से बचा जा सके।

(i) किसी आपातकालीन स्थिति में तदर्थ नियुक्ति तीन महीने की अधिकतम अवधि के लिए की जा सकती है। जब किसी तदर्थ नियुक्ति को जारी रखा जाना हो, तो यह चयन समिति द्वारा होना चाहिए, जिसमे वे सभी सदस्य होने चाहिए जो वास्तविक रूप में नियमित चयन समिति की बैठक में होते। केवल वही सदस्य इसमें नही होंगे जो बाहरी विशेषज्ञ है। यदि यह नियुक्ति किसी निश्चित रिक्ति के लिए की जा रही है तो नियुक्ति प्रक्रिया को शीघ्र निपटाया जाना चाहिए ताकि तदर्थ या अस्थायी नियुक्ति छः महीने से अधिक अवधि तक न चलती रहे।

(ii) किसी भी व्यक्ति को, भले ही वह कितना ही योग्य क्यो न हो, किसी निश्चित रिक्ति के स्थान पर छह महीने से अधिक समय के लिए तदर्थ आधार पर नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए। यदि किसी कार्य की तत्परता को ध्यान में रखते हुए, तदर्थ नियुक्ति की अवधि को और बढ़ाना आवश्यक हो जाए तो किसी दूसरे व्यक्ति को रखा जाना चाहिए न कि उसी व्यक्ति को। स्पष्ट शब्दों मे, कोई भी व्यक्ति छः महीने से अधिक तदर्थ नियुक्ति के अनुभव का दावा प्रस्तुत करने के योग्य नहीं होना चाहिए।

(iii) तदर्थ नियुक्तियां केवल उन्ही उम्मीदवारो को ही दी जानी चाहिएं जो नियमित पदो के उपयुक्त उम्मीदवारों के पैनल पर हों और वे न्यूनतम योग्यताएं पूरी करते हों।

(iv) विश्वविद्यालय द्वारा अपनी कार्यकारी परिषद्/सिंडिकेट को प्रतिवर्ष एक विवरण भेजना चाहिए जिसमें निश्चित रिक्तियों के स्थान पर छः महीने से अधिक अवधि के लिए की गई सभी तदर्थ/अस्थायी नियुक्तियों का विवरण हो। इसमें प्रत्येक मामले के कारण का भी उल्लेख करना चाहिए।

6.03 शिक्षकों का प्रशिक्षण

यह आवश्यक है कि अध्यापन व्यवसाय मे प्रवेश करने वाला व्यक्ति पर्याप्त रूप में प्रशिक्षित हो, ताकि वह उन सभी कार्यों का भली भांति निष्पादन कर सके, जिनकी उससे आशा की जाती है। विधि, चिकित्सा शास्त्र और वास्तुकला जैसे विभिन्न व्यवसायों में यह अपेक्षा की जाती है कि उनके प्रत्याशित अभ्यर्थी प्रशिक्षण मे कई वर्ष लगाएं। अध्यापन-व्यवसाय मे भी, बी एड/एम एड जैसे व्यावसायिक पाठ्यक्रम को स्कूल-स्तर के व्यवसाय में प्रवेश करने के लिए पूर्वापेक्षित माना गया है। शिक्षा के तृतीय स्तर पर अध्यापन-अधिगम आधार की विशिष्टताओं को ध्यान में रखते हुए, स्कूल-अध्यापको की तरह इस स्तर के शिक्षकों के लिए पूर्णांग प्रशिक्षण पाठ्यक्रम को आवश्यक नही समझा गया है, यद्यपि तृतीय स्तर के अध्यापकों के लिए प्रशिक्षण और पुनर्शिक्षण कार्यक्रम कई देशों मे आम होते जा रहे हैं। यह कहा जा सकता है कि स्कूल-स्तर पर शिक्षकों को तैयार करते समय उनके सारतत्व पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया जाता और विश्वविद्यालय स्तर पर उनकी अध्यापन-कला पर कोई खास ध्यान नही दिया जाता। अध्यापन-प्रशिक्षण लेने की इच्छा रखने वालो मे से बहुत कम "पैदाइशी अध्यापक" होते हैं और प्रशिक्षण से वे इस कमी को पुरा कर सकते हैं। अधिकांश व्यक्तियो के लिए कुछ न कुछ प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए ताकि वे अपने कार्यो का निष्पादन प्रभावी ढंग से कर सकें। वर्तमान स्थिति में, जिसे प्रशिक्षण-अवसरो की कमी द्वारा चिन्हित किया गया है, अध्यापन-व्यवसाय में प्रवेश करने वाले व्यक्ति अनुभव से ही सीखते हैं। जिसके परिणामस्वरूप, वे अपने अध्यापकों द्वारा अपनाई गई पद्धतियों और प्रक्रियाओं का ही मशीनी रूप से अनुकरण करते हैं और उन्हें अपने विद्यार्थियों पर लाद देते हैं, इस तरह "लेक्चर देने की" नीरस और व्यर्थ-परम्परा पीढ़ी दर पीढ़ी चलती रहती है।

(क) यदि इस प्रकार की परम्परा को सुधारना है तो यह आवश्यक है कि अध्यापकों के प्रशिक्षण के लिए उपयुक्त अवसर प्रदान किए जाएं। अध्यापकों को पूर्व-प्रवेश अवस्था में ही प्रशिक्षण दिया जा सकता है। अपने एम० फिल०/पी-एच०डी० के दौरान विषय-वस्तु का ज्ञान अर्जित करने के अतिरिक्त अर्थात्, जो इस व्यवसाय में प्रवेश करने के लिए न्यूनतम योग्यता है---प्रत्याशित अध्यापक कुछ ऐसे विशिष्ट पाठ्यक्रमों में भी प्रवेश ले सकते है जो प्रत्यक्ष रूप में अध्यापनोन्मुखी हों। किसी व्यक्ति के अध्यापन-व्यवसाय मे प्रवेश करने के तुरंत बाद अध्यापक को इस व्यवसाय और उसके मूल्यों के प्रति उचित जानकारी देने के लिए शिक्षा-शास्त्र में निपुणता, पाठ्यक्रम निर्माण, श्रव्य-दृश्य माध्यमों के उपयोग, संचारण निपुणता, शिक्षात्मक मनोविज्ञान, मूल्यांकन पद्धतियों और शिक्षा माध्यम के उपयोग से संबंधित प्रशिक्षण---पाठ्यक्रम के लिए सुविधाएं प्रदान की जानी चाहिए--जिनमे से शिक्षा-माध्यम सम्बंधी प्रशिक्षण विशेष रूप से उन अध्यापकों के लिए महत्वपूर्ण है जिनकी मातृभाषा शिक्षा-माध्यम से भिन्न है। इस प्रकार के प्रशिक्षण-पाठ्यक्रम शिक्षा सकाय द्वारा बी० एड० जैसे पाठ्यक्रम आयोजित करने की अपेक्षा अपने-अपने संकायों द्वारा अपनी अपेक्षाओं के अनुसार आयोजित किए जाने चाहिएं।

(ख) यह मानते हुए कि अध्यापन एक जीवन-पर्यन्त व्यवसाय है और ज्ञान का व्यापक भण्डार है, शिक्षकों को मात्र एकबार के आधार पर, प्रशिक्षण देना पर्याप्त नहीं है। अध्यापकों को उनके समस्त व्यवसाय-काल में समय-समय पर पुनर्प्रशिक्षण प्रदान करने की सुविधाएं दी जानी चाहिएं। इस प्रकार के प्रशिक्षण-कार्यक्रमों के लिए राज्य/क्षेत्रीय/स्तरों पर विकसित केन्द्र और/या विभाग खोले जाने चाहिएं। प्रत्येक शिक्षक ऐसे किसी एक केन्द्र/विभाग से जुड़ा हुआ होना चाहिए और उसे समय-समय पर, अर्थात् प्रत्येक पांच वर्षों में एकबार इसके कार्यक्रमों में भाग लेना चाहिए। इन कार्यक्रमों में अध्यापक की रुचि-निष्पत्ति का सख्ती से मूल्यांकन किया जाना चाहिए और इसे उसके व्यावसायिक जीवन के विकास के सन्दर्भ में आंका जाना चाहिए। इस संबंध में, मदुरै कामराज विश्वविद्यालय में स्थापित जैव-विज्ञान केन्द्र का उदाहरण दिया जा सकता है। विभिन्न विद्याओं के लिए इसी प्रकार के और अधिक केन्द्र स्थापित

करने की आवश्यकता है। अध्यापकों को उनके अपनी-अपनी विधाओं में प्रशिक्षण देने के लिए विभिन्न विश्वविद्यालयों में नियमित ग्रीष्मकालीन स्कूल भी आयोजीत किए जा सकते हैं।

6.04 वृत्तिक और व्यावसायिक विकास

किसी वृत्तिक को आकर्षक बनाने के लिए वृत्तिक विकास की सम्भावनाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। वृत्तिक जीवन प्रारम्भ करने पर ही उच्च वेतन और भत्ते तथा उन्नत नियुक्ति प्रक्रियाएं अपने आप में यह सुनिश्चित नहीं कर सकती कि निपुण और उच्च योग्यता प्राप्त व्यक्ति अध्यापन व्यवसाय की ओर आकर्षित होंगे और इस व्यवसाय मे बने रहेंगे। अध्यापकों को उनके वृत्तिक जीवन में कई चरणों में पदोन्नति के आधार पर गतिशीलता के लिए पर्याप्त और उचित अवसर प्रदान करना भी समान रूप से महत्वपूर्ण है। इन अवसरों को व्यावसायिक विकास से जोड़ा जाना चाहिए ताकि उपयुक्त प्रोत्साहन उनकी व्यावसायिक योजना के स्तर को ऊंचा उठाने में सहायक हो। इसलिए व्यावसायिक विकास के लिए पर्याप्त और उचित अवसरों को वृत्तिक विकास में महत्वपूर्ण निवेश माना जाना चाहिए। यदि वृत्तिक विकास और व्यावसायिक विकास को एक दूसरे पर आश्रित न किया गया और अनुवर्ती व्यवस्था को परस्पर न गूंथा गया, तो इससे दो परस्पर अवांछनीय स्थितियां उत्पन्न हो जाएंगी—उच्च व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त करने के बावजूद वृत्तिक जीवन में अवरुद्धता या किसी प्रकार की व्यावसायिक सफलता प्राप्त किए बिना ही अपने आप से ही पदोन्नति पा लेना। "वैयक्तिक पदोन्नतियों" की वर्तमान बाढ़, प्रथम और बाद की स्थितियों के बीच विभाजक के रूप में दिखाई देती है। कोई ऐसी पद्धति निकालने की आवश्यकता है जिसमें वृत्तिक जीवन और व्यावसायिक विकास के बीच संबन्ध हो और जो इन दोनों ही अवांछनीय लक्षणोंसे बच सके।

6.04.01 **घोर गतिरोध/अवरोध.**—अभी हाल तक अक्सर इस बात का उल्लेख किया जाता था कि कालेज के शिक्षक ऐसे व्यवसायों में आते हैं जिनमें अधिकांश व्यक्ति जिस पद पर जैसे लेक्चरर नियुक्त होते हैं और उसी पद पर सेवा-निवृत्त हो जाते हैं। यह बात विश्वविद्यालय शिक्षकों के बारे में भी सत्य है जहां उच्च स्तरीय पदों की संख्या कडाई से निश्चित की जाती है। एक बार इन पदो के भर जाने के बाद, संकाय के अन्य व्यक्ति स्तरीय व्यावसायिक विकास प्राप्त कर लेने और उच्च पद के योग्य होते हुए भी, तब तक उच्च पद प्राप्त करने की कोई आशा नहीं कर सकते जब तक कि उच्च पद प्राप्त व्यक्ति अपने पद से त्यागपत्र न दे दे या सेवानिवृत्ति न हो जाए। उच्च शिक्षा के व्यापक प्रकार के प्रारम्भिक चरण में तो यह समस्या इतनी गंभीर नहीं थी क्योंकि नई मांगों को पूरा करने के लिए उच्चतर स्तरों पर अतिरिक्त नए पद बना दिए जाते थें। किन्तु वर्तमान वर्षों में विस्तार की धीमी गति के कारण, वृत्तिक विकास के अवसर अपेक्षाकृत कम हो गए हैं।

(क) सर्वेक्षण-आंकड़ों से पता चलता है कि अध्यापको का एक बहुत बड़ा प्रतिशत उसी पद पर 10 या उससे अधिक वर्षों तक अवरुद्ध रहा। निचले आधार पर अर्थात् न केवल कालेजों में परन्तु विश्वविद्यालय के विभागों मे लेक्चररशिप के स्तर पर अवरुद्धता की मात्रा गंभीर दिखाई देती है। यह दुर्भाग्य ही है कि युवा अध्यापक, जिन्हे उच्च पदो पर लगे व्यक्तियों की अपेक्षा, अपनी व्यावसायिक योग्यता को सुधारने के लिए अधिक प्रोत्साहनों की आवश्यकता है बहुत बड़ी संख्या में इन प्रोत्साहनों से वंचित रह जाते हैं। अवरुद्धता का नकारात्मक प्रभाव विश्वविद्यालय विभागों की तुलना मे कालेजों में अपेक्षाकृत अधिक गंभीर है। विश्वविद्यालय के शिक्षकों के मामले में 45 प्रतिशत की तुलना में केवल 13 प्रतिशत कालेज शिक्षकों को ही मात्र एकबार ही पदोन्नति मिली। समय के बीतने के साथ, कालेज अध्यापकों की पदोन्नति संभावनाए और भी खराब हो गई लगती है जबकि विश्वविद्यालय के अध्यापको के मामले में कुछ सुधार हुआ है। जबकि कालेजों में लेक्चररों से वरिष्ठ शिक्षकों (अर्थात् रीडरो, प्रोफेसरो और प्रिंसिपलों) का अनुपात 1971-72 मे 6.2 : 1 से बढ़कर 1982-83 में 8.6 : 1 हो गया, विश्वविद्यालयो के मामले में यह उसी अवधि के दौरान 2.6 : 1 से कम होकर 2.0 : 1 हो गया।

6.04.02 **स्वतः वैयक्तिक पदोन्नति.**—वृत्तिक विकास और व्यावसायिक विकास की एक जैसी गति न रहने के कारण अवरोध पैदा हो जाने की पिछली स्थिति के विपरीत हाल ही में, "वरिष्ठता" के आधार पर "अपने आप वैयक्तिक पदोन्नति" प्रणाली लागू करने की प्रवृत्ति रही है, जिसमें पदोन्नत होने वाले व्यक्ति की व्यावसायिक योग्यता के स्तर को जानने की या तो कोई जरूरत नहीं समझी जाती या केवल "औपचारिकता" ही बर्ती जाती है। याद रहे कि "पदोन्नति" शब्द हाल ही मे सचिवालय से विश्वविद्यालय में आया है जिसकी एक अलग गुणात्मक प्रकृति है। यह विश्वविद्यालीय प्रणाली से भिन्न है और नौकरशाही प्रणाली से इसने घुसपैठ की है। इसलिए, यह आश्चर्यजनक है कि जो व्यक्ति विश्वविद्यालय की स्वायतता का जोरदार समर्थन करते हैं और उसमें नौकरशाही हस्तक्षेप की आलोचना करते हैं, कभी-कभी वे ही विश्वविद्यालय के अन्दर भी इस नौकरशाही प्रक्रिया के समर्थक बन जाते हैं। यह वास्तव में दुर्भाग्यपूर्ण है कि सेन समिति की सिफारिशों को काफी समय तक क्रियान्वित नहीं किया गया, जिसके परिणामस्वरूप संकाय-सदस्यों के व्यावसायिक जीवन मे बड़े पैमाने पर और एक लम्बे समय की अवरुद्धता आ गई। जब उचित समय पर यह पहचान न हुई कि कौन सा व्यक्ति योग्यता के आधार पर पदोन्नति पाने का हकदार है तो एक ऐसी स्थिति आ गई जहां योग्यता को ध्यान में न रखते हुए स्वतः पदोन्नति के लोकप्रिय प्रभावों के आगे पदोन्नति प्रणाली ने हार मान ली। अतीत में की गई त्रुटियों का आलोचनात्मक मुल्यांकन करने और पदोन्नति की अपेक्षा वृत्तिक विकास की नीति निर्धारण का अभी भी समय है। इसमें उचित सुविधाओं प्रशिक्षण के आवधिक कार्यक्रमों और विकसित अध्ययनों, और

जब कभी भी कोई संकाय-सदस्य उच्च पद के योग्य हो जाए तो उसकी जांच करने और उच्च पद उपलब्ध कराने जैसी व्यवस्था करने की आवश्यकता है। सकाय-सदस्यो को उच्चतर वेतनमान मे पद उपलब्ध कराने के लिए निम्नलिखित दो सिद्धान्त लागू किए जाने चाहिए :

(i) किसी ऐसे व्यक्ति को, जिसने निर्धारित प्रक्रियाओ के अनुसार व्यावसायिक योग्यताएं प्राप्त कर ली हो, केवल इस बात के लिए उच्चतर पद देने से रोके नहीं रखा जाना चाहिए कि उच्चतर पद उपलब्ध नही है।

(ii) व्यावसायिक योग्यताएं प्राप्त कर लेने के पश्चात् उच्चतर पद को एक पुरस्कार के रूप में माना जाना चाहिए, और, इसलिए, यह न तो अपने आपसे ही मिलने वाला होना चाहिए और न ही इसे केवल संवर्ग में बिताए गए वर्षों से ही जोड़ा जाना चाहिए। बीस वर्षों की सेवा बीस बार दोहराई गई एक वर्ष की सेवा से अलग पहचानी जानी चाहिए। अनुभव को खाली वर्षों की मात्रा ही नही मानना चाहिए।

6.04.03 **शिक्षकों की योग्यता का मूल्यांकन.**—योग्यता के स्थान पर वरिष्ठता को प्रयुक्त करने के बजाय, अध्यापको की योग्यता, जोकि उनके निर्धारित कार्यों के निष्पादन मे उनके क्षमता के स्तर में प्रतिबिम्बित होती है, का मूल्यांकन किया जाना चाहिए, और इस प्रकार के मूल्यांकन के लिए वृत्तिक विकास को आधार माना जाना चाहिए। ऐसा करने के लिए, शिक्षक के कार्य का लगातार रिकार्ड रखने की आवश्यकता है। इस उद्देश्य के लिए एक उपयुक्त *प्रोफार्मा तैयार किया जाना चाहिए। इस प्रोफार्मा मे शिक्षक द्वारा किए विभिन्न कार्यों, अर्थात् अध्यापन, अनुसधान, विस्तार और प्रशासन का लेखा होना चाहिए। अध्यापक द्वारा इसे प्रत्येक सेमेस्टर/शैक्षिक वर्ष में भरा जाना चाहिए। आत्म मूल्यांकन के इस प्रलेख को उसके योगदान के मूल्याकन का आधार होना चाहिए। विभाग/संस्था के अध्यक्ष को उसी फार्म पर अपना अभिमत लिखना चाहिए। इसके अतिरिक्त विद्यार्थियों और सहयोगियों द्वारा किए गए मूल्यांकन को भी उस पर लिखना चाहिए।

6.04.04 **व्यावसायिक विकास.**—आइए अब हम शिक्षकों के उन कुछ महत्वपूर्ण कार्यों, जिन्हें करने की उनसे अपेक्षा की जाती है, के निष्पादन स्तर पर एक नज़र डाले। सर्वेक्षण आकडों से पता चलता है कि जहा तक उनके अनुसंधान कार्य के निष्पादन का प्रश्न है, विशेषकर कालेज स्तर पर, शिक्षकों के बहुत बड़े प्रतिशत का स्तर बहुत नीचा था। बहुत मुश्किल से एक चौथाई कालेज अध्यापको ने कोई लेख प्रकाशित किया और मुश्किल से 10 प्रतिशत ने कोई पुस्तक प्रकाशित की। विश्वविद्यालीय शिक्षको में भी स्थिति अत्याधिक असंतोषजनक थी : एक तिहाई ने कोई भी लेख प्रकाशित नही किया और तीन चौथाई ने कोई भी पुस्तक प्रकाशित नही की। लेक्चररों ने बहुत कम लेख और पुस्तकें प्रकाशित की परन्तु बहुत से रीडरो और प्रोफेसरों ने भी कोई लेख या पुस्तक प्रकाशित नहीं की। इसी प्रकार, अनुसंधान मार्गदर्शन में भी अध्यापकों के बहुत कम प्रतिशत (कालेजों में 10 प्रतिशत से भी कम और विश्वविद्यालयों में 20 प्रतिशत से भी कम) ने इस कार्य का निष्पादन किया। फिर भी, पद हैसियत को ध्यान में रखते हुए, प्रोफेसरों ने रीडरों की अपेक्षा बेहत्तर निष्पादन किया और रीडरो ने लेक्चरारों की अपेक्षा बेहतर कार्य किया। फिर भी कालेजों मे, इस संबध मे विभिन्न श्रेणियों में किसी प्रकार की भिन्नता नही थी।

(क) व्यावसायिक विकास का नीचा स्तर शिक्षकों के एम० फिल० और पी-एच डी० की डिग्रियां प्राप्त करने की कम संख्या से भी प्रतिबिम्बित होता है, आकड़ों के अनुसार कालेजो के केवल 7 प्रतिशत और विश्वविद्यालयों के केवल 5 प्रतिशत शिक्षको के पास एम० फिल० और कालेज के 17 प्रतिशत और विश्वविद्यालय के 65 प्रतिशत शिक्षको के पास डाक्टरेट की उपाधियां हैं। शिक्षको ने ये डिग्रियां अधिकाशत: अपने रोजगार के दौरान ही प्राप्त की हैं, 13 प्रतिशत कालेज शिक्षकों और 47 प्रतिशत विश्वलिद्यालीय शिक्षकों ने पी० एच० डी० डिग्रिया अपने सेवा काल के दौरान ली।

(ख) सर्वेक्षण आंकडो से यह भी पता चलता है कि शिक्षकों के व्यावसायिक विकास को बढ़ाने के लिए आयोजित विभिन्न कार्यक्रमो में बहुत कम शिक्षक भाग लेते हैं। दो तिहाई से तीन चौथाई कालेज शिक्षकों ने किसी भी संगोष्ठी, ग्रीष्मकालीन स्कूल/ कार्यशाला प्रशिक्षण कार्यक्रम या अनुसंधान परियोजना में कभी भी भाग नही लिया। विश्वविद्यालीय शिक्षकों का भी एक बड़ा भाग (अर्थात् लगभग एक तिहाई से आधे तक) ऐसे कार्यक्रमों में कभी भी हिस्सा नही लेता। मुश्किल से एक चौथाई कालेज और विश्वविद्यालीय शिक्षकों ने अध्ययन छुट्टिया लीं। यद्यपि, व्यावसायिक विकास को बढ़ाने हेतु आयोजित विभिन्न कार्यक्रमों मे भाग लेने वाले लेक्चरारों, विशेषकर कालेज के लेक्चरारो का प्रतिशत काफी ऊंचा है, फिर भी यह आश्चर्यजनक बात है कि विश्वविद्यालय के विभागों के रीडरों और प्रोफेसरों का पर्याप्त प्रतिशत भी इस श्रेणी में आता है।

6.04.05 **व्यावसायिक-विकास के लिए सुविधाएं.**—व्यावसायिक विकास के लिए आयोजित किए जाने वाले विभिन्न कार्यक्रमों में अध्यापकों को अधिक से अधिक संख्या मे भाग लेना चाहिए जिससे वे अपने विभिन्न प्रकार के कार्यों को क्षमतापूर्वक कर पाने के योग्य हों सकेंगे और इस प्रकार व्यावसायिक उत्कर्ष प्राप्त कर सकेंगे। शिक्षकों के व्यावसायिक विकास से संबंधित कई सुविधाएं पहले से ही देश में विद्यमान हैं। संकाय विकास

*परिशिष्ट 'ख' के रूप में प्रोफार्मा का मसौदा संलग्न है।

के लिए ऐसे विभिन्न कार्यक्रम बनाए जाने चाहिए जो (क) शिक्षकों को अपने अध्ययन क्षेत्र में आधुनिक विकासों की जानकारी रखने और संगोष्ठियों ग्रीष्मकालीन स्कूलों, कार्यशालाओ या सम्मेलनों के द्वारा उसी या सम्बद्ध क्षेत्रों मे विशेषज्ञों के साथ विचार विमर्श करने की सुविधाएं प्रदान करते हों (ख) कम विकसित क्षेत्रों में कालेज और विश्वविद्यालयीय विभागों के शिक्षकों को, राष्ट्रीय लेक्चररो सेवानिवृत्त अध्यापकों, अतिथि प्रोफेसरों और अधिसदस्यों की सेवाओं के उपयोग जैसी योजनाओं के द्वारा विभिन्न विधाओं में विशिष्ट विद्वानों की सेवाएं प्राप्त कर सकने के योग्य बनाते हों; और (ग) राष्ट्रीय शिक्षा वृत्ति राष्ट्रीय सहयोग और अध्यापक शिक्षा वृत्ति जैसे कार्यक्रमों के द्वारा शिक्षकों को अपने सामान्य अध्यापन कार्य को छोड़कर अनुसंधान कार्य में पूरा समय लगाने और अपने अध्ययन अनुसंधान कार्यों को लिखने के योग्य बनाते हो । इस सन्दर्भ में कालेज विज्ञान सुधार कार्यक्रम (सी ओ एस आई पी) और कालेज मानविकी एवं समाज विज्ञान सुधार कार्यक्रम (सी ओ एच एस एस आई पी) का विशेष उल्लेख किया जा सकता है । ये कार्यक्रम पूर्वस्नातक स्तर पर क्रमशः विज्ञान और मानविकी सामाजिक विज्ञानों के अध्यापन में सुधार लाने के कार्य में बढ़ावा दे रहे है । हमारे विश्वविद्यालयो मे प्रत्येक वर्ष कई सौ संगोष्ठिया और कार्यशालाएं भी आयोजित की जाती हैं जिनमें अनुसंधान और विकास कार्यों का उल्लेख किया जाता है । फिर भी, यदि और भी बहुत से शिक्षकों को व्यावसायिक विकास के अवसर प्रदान करने है तो इन सभी क्रियाकलापों को बढ़ाना होगा ।

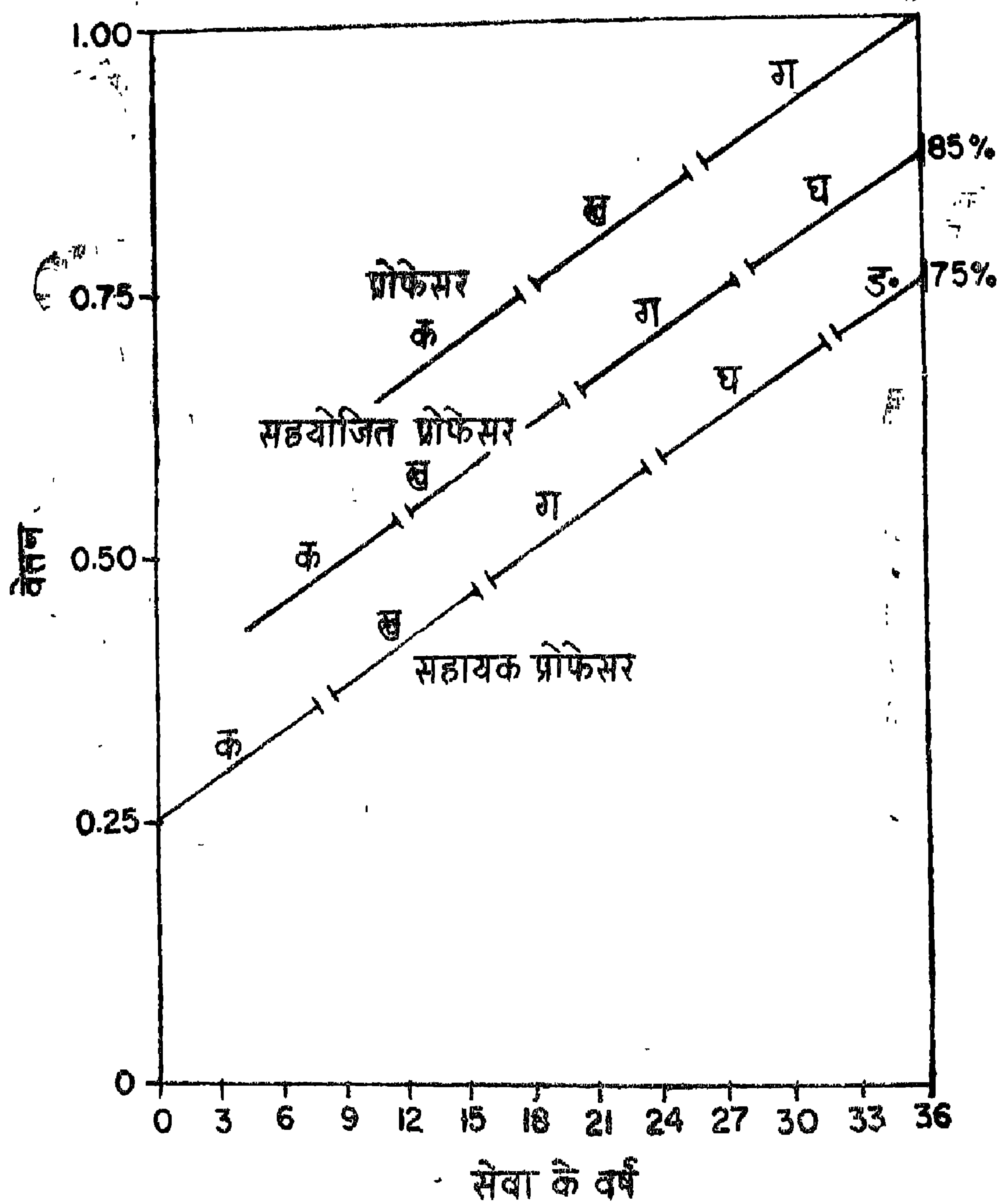
(क) चूंकि अध्यापकों की संख्या काफी ज्यादा है, इसलिए वर्तमान सुविधाओं को और बढ़ाना होगा और उन्हें उचित ढंग से वितरित करना होगा । विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, भारतीय सामाजिक विज्ञान अनुसंधान परिषद्, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् डी० एस० टी० तथा भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद् जैसे संगठनों मे भी बेहतर समन्वय स्थापित करने की आवश्यकता है ताकि शिक्षकों के व्यावसायिक विकास के लिए उन संगठनों द्वारा प्रदान की गई सुविधाओं का अधिक से अधिक प्रयोग किया जा सके । यदि आवश्यक हो, तो ऐसे शिक्षकों को अवकाश और यात्रा सुविधाएं उपलब्ध कराई जानी चाहिए, जो व्यावसायिक विकास के विभिन्न कार्यक्रमों में भाग लेना चाहते हों ।

(ख) **पुस्तकालय का स्तर**—व्यक्तिगत और संस्थागत दोनों ही प्रकार के पुस्तकालयो को शिक्षकों के कार्य निष्पादन और व्यावसायिक विकास को प्रभावित करने वाली एकमात्र सर्वाधिक महत्वपूर्ण सुविधा माना जाना चाहिए । हाल के वर्षों मे पुस्तकों की कीमतो में भारी वृद्धि हो जाने के कारण, संस्थागत पुस्तकालयों की दशा, विशेषकर कालेजों मे, अत्यधिक असंतोषजनक हो गई है और शिक्षकों के व्यक्तिगत संग्रह भी कम हो गए हैं । एक पुस्तक, जो किसी शिक्षक की आवश्यकता होती है, धीरे धीरे ऐसी विलासता बनती जा रही है जिसे केवल कुछ ही लोग खरीद सकते हैं पुस्तकों पर 50 प्रतिशत आर्थिक सहायता की प्रणाली (अधिकतम सीमा के अधीन) अधिक लाभकर सिद्ध हो सकती है । जहां तक संस्थागत पुस्तकालयों का संबंध है, उन्हें समर्थ बनाने की आवश्यकता को नकारा नहीं जा सकता । यह भी वांछनीय है कि एक ही क्षेत्र में स्थित इस प्रकार के पुस्तकालय अपनी पुस्तकों और सुविधाओं का समन्वय कर लें ताकि उनसे अधिकाधिक लाभ उठाया जा सके ।

6.04.06 **वृत्तिक विकास.**—शिक्षकों के वृत्तिक विकास की एक उचित नीति तैयार करने की आवश्यकता है ताकि उन्हें अपनी व्यावसायिक क्षमता सुधारने में प्रोत्साहन मिल सके । चूंकि वेतनमान हमारा विचारणीय विषय नही है, इसलिए हम अपनी सिफारिशें ऐसे सिद्धान्तो पर देंगे जो वृत्तिक विकास को प्रभावित करते हों । वृत्तिक विकास का एक सैद्धान्तिक विकास पथ ग्राफ 1 में दिखाया गया है ।

आरेख – 1

उच्च शिक्षा में शिक्षकों का विकास मार्ग



(क) हम सिफारिश करते हैं कि एक प्रोफेसर का उच्चतम वेतन कुलपति के वेतन के बराबर होना चाहिए, चूंकि हमारा विश्वास है कि अकादमिक कार्य में सतत उत्कृष्टता को भलीभांति पुरस्कृत किया जाना चाहिए ताकि प्रशासनिक कार्य के प्रति मोह कम हो जाए। इसलिए, ग्राफ में "1" कुलपति का वेतन है। हम यह भी सिफारिश करते हैं कि सहायक प्रोफेसर (लेक्चरर) को प्रारंभिक वेतन अधिकतम उपलब्ध वेतन के 25 प्रतिशत के आसपास होना चाहिए।

(ख) उपयुक्त प्रोत्साहन प्रदान करने और अधिकांश लोगों का एक वेतनमान से दूसरे वेतनमान में जाना संभव बनाने के उद्देश्य से, हम सिफारिश करते हैं कि कालेज और विश्वविद्यालयों में काम करने वाले प्रत्येक सहायक प्रोफेसर को सहायक प्रोफेसरों के पांच वेतनमानों में से प्रथम (क) में नियुक्त किया जाना चाहिए। आठ वर्षों की सेवा पूरी करने के पश्चात् प्रत्येक का मूल्यांकन किया जाना चाहिए और मूल्यांकन के बारे में हम जो कुछ करने जा रहे हैं, वह ग, घ और ङ वेतनमानों में प्रवेश करने वालों पर समान रूप से लागू होना चाहिए। कोई भी शिक्षक जो अपने काम का संतोषजनक ढंग से निष्पादन करता है, वह नीचे के वेतनमान से उच्च वेतनमान में जा सकने के योग्य होना चाहिए और शिक्षक का मूल्यांकन तुलनात्मक रूप में न होकर उसके व्यक्तिगत रूप में होना चाहिए। ऐसा करने का उद्देश्य यह है कि लापरवाह और अयोग्य शिक्षकों को रोका जा सके और औसत से ऊपर वाले शिक्षकों को ऊंचा उठाया जा सके। ऐसा शिक्षक जो निष्ठा के साथ अपना काम करता है और जो सामान्य निपुणता में कुछ मात्रा में अनुसंधान का अनुभव रखता है, अपनी संस्था, अपने विद्यार्थियों और समाज के प्रति अपना दायित्व समझता है, उसे ऊंचा उठाना ही चाहिए। हम सिफारिश करते हैं कि इन्हीं कसौटियों पर मूल्यांकन कड़ाई से किया जाए और किसी भी स्थिति में यह स्वतः नाममात्र का या (सांविधिक) चयन समिति को भेजे बिना नहीं होना चाहिए। इस प्रकार का मूल्यांकन तब तक नहीं किया जा सकता जब तक कि शिक्षक के कार्य निष्पादन का रिकार्ड न रखा गया हो। हमने इस उद्देश्य के लिए पहले से ही एक प्रोफार्मा तैयार करने, और इसके साथ ही आत्म मूल्यांकन, विद्यार्थी और सहयोगी मूल्यांकन तथा प्रिंसिपल या विभागाध्यक्ष की टिप्पणी का सुझाव दिया है।

(ग) हम यह सिफारिश भी करते हैं कि जब कोई होनहार अध्यापक किसी विशेष वेतनमान में 6 वर्ष पूरा कर ले तो उसे विशेष मूल्यांकन (मूल्याकन रिकार्ड सहित) के लिए अपना बायोडेटा और अपनी उपलब्धियों का ब्यौरा प्रस्तुत करने का हक होना चाहिए। सांविधिक चयन समिति द्वारा विशेष मूल्यांकन इस शर्त पर किया जाना चाहिए कि कुलपति कम से कम दो अन्य विशेषज्ञों का मत प्राप्त करेगा और इसे चयन समिति को प्रस्तुत करेगा—विशेषज्ञ उस उम्मीदवार को अगले उच्चतर वेतनमान में नियुक्ति अर्थात् सहायक प्रोफेसर क से ख, या ख से ग आदि के लिए सर्वसम्मति से सिफारिश कर सकते हैं। सह प्रोफेसर के चयन के लिए यह प्रक्रिया नहीं है।

(घ) हम सिफारिश करते हैं कि सह प्रोफेसर (क) और प्रोफेसर (क) के रूप में सभी नियुक्तियां, राष्ट्रीय प्रतियोगिता परीक्षा के आधार पर बनी प्रक्रिया के अनुसार होनी चाहिए। इसकी रूपरेखा हम पहले ही बता चुके हैं।

(ङ) सह प्रोफेसर और प्रोफेसर दोनों के मामलों में, एक वेतनमान से दूसरे वेतनमान में जाने की प्रक्रिया पूरी तरह से उपर्युक्त (ग) के अनुरूप होनी चाहिए, इसमें एक वेतनमान से दूसरे वेतनमान में त्वरित गति से उन्नति भी शामिल है।

(च) हम इसके आगे यह सिफारिश करते हैं कि प्रोफेसर ग (जिसे "विशिष्ट" या "विशेष" या "राष्ट्रीय" प्रोफेसर जैसा कोई उपयुक्त शीर्ष दिया जा सकता है) के रूप में सभी नियुक्तियां विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा स्थापित राष्ट्रीय चयन समिति द्वारा की जानी चाहिए, जिनके निर्णय में उम्मीदवार द्वारा किए गए हर प्रकार के योगदान और कम से कम दो विशेष निर्णायकों के मतों को भी ध्यान में रखा जाए।

(छ) **महिला शिक्षक**

महिला शिक्षकों के मामले में, जिनके व्यावसायिक जीवन में मातृत्व और बच्चे की देखभाल की समस्याओं के कारण अवरोध उत्पन्न हो जाता है, के बारे में यहां विशेष उल्लेख करने की आवश्यकता है। यह प्रस्ताव दिया जाता है कि ऐसी महिलाओं को आयु में छूट दी जानी चाहिए और उन्हें सभी प्रकार की सुविधाएं तथा छात्रवृत्तियां और अध्ययन अवकाश जैसी व्यावसायिक विकास की सुविधाएं भी उपलब्ध कराई जानी चाहिए। महिलाओं को ऊंचे ग्रेड में पदोन्नत करने के सन्दर्भ में उनके कुल अनुभव को गिना जाना चाहिए, निरंतर सेवा को नहीं। अवरुद्ध व्यावसायिक जीवन में समस्याएं उत्पन्न होती हैं परन्तु कई देशों में ऐसे तरीके निकाल लिए गए हैं, जिनके द्वारा महिला शिक्षकों को व्यावसायिक और वृत्तिक विकास से संबंधित मामलों में कष्ट नहीं झेलना पड़ता।

6.04.07 मूल्यांकन—व्यावसायिक और वृत्तिक विकास में आवश्यक संबंध.—इस बात पर फिर बल दिया जाता है कि व्यावसायिक जीवन को दो ओर से व्यावसायिक विकास से जुड़ा होना चाहिए जहां दोनों ही एक दूसरे के पास सर्पिल बनावट में पहुंचते हैं। वृत्तिक जीवन का व्यावसायिक विकास से जुड़ा होना अत्यधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि शिक्षक उच्चतर स्तर पर अध्यापन का गुणात्मक निष्पादन इन कड़ियों पर ही निर्भर करता है।

(क) कागजों पर आयोजना रिकार्ड रखना, जांच करना और शिक्षक द्वारा किए जाने वाले वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन, व्यावसायिक और वृत्तिक विकास के बीच आवश्यक कड़िया बन सकते है।

(ख) यह एक व्यापक धारणा है और विशेषत: कालेज शिक्षक यह महसूस करते हैं कि शिक्षकों द्वारा किए जाने वाले अनुसंधान कार्यों को ऊंचे ग्रेड में रखने के सन्दर्भ में आवश्यकता से अधिक महत्व दिया जाता है और अन्य कार्यों—विशेषकर अध्यापन कार्य को कम महत्व दिया जाता है। इस शिकायत का कुछ आधार भी है। फिर भी, वृत्तिक विकास शिक्षक की चतुर्मुखी सफलता में प्रतिबिंबित हो सके और उसके साथ जुड़ सके, इसके लिए क्रमिक रिकार्ड रखा जाना आवश्यक है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए निम्नलिखित कदम उठाने की आवश्यकता है।

(i) सेमेस्टर या वर्ष में किए जाने वाले कार्य की अग्रिम योजना तैयार करना : प्रत्येक शिक्षक से अपने शैक्षिक कार्य की सेमेस्टर-अनुसार या वार्षिक योजना तैयार करने और उसे सेमेस्टर/वर्ष के प्रारम्भ से पूर्व विभाग/संस्था-अध्यक्ष को प्रस्तुत करने के लिए अनुरोध किया जा सकता है। इसमें कार्य दिवसों के अनुसार एक एल० टी० पी० योजना शामिल होनी चाहिए और इसे विद्यार्थियो मे भी परिचालित किया जाना चाहिए।

(ii) शिक्षकों के चतुर्मुखी योगदान का रिकार्ड रखना : इस कार्य को शिक्षक स्वयं अधिक प्रभावी ढंग से कर सकता है। यह सुझाव दिया जाता है कि प्रत्येक शिक्षक को एक रजिस्टर रखना चाहिए जिसमें वह अपने प्रत्येक कार्य-दिवस के क्रियाकलापों का रिकार्ड रखे। अध्यापन-कार्य के लिए यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है।

(iii) मॉनीटर करना : यह विभाग/कालेज के अध्यक्ष का दायित्व और कर्तव्य होगा कि वह सेमेस्टर/वार्षिक योजना में दिए गए समय के अनुसार कार्य की प्रगति को मानीटर करे। क्लासें चलती रहें, इस बात की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। उपस्थिति-रजिस्टरों को रखने से सम्बन्धित प्रक्रियाओं को सख्ती से लागू करने की आवश्यकता है। यह सुझाव दिया' जाता है कि इन रजिस्टरों को यदि हो सके तो प्रत्येक दिन के अन्त में और नहीं तो प्रत्येक शनिवार को अवश्य ही प्रिंसिपल के दफ्तर में पेश किया जाए और उनमें दी गई सूचना मे जो भी कमियां और खामिया दिखाई दें उन्हें अगले सप्ताह अवश्य सुधार दिया जाए।

(iv) मूल्यांकन : हमारे देश में, शिक्षा के क्षेत्र मे ही नही बल्कि अन्य क्षेत्रों में भी, व्यक्ति के कार्य निष्पादन के मूल्यांकन पर पर्याप्त बल नही दिया जाता है। सरकारी सेवा में अक्सर मूल्यांकन का प्रयोग अधीनस्थ कर्मचारियों पर नियंत्रण रखने के लिए किया जाता है। परन्तु मूल्यांकन का मुख्य उद्देश्य किसी व्यक्ति को उसकी कमियां बताना है ताकि भविष्य में उसके कार्य-निष्पादन में सुधार हो।

सामान्यतः, शिक्षा के क्षेत्र में, अध्यापक का मूल्यांकन नहीं होता, या जहां यह 'गोपनीय चरित्र पंजी' के रूप में किया जाता है, वहां यह अवैज्ञानिक और व्यक्तिपरक तरीके से किया जाता है और इसका उद्देश्य आत्म सुधार की अपेक्षा कुछ और होता है। आयोग शिक्षक के न केवल शैक्षिक क्षेत्र में ही बल्कि संस्था में उसके समग्र क्रियाकलाप के निष्पादन के लगातार मूल्यांकन पर अधिक बल देता है। इस प्रकार के मूल्यांकन में कुछ भी गोपनीय नहीं होना चाहिए। यह समय-समय पर किया जाना चाहिए और इसके बारे में संबंधित शिक्षकों को बता दिया जाना चाहिए ताकि उन्हें पता हो कि वे अपने उच्च अधिकारियों, साथियों और विद्यार्थियों की नजरों में कहां ठहरते हैं। प्रत्येक शिक्षक द्वारा किए आत्म-मूल्यांकन और उसके साथियों, वरिष्ठों तथा छात्रों द्वारा किए मूल्यांकन दोनों पर ही बल दिया जाना चाहिए।

6.04.08 प्रतिधारण, गतिशीलता, अन्तःसंवर्धन.—(क) बहुत प्रतिभावान व्यक्ति को बनाए रखने की कठिनाई—उच्च शिक्षा मे शिक्षकों की व्यावसायिक श्रेष्ठता उनके प्रतिधारण, गतिशीलता और अन्तः संवर्धन के प्रश्न से संबंधित है। केन्द्रीय सेवाओं और अन्य "आकर्षक" व्यवसायों के मार्ग में अध्यापन को एक अस्थायी टिकाव के रूप में मानने की प्रवृत्ति का व्यावसायिक श्रेष्ठता पर विपरीत प्रभाव हो सकता है। यद्यपि इस प्रकार की बाह्य गतिशीलता की सीमा का अनुमान लगाना संभव नहीं है, फिर भी इस बात के निर्धारण पर आम सहमति होगी कि यह काफी मात्रा में है। यह बात इंजीनियरिंग कालेजों में पहले से ही काफी दिखाई दे रही है। काफी मात्रा में संकाय-पद खाली पड़े है। जो बात विशेष रूप में निराशाजनक

है, वह यह तथ्य है कि अध्यापन-व्यवसाय में आने वालों की संख्या बहुत कम है। अन्य व्यवसायों की ओर 'खिंचाव' और अध्यापन व्यवसाय की ओर "विकर्षण", दोनों ही अन्तर-व्यावसायिक स्थानान्तरण की दिशा और महत्व को निर्धारित करते हैं जिसके द्वारा अध्यापन-व्यवसाय लगातार अमहत्वपूर्ण होता चला जा रहा है।

(ख) अन्तर-व्यावसायिक गतिशीलता.—एक ही व्यवसाय के अन्तर्गत, एक संस्था से दूसरी संस्था मे शिक्षकों की गतिशीलता, आमतौर पर लाभदायक समझी जाती है। यह विभिन्न संस्थाओं के विस्तृत अनुभवों की परस्पर-समृद्धि को बढ़ावा देती है। इसी से आवृत्तिमूलक अध्यापन कम होता है, अभिनव परिवर्तनों को प्रोत्साहन मिलता है और शिक्षकों की दलबंदी और गटबंदी में शामिल होने की प्रवृत्ति में कमी आती है। इस दृष्टिकोण से अध्यापन, अनुसंधान और अनुप्रयुक्त क्षेत्रों के बीच गतिशीलता और भी अधिक प्रशंसनीय है। किसी अनुसंधान संस्था या नीति मूलक अध्ययन करने वाले संगठन में कुछ वर्ष बिता लेने से संबंधित शिक्षक के अनुभव में नए आयाम जुड़ेंगे, जिससे उसके अध्यापन और अनुसंधान की कोटि सुधारने मे सहायता मिल सकती है।

(ग) व्यवसाय-अंतर्गत गतिशीलता की रुकावटों को हटाना.—शिक्षकों में व्यवसाय-अंतर्गत गतिशीलता को रोकने वाले कुछ महत्वपूर्ण पहलू नीचे दिए गए हैं:—

(क) क्षेत्रीय भाषा के प्रयोग की क्षमता पर जोर देना,
(ख) आवास-सुविधाओं की कमी,
(ग) अच्छे विद्यालयों में बच्चों के प्रवेश मे संबंधित समस्या,
(घ) एक संस्था से दूसरी संस्था में जाने के कारण सेवा-निवृत्ति के लाभों में हानि या पदोन्नति-अवसरों में कमी

यह सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाए जाने चाहिए कि अन्तर-संस्थात्मक गतिशीलता पर उपर्युक्त पहलुओं के विपरीत प्रभाव को कम किया जाए। नियुक्ति के समय शिक्षा के माध्यम में प्रवीणता पर जोर नहीं दिया जाना चाहिए। यह किया जा सकता है कि चुने गए उम्मीदवार को पद पर तभी स्थायी किया जाए जब वह दो वर्षों में उक्त भाषा में योग्यता प्राप्त कर ले। यदि शिक्षक एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाता है तो उसके बच्चों को केन्द्रीय विद्यालयों में प्रवेश दिया जाना चाहिए। सेवा-निवृत्ति लाभों और वैयक्तिक पदोन्नतियों से संबंधित नियमों को, जो गतिशीलता को रोकते हैं, इस प्रकार परिवर्तित किया जाए कि कोई भी व्यक्ति एक संस्था से दूसरी संस्था में इन लाभों को साथ ले जा सके। भारत सरकार के वर्तमान आदेश में केन्द्र सरकार द्वारा दी गई धन-राशि से चलने वाली संस्थाओं के बीच पूरे लाभ स्थानान्तरित किए जा सकते हैं। इसी प्रकार का समझौता राज्य के अंतर्गत और विभिन्न राज्यों के बीच गतिशीलता के लिए भी किया जा सकता है। शिक्षकों के लिए आवासों की भी पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिए ताकि नई संस्था में आवास की कमी गतिशीलता में बाधक न बने।

(घ) स्थानान्तरण.—गतिशीलता को जबरदस्ती किए गए स्थानान्तरणों से अलग माना जाना चाहिए। कई बार, स्थानान्तरणों से, ऐसी विधाओं में शिक्षा की गुणवत्ता बुरी तरह से प्रभावित हो जाती है जिनमें महँगे वैज्ञानिक उपकरण, सुगठित अनुसंधान दल, उपयुक्त पुस्तकालय और प्रयोगशाला की सुविधाएं निविष्ट होती हैं। यह संस्था के प्रति निष्ठा और इसकी परम्पराओं के प्रति वचनबद्धता को भी बुरी तरह प्रभावित करता है।

हाल के वर्षों में कुछ राज्यों से ऐसे उदाहरण प्रकाश में आए हैं जहां शक्तिशाली राजनीतिज्ञों ने कालेजों से विश्वविद्यालय में, राज्य के पिछड़े क्षेत्रों से शहरों में और शहरों से पिछड़े क्षेत्रों में तथा विश्वविद्यालय से कालेजों में शिक्षकों के स्थानान्तरण को पक्षपात या दण्ड के रूप में प्रयुक्त किया है। ऐसे कई उदाहरण हैं जहां दूरवर्ती मुफस्सल कालेजों के उदासीन विद्वानों को, जिनकी अनुसंधान या स्नातकोत्तर अध्यापन-कार्य में बहुत कम जानकारी है, विश्वविद्यालय के स्नातकोत्तर विभागों में लाया गया है और कुछ सुप्रसिद्ध शिक्षकों को इन दूरवर्ती क्षेत्रों में भेज दिया गया है। स्पष्ट है कि इससे शैक्षिक स्तर और विभाग के वातावरण को बुरी तरह प्रभावित होता है। अपने कृपापात्रों को पुरस्कृत करने के साधनों के रूप में भी स्थानान्तरण का उपयोग किया जाता है। स्पष्ट रूप से, यह प्रथा न केवल शिक्षा के स्तर के लिए हानिकर रही है बल्कि शिक्षकों में भी इसका विघटनकारी प्रभाव पड़ा है और इसने शक्तिशाली राजनैतिक हस्तियों की चापलूसी करने की भावना को बढ़ावा दिया है। यह हतोत्साहित करने वाली बात है और इसने शिक्षक की प्रतिष्ठा को बुरी तरह प्रभावित किया है। आयोग इस प्रकार की प्रथा पर अत्यधिक चिन्ता व्यक्त करता है और यह सिफारिश करता है कि ऐसे अनियमित स्थानान्तरण बंद कर दिए जाएं। वास्तव में, विश्वविद्यालीय विभागों से अध्यापकों का स्थानान्तरण आमतौर पर वांछनीय नहीं है। यदि स्थानान्तरण करना आवश्यक ही समझा जाए तो स्थानान्तरण के दुरुपयोग को रोकने के लिए उपयुक्त व्यवस्था की जानी चाहिए।

(ङ) अन्तः सम्वर्द्धन

(I) अन्तः सम्वर्द्धन, गतिशीलता के रास्ते में मुख्य बाधा है केन्द्रीय विश्वविद्यालय रिपोर्ट ने इस विपरित क्रिया के चिन्ताजनक परिमाण पर विशेष रूप से ध्यान आकर्षित किया है। अन्तः संवर्द्धन के तीन रूप हैं:—

(i) किसी संस्था के विद्यार्थी को वहीं शिक्षक के रूप में नियुक्ति करना;
(ii) किसी संस्था में उच्चतर शैक्षिक पदों को ऐसे व्यक्तियों से भरा जाना जो उसी संस्था में नीचे के पदों पर काम करते हों,
(iii) शिक्षकों का उसी क्षेत्र से चयन करना जिस क्षेत्र मे संस्था स्थित हो।

[illegible] ... कोई [illegible] संख्या [illegible] ... सर्वाधिक ... [illegible] देखा [illegible] कि [illegible] कोई व्यक्ति [illegible] जाता है [illegible] सीमा [illegible] जाते हैं। दूसरे [illegible] प्रतिशत [illegible] निर्धारण किया गया [illegible] और [illegible] भी [illegible] अधिकार को [illegible] से [illegible] किया गया।

[illegible] ... है। [illegible] में [illegible] [illegible] के [illegible] [illegible] भारत में [illegible] और [illegible] जाती है [illegible] और [illegible] [illegible] का [illegible] और [illegible] की [illegible] जाएगी।

अध्याय . 7

व्यावसायिक नैतिकता और मूल्य

7.01 शिक्षा, सामाजिक व्यवस्था की एक उप-व्यवस्था

शिक्षा, व्यापक सामाजिक व्यवस्था की एक उप–व्यवस्था है। यद्यपि इसकी अलग पहचान है और, सीमित मात्रा तक, यह स्वतंत्र रूप से कार्य करती है, फिर भी इसके संबंध आर्थिक राजनैतिक, धार्मिक और अन्य उप–व्यवस्थाओं से हैं, जो एक ओर तो शिक्षात्माक उप–व्यवस्था के उदेश्यों और उसके साधन व्यवस्था पर और दूसरी ओर इसकी स्वायतता पर शक्तिशाली प्रभाव डालते हैं। आर्थिक क्षेत्र को शिक्षा के लिए धन उपलब्ध कराना होता है, क्योंकि यह अपना खर्च स्वयं वहन नहीं कर सकती है। सत्ता–हित शिक्षा के उद्देश्यों को पारिभाषित और पुनर्परिभाषित करते रहते हैं और समय–समय पर इसे नई साधक भूमिकाएं सौंपना चाहते हैं। विश्व के कई भागों में शिक्षा ने धर्म के साथ जुड़ी अपनी डोरी को काट दिया है, परन्तु साम्प्रदायिक संस्थाओ में यह संबंध अभी भी जारी है, और वैसे भी, धर्म शिक्षा के कम से कम कुछ घटकों की सैद्धान्तिक बातों को निर्धारित करने की भूमिका निभाता है। शिक्षा स्वयं को सामाजिक और सांस्कृतिक मानकों से बिल्कुल मुक्त नहीं रख सकती और इसे समाज के अन्दर फैले हुए विक्षोभ से स्वयं को संबंधित करना होगा। किसी एक उप–व्यवस्था की स्वास्थ्य स्थिति दूसरों के स्वास्थ्य पर प्रभाव डालती है। इस संबंध में शिक्षा विशेष रूप में सुभेद्य है। यद्यपि इसके आन्तरिक मूल्य को सारा विश्व जानता है, फिर भी विभिन्न प्रकार के सहायक कार्यों के कारण, जो इसे करने पड़ते हैं, यह कई प्रकार के दबावों के अधीन है। जब इसे एक ओर सांस्कृतिक दाय और परम्परा को आगे बढ़ाना होता है दूसरी ओर परिवर्तन के लिए आदि प्रवर्तक के रूप में काम करना होता है, तो इसे कुछ–कुछ परस्पर विरोधी सा काम करना पड़ता है। वास्तव में, शिक्षा उप–व्यवस्था ही ऐसा अभिकरण नहीं है जो शिक्षा प्रदान करता है, प्रारम्भ में, घर–परिवार, अड़ोस–पड़ोस और साथियों की महत्वपूर्ण शिक्षात्मक भूमिका होती है और औपचारिक स्कूल अवस्था के बाद भी पुस्तकों, संचार–व्यवस्थाओं, सांस्कृतिक, राजनैतिक, धार्मिक–समागम और विभिन्न प्रकार के परस्पर व्यक्तिगत सम्बन्धों के द्वारा भी शिक्षात्मक प्रक्रिया जारी रहती है।

7.02 शिक्षा-शिक्षार्थी के बदलते रिश्ते

शिक्षक और शिक्षार्थी शिक्षा उप-व्यवस्था के दो सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटकों का प्रतिनिधित्व करते हैं। कई दशाब्दियों से दोनों के कक्षा आधार में परिवर्तन आ गया है। आजकल शिक्षण संस्थाओं में द्वितीय और प्रथम पीढ़ी वाले शिक्षार्थीयों की बाढ़ सी आ रही है। उनकी कई प्रकार की समस्याएं होती हैं जिनका समाधान वर्तमान शिक्षाशास्त्र नहीं कर सकता। अधिकाधिक, शिक्षक ऐसे वर्गों से आ रहे हैं जिनमें साक्षरता और शिक्षण की कोई परम्परा नहीं रही है। शिक्षार्थियों और प्रशिक्षकों की सामाजिक पृष्ठभूमि और सांस्कृतिक अवस्थिति शिक्षा प्रक्रिया में कई प्रकार की समस्याएं उत्पन्न करती हैं। दूसरी बात यह है कि शिक्षा को अब सामाजिक न्याय के क्षेत्र में ला दिया गया है और इस पर अब अधिकार के तौर पर दावा किया जाता है। शिक्षा के अवसरों की समानता की मांग को पूरा कर पाना अत्यन्त कठिन है परन्तु जब परिणामों की समानता की मांग को भी इसमें जोड़ दिया जाता है तो समस्या और भी जटिल हो जाती है। तीसरी बात यह है कि शिक्षा अपनी विचारधारा और विषयवस्तु के बारे में अपरिवर्तनीय नहीं हो सकती और इसे अपने को प्रभावित करने वाले विभिन्न क्षेत्रों के आग्रहों और मांगों के प्रति अनुकुल होना ही होगा। इस संदर्भ में बहुत से प्रश्न उठते हैं : संरक्षक अपने बच्चों की शिक्षा से क्या आशा करते हैं ? शिक्षा के उद्देश्यों और प्रणालियों के बारे में विभिन्न सामाजिक वर्गों के शिक्षार्थियों की क्या अनुभूतियां हैं? समाज में अलग-अलग हित शिक्षा व्यवस्था को अपने लाभों की ओर मोड़ने

के लिए उस पर किस प्रकार प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव डालते हैं? ऐसे कौनसे प्रच्छन्न और प्रकट कार्य हैं जोकि शिक्षा व्यवस्था का समर्थन संभ्रान्त वर्ग इसके द्वारा किए जाने की अपेक्षा करता है अन्तिम रूप में, शिक्षा के अनभिष्ट परिणामों के बारे में क्या होगा? इन्हें किसी प्रकार नियंत्रित किया जाए ताकि वे समाज के बड़े उद्देश्यों के प्रति दुष्क्रीय न हो जाए। ये प्रश्न महत्वपूर्ण हैं और उनका दुर्बल बुद्धि से किया गया हल शिक्षा व्यवस्था को विशृंखलता की स्थिति में धकेल सकता है। इन प्रश्नों के उपयुक्त उत्तर ढूंढने होंगे ताकि शिक्षा व्यवस्था, जोकि इन प्रश्नों के लिए नाजुक और अभेद्य है, अपनी दिशा और उद्देश्य-भावना को न खो सके। अन्तिम रूप में, तृतीय विश्व के कई देशों में, शिक्षा को सत्ता और लाभ की दृष्टि से भी देखा जाता है। व्यवस्थित शिक्षा प्रयासों में सत्ता और लाभ के उद्देश्यों के दुष्परिणामों को पर्याप्त रूप में और गहराई से नहीं देखा गया है। यदि शिक्षा-व्यवस्था एक विशालकाय परन्तु दिशाहीन जहाज की तरह बढ़ रही है, तो इसका कारण यह है कि या तो इन दोष-ग्राही समस्याओं में से कुछ का सामना ही नहीं किया गया है या फिर उनका सामना बेमन से किया गया है। समकालीन शिक्षा-व्यवस्था में अधिकांश मूल्य-दुर्व्यवस्था के लिए इसी असफलता को दोषी ठहराया जा सकता है। आज भारत के शिक्षकों के विश्व दृष्टि और मूल्य परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो वे कई प्रकार के अस्पष्ट और धुंधले प्रतिबिंब तथा प्रतिकूल और परस्पर विरोधी मूल्य प्रस्तुत करते हैं।

7.03 विश्व-दृष्टि एवं मूल्य

इस संदर्भ में विश्व-दृष्टि का अभिप्राय मानवीय व्यवस्था और उसके घटकों के भूत, वर्तमान और भविष्य के बारे में किसी समाज के साझा दृष्टिकोण के संकलन से लगाया गया है। यह गुणात्मक और संख्यात्मक, दोनों ही प्रकार के आयामों को ध्यान में रखता है, यह व्यवस्था और इसकी प्रक्रियाओं के तत्वों में गुण बताता है और ग्रहण करता है और अक्सर संख्या को गुण में परिवर्तित करने के लिए अभिमुख रहता है। यह गुण को सकल मात्रात्मक रूप में भी मूल्यांकित कर सकता है। जिन मूल प्रश्नो से यह संबंधित है, वे हैं–व्यक्तियों की तुलना में सिद्धांतो को प्रमुखता, दैनिक व्यवस्था की तुलना में प्राकृतिक (सामाजिक सहित) व्यवस्था की और प्रकृति द्वारा बनाई गई वस्तुपरक और व्यक्तिपरक शर्तों की तुलना में मनुष्य द्वारा निर्मित उद्देश्य और शर्तों की प्रमुखता। इस प्रकार विश्व-दृष्टि का विचार इस अभिधारणा को इंगित करता है कि अतीत मे मानवीय व्यवस्था क्या थी, और क्यों थी अब क्या है और क्यों है, और भविष्य में यह क्या होगी और क्यों होगी। अभीसिप्त दिशा देने के लिए इसमें एक सुविचारित हस्तक्षेप भी परिकल्पित किया जा सकता है ताकि मानव की नियति को नियंत्रित किया जा सके तथा उसे अधिमान्य और वांच्छनीय भविष्य की ओर गतिमान किया जा सके। मूल्य से हमारा तात्पर्य ऐसी क्रियागत गुणवत्ता से है जिसे हम तरजीह देना चाहते हैं। मूल्य आदर्शमूलक तो होते ही है किन्तु बहुधा उसमें सामाजिक आदर्शों के साथ जुड़ी स्वीकृति का अभाव होता है। वे गुणवत्ता का संबंध अविच्छिन्न व्यवहार के विभिन्न प्रकारों—अत्याधिक इच्छित से कम से कम इच्छित (और अनिच्छित भी) से जोड़ते हैं। वे सुव्यक्त तथा अव्यक्त भी हो सकते हैं किन्तु परम और अनुमित मूल्यों के बीच एक महत्वपूर्ण अन्तर हो सकता है। अनुमित में वरण पारिस्थितिक और फलमूलक हो सकते हैं यद्यपि वे परम इच्छित क्रिया से भिन्न हो सकते हैं और जिन्हें लगातार व्यक्त किया जाना और पसन्द किया जाना जारी रह सकता है। वे संज्ञानात्मक विश्व का एक भाग है और उनमें सौंदर्यबोधि और मूल्यांकनकारी तत्व निहित होते हैं। वे अक्षरशः पालन किए जाने का आदेश देने वाले न होते हुए भी व्यवहार-विषयक मार्ग-निर्देशन करते है। मूल्यों का अक्सर एक सोपान होता है और उनकी अनुज्ञेय सीमा होती है जो वरणों के विभिन्न स्तरों का निर्धारण करती है। कुछ मूल्य समाज के लिए सर्वव्यापी हो सकते हैं, और अन्य किसी विशेष वर्गों और श्रेणियों के लिए विशिष्ट हो सकते हैं। फिर भी, इसी सामाजिक-व्यवस्था को मूल्यों की योजना के बिना वैचारिक नहीं बनाया जा सकता। शिक्षकों के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि यद्यपि वे समाज के कुछ सामान्य मूल्यों को अपनाएंगे फिर भी उनको कुछ ऐसे मूल्य भी अपनाने चाहिए जो उनके वृत्तिक वर्ग और उसकी सांस्कृतिक भूमिका के लिए विशिष्ट हैं।

7.04 शिक्षकों से अपेक्षित विश्व-दृष्टि

आज के भारत के अशुभ संदर्भ में सबसे पहले विश्व-दृष्टि और मूल्यों के ऐसे तत्वों की सूची प्रस्तुत करेंगे जो शिक्षा-वृत्ति से संबंधित व्यक्तियों के लिए अपेक्षित और आवश्यक समझे जाते हैं। हम इस बारे में बाद मे जांच करेंगे कि वर्तमान वास्तविकता इस मानवीय प्रतिमान के कहां तक निकट आती है। दोनों में यदि अंतर होगा तो फिर इनका गहन कार्य-कारण विश्लेषण और संभव उपचारात्मक कारवाई की आवश्यकता होगी। भारत जैसे देश में, जहां सांस्कृतिक वैभिन्य है, सामाजिक जटिलताएं है आर्थिक असमानताएं हैं और वैचारिक विभिन्नताएं हैं वहां सभी मूल्यों के बारे में एकरूपता न तो संभव ही है और न शायद अपेक्षित ही है। इसलिए इस विचार-विमर्श से व्यक्तिगत विश्वास को निकाल देना होगा। फिर भी, कुछ मुद्दों और कुछ मूल सामाजिक राजनैतिक तथा शैक्षिक मूल्यो के बारे में मतैक्य पर पहुंचने की आवश्यकता है। आइए, हम एक श्रेणी के रूप में शिक्षकों की विश्व-दृष्टि के कुछ अपेक्षित तत्वों की सूची तैयार करें।

प्रथम, व्यक्तियो की तुलना में सिद्धान्तों की प्रमुखता होनी चाहिए। यह पद और प्रतिष्ठा के पक्षपातपूर्ण विचारों या जाति, वर्ग या लिंग के विचारों पर आधारित न होकर कुछ सार्वभौमिक विचारों पर आधारित होना चाहिए।

द्वितीय, सामाजिक कार्य योजना में और तर्कबुद्धि पर ए मताधता पर नही। यदि चाहें तो दैवीय शक्तियों पर हम व्यक्तिगत रूप से विश्वास रख सकते हैं किन्तु सार्वजनिक नीति और कार्य के क्षेत्रों में इनका प्रभाव धीरेधीरे कम से कम कर देना चाहि और अन्ततोगत्वा इसे खत्म कर देना चाहिए। सृजनात्मक तर्कशक्ति प्रमुख शक्ति के रूप मे प्रकट होनी चाहिए।

तृतीय, मानव को भौतिक विश्व पर प्रभुत्व स्थापित करने योग्य शक्ति के रूप में देखा जाना चाहिए। फिर भी, अपने स्रोतों से लाभ उठाने में मानव को कुछ बाह्य सीमाओं को पहचानना चाहिए और इस प्रक्रिया में उसे प्रकृति के नाजुक सामरस्य और संतुलन को नहीं बिगाड़ना चाहिए।

चौथे, सारी मानव-जाति की स्वतंत्रता की आवश्यकता को सैद्धान्तिक रूप में मान लिया गया है। फिर भी, यथार्थ स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए व्यक्तिनिष्ठ आधार और वस्तुनिष्ठ हालात अभी स्थापित किए जाने बाकी है।

पांचवे, समानता के बिना स्वतंत्रता का कोई लाभ नहीं है। सृजनात्मक अभिव्यक्ति की समानता व्यक्तियों के लिए ही नहीं बल्कि उनकी विभिन्न व्यवस्थाओं की समग्रता के लिए भी आवश्यक है। समानता प्रदान करा देने की परंपरा निभा देना ही काफी नहीं है बल्कि इसे सुस्थापित करने के लिए जो उपयुक्त हालात पैदा करने होंगे उनके लिए सजग प्रयास करने होंगे।

छठे, सांस्कृतिक विभिन्नताएं विद्यमान हैं और वे विद्यमान रहेंगी भी क्योंकि उनकी जड़ें काफी गहरी हैं और उनके काम भी गंभीर हैं। इसके लिए ज्यादा चिंतित होने का कोई कारण नहीं है। वास्तव में, उनमें और भी वृद्धि हो सकती है, जिस चीज को कम करने की आवश्यकता है, वे हैं, आर्थिक विषमताएं और सांस्कृतिक दरिद्रता।

सातवें, मानव इतिहास का उत्पादन है परन्तु कई महत्वपूर्ण मामलों में, वह इसका निर्माता भी रहा है। यदि किसी अन्य वजह के लिए नही तो कम से कम उसके अस्तित्व के लिए यह जरूरी है कि उसके अधिकाधिक हस्तक्षेपवादी भूमिका को अवश्य मद्देनजर रखना चाहिए। भविष्य में, उसे अपने भाग्य के निर्माता के रूप में अपनी भूमिका को परिभाषित करना सीखना होगा।

व्यक्तिगत विश्वासों में जमे हुए मूल्यों को हम तब तक नजरंदाज कर सकते हैं जब तक कि वे ऐसे राष्ट्रीय और सामाजिक मूल्यों से न टकराएं जिन्हें तुरंत बढ़ावा देने की आवश्यकता है। इस तथ्य को फिर दोहराने की जरूरत नहीं है कि व्यक्तिगत रूप में स्थिर मूल्य प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में चेतन या उप-चेतन रूप मे शिक्षा जगत् पर और शिक्षात्मक अर्पण में साकार हो जाते है।

लोकतंत्र, धर्म-निरपेक्षता और सामाजिक न्याय इन तीनों को संविधान में अत्यधिक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय मूल्यों के रूप में प्रतिष्ठापित किया गया है।

संविधान में की गई इन घोषणाओं की ईमानदारी पर कोई भी व्यक्ति संदेह करने में जायज हो सकता है और इन्हें प्राप्त करने के लिए उठाए उपाय बहुत सी जगह दोषपूर्ण हो सकते हैं। परन्तु इस बात में बिल्कुल संदेह नही हो सकता कि इन्हें आधारभूत मूल्यों के रूप में सजग रूप से स्वीकार किया गया है और इन्हें कम से कम संभ्रांत वर्ग के एक बड़े भाग का मतैक्य प्राप्त है। यह अनुमान लगाना कठिन है कि वे साधारण नागरिकों तक कहां तक पहुंच पाए है। शिक्षकों द्वारा इन मूल्यों को एक धार्मिक कृत्य के रूप में स्वीकृत कर लेने से काम नही चलेगा उन्हें अपने शिक्षण को इन मूल्यों से अभिभूत और प्रेरित करना होगा। व्यक्ति की स्वायत्तता की संकल्पना का उसके अधिकारों और दायित्वों के संदर्भ में विस्तार होना चाहिए। स्वयं कक्षा को ही भाग लेने वाले समुदाय का उदाहरण बनना चाहिए। यह संभव हो सकता है कि व्यक्ति कथनी में तो धर्मनिरपेक्ष हो पर करनी में सांप्रदायिक। इस प्रकार की द्वैधता का अवश्य ही भण्डाफोड किया जाना चाहिए और विचार तथा क्रिया मे विशुद्ध धर्मनिरपेक्ष आदतों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। सामाजिक न्याय में विश्वास से जाति धर्म या लिंग पर आधारित सभी प्रकार के भेद-भाव पूर्ण व्यवहार समाप्त करने लाजमी होंगे। समतावादी सिद्धान्त मात्र बड़े बड़े नारे लगाने से कहीं अधिक है। वंचित और गरीब लोगों की चिंता और उनके दुख में भागीदार बनने की भावना उत्पन्न करने की आवश्यकता है। यदि कोई व्यक्ति सामाजिक न्याय को मूल्य के रूप में स्वीकार करता है तो उसे हर रोज समुदाय के विभिन्न वर्गो और श्रेणियों के लोगों के साथ होने वाले अन्याय की भीषणता से दुखी होना सीखना चाहिए। इन आधारभूत मूल्यों की स्वीकृति को उनके औपचारिक निरूपण से न आंक कर उनके द्वारा उत्पन्न किए जाने वाले दस्तूरों से आंका जाना चाहिए।

आइए, हम इन तीनों के साथ तीन और राष्ट्रीय मूल्यों पर विचार करें। मूल्यो की हमारी सामान्य योजना में भूत-वर्तमान अवस्थिति पर बल दिया जाना चाहिए। इससे इतिहास को अस्वीकार करने का अर्थ नही लिया जाना चाहिए परन्तु इसमें निश्चित रूप से आवश्यकता से अधिक अतीत की ओर ध्यान देने की प्रवृत्ति को अस्वीकृत किया गया है। अस्तित्वात्मक अर्थों में, जिस बात की हमें सर्वाधिक चिन्ता है, वह है वर्तमान को जीना और भविष्य में जीने की आशा रखना। वर्तमान की विस्मयकारी समस्याओं के लिए, इतिहास नए उत्तर ढूढ सकता है, नई बीमारियों के लिए नए इलाजों की जरूरत होती है। आज हम जिन चुनौतियों का सामना करते हैं उनके लिए इन्हें कोई रचनात्मक उत्तर प्रस्तुत करना चाहिए। इसके साथ ही, यह भी आवश्यक है कि आज की समस्या का समाधान करते हुए कहीं हम भविष्य को दाव पर न लगा दें। ऐसे विकल्प जो आज हमें अस्थाई राहत प्रदान करें किन्तु कुछ दशाब्दियों बाद मानव के अस्तित्व को खतरा पैदा कर दें, कोई समाधान नहीं होते। इसलिए, यह आवश्यक है कि हम आज की समस्या पर वर्तमान-भविष्य के परिप्रेक्ष्य में विचार करें। दूसरा मूल्य जो इसमें जोड़ा जाना है, वह है निष्क्रियता सिद्धान्त को अस्वीकार करना। चापलूसी और उसकी स्वीकृति को नजर अंदाज करना होगा। स्वायत्त व्यक्ति एक सक्रिय व्यक्ति होता है। उसकी बोधगम्यता का इस प्रकार विकास किया जाना चाहिए कि वह समाज में होने वाली घटनाओं को आलोचनात्मक दृष्टिकोण से आंक सके और यह पहचान सके कि इसमें क्या ठीक है और क्या गलत। उसे अपनी इस पहचान को यहीं बंद नहीं कर देना चाहिए बल्कि उसे

इन गलत बातों में सुधार करने के लिए कुछ सीखते रहना चाहिए। तीसरे मूल्य का संबंध वैज्ञानिक मनोवृत्ति का विकास करने से है। इस प्रकृति के प्रकट और गुप्त आयामों को ध्यान-पूर्वक तैयार करने की आवश्यकता है।

शिक्षक के प्रभाव मे कमी हो जाने के बावजूद, वह अभी भी पर्याप्त शक्तिशाली लोकमत निर्माण करने वाला माना जाता है। इन आधारभूत मूल्यों में उसका विश्वास जगाना होगा जिससे कि युवा पीढ़ी विश्वासो, भ्रांत धारणाओं और अविश्वासों की डांवाडोल नींव पर अपनी शुरूआत न करे।

7.05 शैक्षिक वृत्ति के लिए विशेष मूल्य

आइए, हम उप सांस्कृतिक विशेषताओं-शैक्षिक-वृत्ति के लिए विशेष मूल्यों की ओर ध्यान दें।

7.05.01 नए ज्ञान का अर्जन, संचारण तथा संवर्धन.—ज्ञान के उद्योग में, विशेषकर शिक्षण-वृत्ति मे, किसी भी व्यक्ति को ज्ञान अर्जित करना ही नहीं अपितु अपने वर्तमान ज्ञान मे वृद्धि भी करनी होती है। शिक्षकों को अतिरिक्त तौर पर अपने विद्यार्थियो की क्रमिक पीढ़ियों में ज्ञान का संचार करना होता है। इस प्रकार, एक अच्छे शिक्षक को अपनी विशेषज्ञता और उप-विशेषज्ञता वाले विषयो में हुए मुख्य विकास बिन्दुओं से अपने आपको सज्जित करना होगा, अपने अर्जित ज्ञान का संचारण करने के लिए पर्याप्त संचारात्मक निपुणताओं का प्रदर्शन करना होगा और नए ज्ञान की प्राप्ति के लिए अपने अनुसंधान प्रयासों को निरन्तर जारी रखना होगा। आदर्श रूप में, अर्जन, संचारण और संवर्धन के बीच संतुलन बनाए रखना होगा। इसके लिए इन तीनों ही आयामों में ज्ञान के प्रति अत्यधिक निष्ठा की आवश्यकता है।

किसी भी शिक्षक के लिए, मात्र ज्ञान का अर्जन स्वार्थी और अनुत्पादक कार्य होगा यदि इसे संचारण-क्रिया द्वारा दूसरों को प्रदान न किया जाए। शिक्षण कार्य को यान्त्रिकी-प्रक्रिया के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। विद्यार्थियो को यह बताना काफी नहीं है कि कोई किसी विषय के बारे में क्या जानता है। शिक्षण-कार्य में उच्च सर्जनात्मकता का एक तत्व है। शिक्षण कार्य में महत्वपूर्ण यह है कि पूछताछ करने और प्रश्न करने वाले मस्तिष्कों का सर्जन किया जाए। कोई भी सक्षम शिक्षक विद्यार्थियों की शिक्षक पर अत्यधिक निर्भरता को बढ़ावा देना पसंद नहीं करेगा। इसके विपरीत, वह स्वतः शिक्षण और सामूहिक शिक्षण-प्रक्रियाएं उत्पन्न करेगा। नेमी शिक्षण में उस समय प्रेरणा/तत्व आ जाता है जब किसी शिक्षक का व्यक्तिगत अनुसंधान और उसकी पढ़ाने की भूमिका, दोनों ही सहज रूप में जुड़ जाते हैं। इस प्रक्रिया के द्वारा एक अच्छा शिक्षक, यदि हमेशा एक अभिप्रेरित शिक्षक न सही परन्तु एक बेहतर शिक्षक अवश्य ही बन जाता है। इस प्रकार, सर्जनात्मकता शिक्षण-वृत्ति में केन्द्रीय मूल्य के रूप में प्रकट होती है।

7.05.02 सामाजिक प्रासंगिकता.—ज्ञान अपने आप में ही महत्वपूर्ण है, परन्तु किसी समय कोई व्यक्ति यह प्रश्न कर सकता है कि आखिर ज्ञान किसके लिए? इस प्रकार, ज्ञान को सामाजिक रूप में प्रासंगिक और उपयोगी होना चाहिए। शिक्षा में सामाजिक प्रयोजन का निवेश करने के लिए, अध्यापन-अधिगम प्रक्रिया का उद्देश्य सीखने वालों में समस्याओं के समाधान करने की योग्यताओं को प्रखर बनाना होना चाहिए। इस प्रकार, सामाजिक रूप में उपयोगी ज्ञान आज की घोर समस्याओं और उनके बहु-आयामी कार्य-कारण विश्लेषण तथा उनके समाधान के संभव तरीकों की पूरी जानकारी देने वाला हो जाएगा। यदि सर्जनात्मक शिक्षण के आदर्शों को स्वीकार किया जाना है तो उसके अनुप्रयोग पहलू को मूल्य के रूप में स्वीकार करना होगा।

7.05.03 विस्तार-समुदाय से मूलभूत संबंध.—अपने आप को केवल चिन्तन और अनुसंधान में लीन रखने वाले वानप्रस्थी और एकान्त अस्तित्व का निर्वाह करने वाले अध्ययनार्थी के जमाने लद गए। आज तो विस्तार को शिक्षा प्रक्रिया का महत्वपूर्ण पहलू समझा जाता है। इसलिए, शैक्षणिक अलगाव को तोड़ना होगा। पढ़े-लिखे व्यक्ति को समुदाय के साथ अपना अभिन्न संबंध स्थापित करना होगा। साधारण रूप में उसका ज्ञान साधारण लोगों के ज्ञानात्मक विश्व का एक हिस्सा बन जाना चाहिए और इससे भी अधिक, उसे इस ज्ञान को अपने आसपास के जीवन के स्वरूप को सुधारने में प्रयुक्त करना चाहिए। यह मानना गलत होगा कि पढ़ा-लिखा आदमी उच्च ज्ञान के उन क्षेत्रों के बारे में सबसे ज्यादा जानता है जिसमें उसे अन्वेषण या अनुसंधान करना चाहिए। समाज के अन्य लोगों के साथ उसके अभिन्न संबंध स्थापित हो जाने से उसे ऐसी उपयोगी जानकारी हासिल हो सकेगी जो उसे नए परिप्रेक्ष्य प्रदान करेगी और उसे अनुसंधान और अन्वेषण के विषय चुनने में सहायता देगी। व्यक्ति केन्द्रित अनुसंधान और अध्ययन के स्थान पर जन-मूलक शैक्षिक प्रयत्नों का भी इससे संकेत मिलता है। यदि ज्ञान और उसके लाभों का व्यापक प्रसार किया जाना है तो इसे शिक्षण-वृत्ति के प्रमुख मूल्य के रूप में सम्मिलित करना होगा।

7.05.04 अल्प ज्ञान की अप्रासंगिकता और इस के लिए निरन्तर नवीकरण तथा अभिनव परिवर्तन.—प्रासंगिकता की कसौटी हमें आवश्यक रूप में कुछ ज्ञान की अप्रासंगिकता पर विचार करने के लिए बाध्य करती है। ज्ञान-उद्योग का आकार जो भी हो, ज्ञान बहुत तेज गति से बढ़ रहा है। यह कहा जाता है कि प्रत्येक पांच वर्षो में ज्ञान की मात्रा दुगुनी हो जाती है। इससे एक जटिल समस्या उत्पन्न हो जाती है; जो शिक्षण आज से बीस वर्ष पहले अच्छा और उपयोगी था वह आज पुराना और व्यावहारिक रूप से अनुपयोगी हो सकता है। शिक्षक को कुछ क्रांतिक और प्रभावी चयन करने होंगे उसे ज्ञान के जड़त्व को समाप्त करना होगा और आधुनिक, अद्यतन और प्रासंगिक ज्ञान पर बल देना होगा। इस प्रकार, ज्ञान के क्षेत्र में निरन्तर नवीकरण और

अभिनव परिवर्तन एक महत्वपूर्ण मूल्य के रूप में उभर कर सामने आ गया है। ऐसा नहीं हो सकता कि एक शिक्षक इसे गंभीरता से न ले, मानसिक रूप में उसे निरन्तर आगे ही बढ़ना होगा।

7.05.05 तृतीय विश्व के दिमाग से उपनिवेशवाद की भावना को खत्म करना.—यहां एक तत्संबंधी बात पर विचार करने की आवश्यकता है। तृतीय विश्व में शैक्षिक क्षेत्र के अनुभूतिकारी प्रेक्षकों ने यह देखा है कि इन देशों में शैक्षिक संस्थान एक मानसिक दासता के रोग से पीड़ित है। शिक्षा शास्त्रियों के दिमाग से उप-निवेशी प्रभाव को खत्म करने की प्रक्रिया को अभी गंभीरतापूर्वक नहीं सोचा गया है। विदेशों के मजदूर शिक्षण-केन्द्रों में पढ़ाई को अभी भी विद्वत्ता का मानदंड माना जाता है और तृतीय विश्व के अधिकांश विद्वान भी इसी होड़ में लगे हैं। हमारे अध्ययनार्थियों का रवैया जीहजूरिया हो गया है। इस का परिणाम यह हुआ है कि हमारी मान्यता देने और पुरस्कृत करने की प्रणाली बिगड़ गई है। "अन्तर्राष्ट्रीय मानकों" के अनुसरण की लालसा स्पष्ट दिखाई देती है जो हमारे राष्ट्रीय संदर्भ में निरर्थक हो सकती है। इसलिए, हमारे शैक्षिक जीवन से इस प्रकार के उपनिवेशवाद को खत्म करना एक मूल्य के रूप में प्रकट होना चाहिए। इसका आशय यह नहीं है कि हम ज्ञान के अंतर्राष्ट्रीय स्वच्छन्द प्रसार को रोकने के लिए लोहे या बांसों की दीवार खड़ी कर दें। जिस बात का संकेत किया गया है वह यह है कि एक ऐसी बौद्धिक परम्परा का संवर्धन करने के बारे में सावधानीपूर्वक सोचा जाए जो सही और प्रासंगिक प्रश्न उठाने और दक्षतापूर्वक तथा मितव्ययतापूर्वक उनका समाधान ढूंढ निकालने के तरीकों को अपनाने पर बल दे। इस कार्य को हमारी शैक्षिक संस्थाओं की मूल्य प्रणाली में सम्मिलित करना होगा।

7.05.06 श्रेष्ठता उत्पन्न करना.—शैक्षिक जीवन का प्रमुख मूल्य श्रेष्ठता उत्पन्न करना है। पूर्व तर्कों में यह तथ्य अन्तर्निहित हैं। श्रेष्ठता एक आकर्षक और सरल शब्द है परन्तु अभी तक इसे ठीक तरह से पारिभाषित नहीं किया गया है। श्रेष्ठता के संवर्धन को मूलभूत मूल्य के रूप में स्वीकार करते समय, हमें इसे सुस्पष्ट ढंग से पारिभाषिक करना चाहिए और ऐसे सूचक निर्धारित कर देने चाहिए जिससे वाक्छल या किसी प्रकार के संदेह की कोई गुंजाइश न रहे।

7.05.07 स्वतंत्रता और दायित्व.—शुद्ध शैक्षिक विकास के लिए अनुकूल वातावरण में जांच की स्वतंत्रता अपेक्षित है। शैक्षिक जीवन में परिचालित होने वाली संस्कृति पर जब सत्तावादी प्रबंध और नौकरशाही प्रक्रियाओं का दबाव हो जाता है तो उससे विचारों के विकास में अवरोध उत्पन्न होता है और वह श्रेष्ठता के संवर्धन को नष्ट करने लगता है। ऐसा लगता है कि शैक्षिक उद्यम के प्रबंध के लिए अभी तक किसी उपयुक्त नीति को नहीं अपनाया गया है। इस प्रकार की नीति किसी भी व्यक्ति को प्रश्न करने, संदेह प्रकट करने, विरोध करने और अस्वीकार करने की अनुमति देगी। साथ ही साथ यह स्वतंत्रता अपने आप को सामाजिक दायित्व से अलग नहीं कर सकती।

7.05.08 मिलकर कार्य करने की स्वतंत्रता का महत्व.—ज्ञान की अत्याधिक तेजगति के कारण विचारों का संकेन्द्रण और प्रयासों में सहयोग की आवश्यकता होती है। व्यक्तिगत प्रयत्नों का योगदान महत्वपूर्ण रहा है परन्तु ज्ञान की वर्तमान अवस्था में सफलता प्राप्त होना तभी संभव हो सकता है जब व्यक्ति एक दल के रूप में इन समस्याओं को सद्भावपूर्ण कार्य संबंधों से हल करें। इससे हमें दो महत्वपूर्ण मूल्यों की उपलब्धि होती है—पहली, जांच की स्वतंत्रता और दूसरे निर्धारित वैज्ञानिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सच्ची दलगत भावना को प्रोत्साहन देना।

7.05.09 परंपरा के प्रति आलोचनात्मक सजगता और प्रगटीकरण.—ज्ञानी मनुष्य आवश्यकता के तहत परंपरा के संचारक होते हैं। निस्संदेह यह कार्य बहुत महत्वपूर्ण है। फिर भी, दाय-अवस्थिति भिन्न हो सकती है और जिन स्पष्ट और अस्पष्ट उद्देश्यों के लिए इसे संचारित किया जाता है, वे भी एक से नहीं हो सकते। इसलिए, इस संदर्भ में मूलभूत मूल्य परंपरा के प्रति सजगता और उसके प्रगटीकरण पर बल देता है।

7.05.10 सामाजिक आलोचना करने में निर्भीक सामाजिक चेतना.—अंत में, अकादमिक व्यक्ति सामाजिक क्षेत्र की घटनाओं के प्रति निष्क्रिय प्रेक्षक होकर नहीं बैठ सकता। उसकी विशेषज्ञता और उप-विशेषज्ञता किसी भी क्षेत्र की क्यों न हो वे सामाजिक-प्रवृत्तियों की विश्लेषक होती हैं। विश्लेषणों का मूल्यांकित आयाम होता है। वह जरूरत के तहत समाज और उसकी प्रवृत्तियों और प्रक्रियाओं का आलोचक होता है। यदि उस आलोचना का स्वरूप केवल नकारात्मक है तो वह आलोचना भी बेकार होगी। सामाजिक चेतना से युक्त, अकादमिक व्यक्ति प्रगतिवादी कार्य के लिए पथप्रदर्शन भी करेगा। इस प्रकार सामाजिक आलोचना करने में निर्भीक सामाजिक चेतना को मूल्य के रूप में बल देना होगा।

7.05.11 समस्या-समाधान का दृष्टिकोण और नई सामाजिक व्यवस्था का अविर्भाव.—पिछले पृष्ठों में विश्वदृष्टिकोण और मूल्य-प्रणाली की जो रूपरेखा प्रस्तुत की गई है, वह कुछ-कुछ आदर्शवादी संप्रत्ययन का निरूपण करती है, परन्तु यह किसी अव्यवहार्य यूटोपिया का प्रक्षेपण नहीं है। संभ्रांत वर्ग को, जिसका शिक्षक वर्ग प्रतिनिधित्व करते हैं, परिवर्तन के आद्य प्रवर्तक और गति निर्धारक के रूप में कार्य करना होगा। जब तक यह अपना लक्ष्य निर्धारित नहीं करता और अपनी भूमिका पक्के इरादे से नहीं निभाता, तब तक समग्र समाज की नकारात्मक शक्तियों के सामने समर्पण करते रहने की संभावना बनी रहेगी। शैक्षिक-वृत्ति को सही दिशा में काम में लाने से न केवल समस्या का समाधान होता है परन्तु यह नई सामाजिक-व्यवस्था के आविर्भाव की आशाओं को कायम रखता है।

7.06 शिक्षण-व्यवसाय की प्रमुख चिन्ताएं

परन्तु अनुभूतिमूलक स्थिति क्या होती है ? शिक्षकों की प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष चिन्ताओं में व्यक्त होने वाले व्यक्त और अव्यक्त मूल्य क्या हैं ? यकीनन स्थिति बड़ी चिन्ताजनक तो है परन्तु पूरी तरह निराशाजनक नहीं है।

7.06.01 **सुरक्षा-मूल्य.**—सुरक्षा मूल्य संगठित शिक्षण-व्यवसाय की चिन्ताओं में सर्वोपरि दिखाई देता है। बेहतर और उच्चतर वेतनमानो, स्वत: और अतिरिक्त पदोन्नति अवसरों, बढ़े हुए महंगाई भत्ते, परीक्षा-मानदेय को जारी रखने, अधिक संकाय-आवासों की व्यवस्था या किराया भत्तों में बढ़ोतरी और गृह-निर्माण के लिए या स्कूटर तथा कार खरीदने के लिए उदार ऋणों के लिए वे संघर्ष कर रहे हैं। इन मांगों में स्वाभाविक रूप से कुछ भी गलत नही है : शिक्षक, वास्तव में जीवन के यथोचित सुविधाजनक स्तर और सम्मानजनक सामाजिक-प्रतिष्ठा का हकदार है, परन्तु जब आन्दोलन के तरीके शिक्षा प्राप्त करने वालों के हितों की बलि चढ़ा देते हैं या शिक्षा प्राप्त करने वालों की नजर में शिक्षक की छवि को धूमिल कर देते हैं और इस प्रकार शिक्षकों को कई विशिष्ट भूमिकाएं निभाने में असमर्थ कर देते हैं तो इस प्रकार की स्थिति से चिन्ता होनी शुरू हो जाती है। जनता, विशेष कर जनता के बुद्धिजीवी वर्ग को, शिक्षकों की मांगों से तब अधिक सहानुभूति होगी, जब वे समान रूप से शैक्षिक-स्तर को ऊंचा करने, शैक्षिक श्रेष्ठता का संवर्धन करने और इस उद्देश्य के लिए जो भी आवश्यक हो, उसे करने की प्रबल इच्छा प्रकट करें। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि उच्च शिक्षा के कुछेक मुख्य संकटों पर शैक्षिक व्यवसाय का संगठित और मुखर वर्ग बिल्कुल चुप्पी साधे रखता है। यह एक विकृति है और इसे ठीक किया जाना जरूरी है।

7.06.02 **शिक्षण-समय में कटौती पर चुप्पी.**—अत्यधिक चिन्ता और उच्च शिक्षा व्यवस्था के दुष्क्रियात्मक पहलू का प्रतिनिधित्व करने वाला एक मामला यह है कि हमारी संस्थाओं में वर्ष में उतने दिन शिक्षण कार्य नहीं होता जितने दिन उन्हें करना चाहिए। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सुझाए गए "शिक्षण दिवसों" की न्यूनतम सख्या 180 दिन है, जोकि कई अन्य देशों में विश्वविद्यालयों के लिए निर्धारित कार्य दिवसों की अपेक्षा कम है, फिर भी शिक्षक समुदाय ने कभी इसका विरोध नहीं किया और न ही इस स्थिति में परिवर्तन करने के लिए ही कभी कुछ किया। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की यह उदार गणना 12 सप्ताह के ग्रीष्म और शरद्कालीन अवकाश, 4 सप्ताह की अन्य छुट्टियां, 1 से 3 सप्ताह की परीक्षा-अवधि और "तैयारी छुट्टी" और इसके अतिरिक्त दो सप्ताह की विविध छुट्टियों पर आधारित है। इस प्रकार, 21 सप्ताह की साफ छुट्टियों के बाद 31 सप्ताह का कार्य बाकि रह जाता है, जो वास्तव में, $31 \times 6 = 186$ वास्तविक कार्य दिवसों का बनता है। यह ध्यान रखना चाहिए कि 186 दिनों की संख्या भी प्रभावी संख्या नहीं है क्योंकि प्रत्येक शिक्षक कुछ प्रकार की छुट्टियां लेने का हकदार होता है, जो हमारे आंकड़ों के अनुसार औसतन 10 दिनों की होती है, इससे यह संख्या और भी कम हो जाती है। वास्तविक स्थिति इससे भी अधिक खराब है। जिन दिनों क्लासें नहीं लगी/उनका खातिर औसत कालेजों के संबंध में 218 और विश्वविद्यालयों के संबंध में 222 बनता है जिससे कालेजों और विश्वविद्यालयों के लिए वर्ष भर में क्रमश: 14[illegible] और 143 दिन बाकी रह जाते हैं, जिनकी संख्या शिक्षकों द्वा[illegible] अपनी छुट्टियों के उपयोग से और भी कम हो जाती है। इस प्रकार की औसत संख्या से यह आशय निकलता है कि कई ऐसी संस्थाएं हैं जो वर्ष भर में केवल 100 दिन के लगभग कार्य करती है जबकि अन्य संस्थाएं शायद ही 180 दिन तक कार्य करती हों। कोई आश्चर्य नही कि समाज के 68 प्रतिशत सदस्य यह कहते है कि छुट्टियां बहुत होती हैं, कालेज के 45.6 प्रतिशत विद्यार्थी, विश्वविद्यालयो के 47 प्रतिशत विद्यार्थियों ने भी एकमत से कहा है कि शिक्षकों के पास अधिक काम नहीं है। हालांकि कालेजों और विश्वविद्यालयों मे युवा लोगों के समय को नष्ट करने के लिए केवल शिक्षकों को ही पूरी तरह से दोषी नहीं ठहराया जा सकता, परन्तु फिर भी उन्हें अवश्य ही इस बात को मानना चाहिए कि इससे न केवल सरकारी तौर पर बल्कि नाममात्र का भी पाठ्यक्रम पूरा नहीं होता और शिक्षा के स्तर में गिरावट आ जाती है इससे भी अधिक इससे शिक्षण-व्यवसाय में समाज के विश्वास को भी क्षति पहुचती है और उसकी प्रतिष्ठा भी गिरती है।

7.06.03 **कार्य के प्रति रवैया.**—कालेजों और विश्वविद्यालयों मे आयोग के निरीक्षण के दौरान, शिक्षा क्षेत्र की एक अन्य विशेषता प्रकाश में आई, वह है कालेजों में निजी ट्यूशन का व्यापक प्रचलन—ये ट्यूशन एक या दो विद्यार्थियों तक सीमित नहीं है जो शिक्षक की सहायता के बिना आगे बढ़ पाना कठिन समझते हों, परन्तु बड़े पैमाने पर ट्यूशनें की जाती हैं जिनसे शिक्षक अपने वेतनों से भी कहीं अधिक कमाते है। इस व्यवहार का रोना इस बात से है कि कई मामलों में ट्यूशन का परिणाम गहन अध्यापन से नहीं होता बल्कि प्रश्न-पत्रों को प्रकट करके दी गई सहायता या अंकों में वृद्धि के रूप में होता है। यह बहुत दु:खद सच्चाई है, परन्तु इस प्रकार की सूचना प्रश्नावलियों के द्वारा प्राप्त करना कठिन है। फिर भी, अन्य तथ्य जिसका माता-पिता, विद्यार्थियों और कर्तव्यनिष्ठ शिक्षकों द्वारा बार-बार उल्लेख किया गया है यह था कि कई शिक्षक अपने कार्य को लापरवाही से करते हैं, अपने लेक्चर ठीक से तैयार नही करते, ऐसे नोट लिखवाए जाते हैं जो उन्होंने स्वयं दशाब्दियों पूर्व तैयार किए थे, अपनी क्लासों को बीच मे ही छोड़ देते हैं, और विद्यार्थियो द्वारा उनके समक्ष रखी गई कठिनाइयों की ओर कोई ध्यान नहीं देते। 22 प्रतिशत कालेज-विद्यार्थियों और 18.5 विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों ने कहा कि शिक्षक अपने लेक्चर तैयार करके नहीं आते (दो राज्यों में यह संख्या 40 प्रतिशत के करीब थी)। औसतन 25 प्रतिशत कालेज-शिक्षकों और 33 प्रतिशत विश्वविद्यालय के शिक्षकों ने विद्यार्थियों को बिल्कुल समय नहीं दिया और एक-तिहाई अन्य शिक्षकों ने प्रति सप्ताह केवल 1 से 3 घंटे का समय ही दिया। समाज के व्यक्तियों को इस बारे में अपनी राय देने के लिए कहा गया कि शिक्षक अपने कार्य को कितनी गभीरता से लेते हैं, और इस मामले में भी परिणाम शिक्षकों के विपक्ष मे ही गया, क्योंकि 86 प्रतिशत कालेज शिक्षकों और 90 प्रतिशत विश्वविद्यालयों के शिक्षकों के बारे में उनका उत्तर या तो "कुछ" था या फिर "बहुत कम" था। हम चाहेंगे कि ऐसे आंकड़ों और ऐसे मतों को कई अन्य आरोपों के साथ देखा जाना चाहिए। ये आरोप हैं कि कुछ "शिक्षक राजनीतिज्ञ" या "विद्यार्थी-आन्दोलनो का प्रबंध करने वाले" है।

7.06.04 शिक्षण-भार.—इस संदर्भ में, शिक्षकों के कार्य का मूल्यांकन करने के लिए कुछ सांख्यिकी आधार होना उचित होगा, क्योंकि यह महसूस किया जा सकता है कि अत्यधिक कार्य के कारण, शिक्षक विद्यार्थियों की ओर ध्यान दे पाने या अपने लेक्चर तैयार कर सकने मे असमर्थ हैं। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग प्रति सप्ताह कुल 40 घंटे का काम निर्धारित करता है, जिसमें पूर्व-स्नातक और स्नातकोत्तर क्लासों के शिक्षकों और अनुसंधान कार्य करने वाले शिक्षकों के व्यापक मानकों का संकेत किया जाता है। इसके लिए दो उदाहरण नीचे दिए गए हैं :—

लेक्चरर (घंटे सप्ताह)

पूर्व-स्नातक (विज्ञानेतर)		स्नातकोत्तर (विज्ञान)	
1. शिक्षण	16		10
2. जांच-परीक्षा	2		1
3. ट्यूटोरियल्स	4	प्रयोगशाला	4
4. शिक्षण की तैयारी	10	शिक्षण/प्रयोगशाला तैयारी	10
5. पाठ्येतर पर्यवेक्षण	4	अनुसंधान	10
6. प्रशासनिक कार्य	4	स्वयं पठन	5

हमारे आंकड़ों से पता चलता है कि, कालेजों में केवल 10 प्रतिशत लेक्चररों के पास प्रति सप्ताह 18 घंटों से अधिक कार्य था और लगभग 50 प्रतिशत के पास प्रति सप्ताह 12 घंटों से कम कार्य था। विश्वविद्यालयों में 5.4 प्रतिशत के पास प्रति सप्ताह 18 घंटों से अधिक कार्य था और 73 प्रतिशत के पास प्रति सप्ताह 12 घंटों से कम कार्य था। ट्यूटोरियलों के बारे में, कालेजों में 51 प्रतिशत और विश्वविद्यालय में 48 प्रतिशत के बारे मे कोई उत्तर नहीं प्राप्त हुआ, संभवत: वे आधी संस्थाओं में बिल्कुल भी नहीं लिए जाते। केवल 17 प्रतिशत कालेज-शिक्षकों और लगभग 16 प्रतिशत विश्वविद्यालय के शिक्षकों ने प्रति सप्ताह 5 घंटे या इससे अधिक समय ट्यूटोरियलों पर लगाया। यह चिंताजनक बात है कि प्रयोगशाला कार्य के संबंध में कालेजों में विज्ञान और इंजीनियरिंग के शिक्षकों से भी क्रमश: 30 प्रतिशत और 25.5 प्रतिशत मामलों में कोई उत्तर प्राप्त नहीं हुए। विश्वविद्यालयों के मामले में भी, उत्तर न भेजने वालों की संख्या भी लगभग उतनी ही अधिक थी। परन्तु कालेज के 46 प्रतिशत और विश्वविद्यालय के 45 प्रतिशत विज्ञान शिक्षकों के पास प्रति सप्ताह 9 घंटे या उससे अधिक प्रयोगशाला का कार्य था। ये आंकड़े साधारण रूप में यह संकेत करते हैं कि 10 या 15 प्रतिशत से अधिक शिक्षकों के पास कार्य का अधिक भार नहीं हो सकता। आंकड़ों का विस्तृत विश्लेषण करने से भी ऐसी संस्थाओं अथवा राज्यों का पता नहीं चलता जहां ऐसा हो रहा है या होने दिया जा रहा है। इस संबंध में यह उल्लेखनीय है कि यह बात हमारे नोटिस में आई है कि कभी-कभी राज्य के शिक्षा विभाग विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के मानकों की मशीनी तौर पर व्याख्या करते हैं और यदि विद्यार्थियों का दाखिला किसी विशेष सीमा से कम रह जाता है तो वे अक्सर शिक्षकों की छंटनी के लिए कह देते हैं—या इसके विपरीत, यदि आने वाले वर्षों में दाखिला पर्याप्त मात्रा में बढ़ जाता है तो भी वे अतिरिक्त शिक्षक उपलब्ध नहीं कराते। इसलिए हम शिक्षा विभागों से यह अपेक्षा करते हैं कि ऐसे सभी मामलों में सलाह देने के लिए प्रिंसिपलों और अन्य मनोनीत शिक्षकों का परामर्शदात्री दल गठित किया जाए। यदि दाखिला कम भी हो, तो भी विभिन्न आवश्यकताओं के लिए कालेजों के पास सक्षम स्टाफ होना चाहिए और जब अधिक विद्यार्थियों का पंजीयन हो तो उन्हें पर्याप्त स्टाफ उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

7.06.05 सुधार के प्रति रवैया.—यह स्पष्ट है कि कोई भी शिक्षा-सुधार तब तक नहीं हो सकता जब तक कि उसे शिक्षक वर्ग का पर्याप्त समर्थन प्राप्त न हो। शिक्षकों का उत्साहहीन या कभी-कभी उदासीन दृष्टिकोण अक्सर किसी सुधार का नाश कर देता है। हमारे देश में किसी भी परिवर्तन की पहल जनसाधारण, शिक्षक या उसके संगठन की ओर से नहीं की जाती। कार्य-दिवसों की न्यूनतम संख्या मानने से मना कर देने का अभिप्राय शिक्षा विरोधी नैतिकता को बढ़ावा देना है। आज उच्च शिक्षा की संस्थाएं अक्सर अनुशासनहीनता की प्रतीक हो गई हैं। कर्मचारियों के अनुशासन के बाद ही विद्यार्थियों का अनुशासन देखा गया है और शिक्षकों ने भी अक्सर इसमें उनका साथ दिया है। तब ऐसे ढर्रे को सुधारने का कौन दायित्व लेगा? शिक्षक समुदाय का एक बहुत बड़ा वर्ग विद्यार्थियों के प्रति अपने दायित्व को गंभीरता से नहीं लेता। यदि पाठ्यक्रम पुराने हो गए हैं, और अप्रभावी शिक्षण-प्रणालियां शिक्षा को अनुत्प्रेरित दिनचर्या में परिणत कर देती हैं, या प्रथम पीढ़ी के अध्ययनकर्ताओं की आवश्यकताओं की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता, या शिक्षा और अनुसंधान में शैक्षिक-योग्यता को परखने के स्तरों में "सब चलता है" की भावना से कमी आ जाती है, तो वास्तव में इस सबके लिए नैतिक रूप में कौन जिम्मेवार है? इसके अतिरिक्त, जब भर्ती में या पदोन्नति के लिए संगठित मांगो को साधारणता और गैर-निष्पादन के सन्दर्भ में तोला जाता है, तो शिक्षण व्यवसाय जो जिसका एक अभीष्ट मूल्य श्रेष्ठता का अनुसरण करना है, अपने दायित्व से च्युत हो जाता है।

हमारे देश में उच्च शिक्षा प्रणाली के अनिष्ट के कारणों में से एक है सम्बद्ध प्रणाली, जिसके अन्तर्गत विश्वविद्यालयों के अप्रत्यक्ष नियंत्रण के अन्तर्गत कालेजों को चलाया जाता है। शिक्षक जो कुछ पढ़ाते हैं या विद्यार्थियों की परीक्षा जिस प्रकार ली जाती है, उस पर उनका कोई नियंत्रण नहीं होता। उनकी पहल शक्ति और नवीनता की भावनाएं पूरी तरह बंद कर दी गई हैं परन्तु इस पर भी उन्होंने अपने मूल कार्यों की जड़ें काटने के विरुद्ध कोई विरोध नहीं किया। वास्तव में, कालेजों के लिए और अन्य बातों के साथ शिक्षकों के लिए अकादमिक स्वायतता का विरोध अक्सर—संस्थाओं में "संभ्रान्तवाद" से बचे रहने के भ्रामक आधार पर किया जाता है। निश्चित रूप में, सभी 5000 के लगभग कालेज, जिनकी संख्या प्रति वर्ष सौ की दर से अनियंत्रित तरीके से बढ़ रही है, किसी भी रूप में, एक दूसरे के बराबर नहीं हो सकते, और चूंकि स्त्रोत सीमित हैं, इसलिए पांच वर्ष की योजना अवधि में कुछ इने.गिने कालेजों को ही स्वायतता प्रदान की जा सकती है। हम

सिफारिश करते है कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को राज्य सरकारों के सहयोग से, पर्याप्त निविष्टियों से संपन्न कुछ सौ कालेजों का विवेकपूर्ण चयन करना चाहिए और उन्हे शैक्षिक कार्यकलाप में स्वायत्तता प्रदान कर देनी चाहिए। इस तरह चुने हुए कालेजों की निरंतर जांच और अध्ययन करते रहना चाहिए ताकि उनका उचित रूप से कार्य करने को सुनिश्चित किया जा सके। हमारे मतानुसार, स्वायत्तता की सकल्पना को विश्वविद्यालय के ऐसे विभागों तक भी ले जाना चाहिए जिन्हें राष्ट्रीय स्तर पर किसी विशेष सहायता के लिए चुना जाए। हमें ऐसे कई मामलों के बारे में बताया गया, जहां अनुसंधानकर्ता केवल अपनी योग्यता के आधार पर काफी धन राशि मजूर कराकर लाए हैं, परन्तु दुर्भाग्यवश विश्वविद्यालय के दकियानूसी रजिस्ट्रारों और वित्त अधिकारियों ने रुपए को अपने नियंत्रण में रखकर उन पर "सामान्य" नियंत्रण लागू किए हैं ताकि अनुसंधानकर्ता साधनों का दुरुपयोग न करें।

समय समय पर, उच्च शिक्षा संस्थाओं के सभ्रांत वर्ग ने विश्वविद्यालय की निर्धारित समितियों के द्वारा सभी प्रकार के विशेषत: उनके आन्तरिक कार्यकलापों के बारे में निर्णय लेने की शिक्षा संस्थाओं की वैध स्वायत्तता मे घुसपैठ करने का विरोध किया। यह ढाढस बंधाने वाला चिह्न है, परन्तु, इसके साथ ही शिक्षकों का एक ऐसा वर्ग भी है जो, अपने थोड़े से लाभ के लिए, राजनैतिक और नौकरशाही से हस्तक्षेप कराता है—और कभी कभी तो स्थिति यहां तक पहुंच जाती है कि प्रतिनिधि मण्डलों या धरनों के द्वारा विशेष रूप से मंत्रियों, ससद सदस्यों या राजनैतिक दलों के हस्तक्षेप की मांग की जाती है। सत्ता में बने हुए अधिकांश व्यक्ति इस प्रकार के मोह से स्वयं को रोक नहीं सकते। शिक्षण व्यवसाय का संगठित मत और बल विश्वविद्यालय व्यवस्था की स्वायत्तता के कटाव के विरुद्ध निर्भीक और पक्के इरादे को स्पष्ट रूप में प्रदर्शित करने मे अक्षम रहा है। हालांकि, हम यह स्पष्ट कर दें कि हम एकान्त की स्वायत्तता की पैरवी नहीं कर रहे हैं। आज हमारे विश्वविद्यालयो और कालेजों के समाज, क्षेत्र के विकास-कार्यों, अनुसंधान और उद्योगों आदि से कई संबंध हैं। इस प्रकार, विश्वविद्यालय समग्र व्यवस्था का एक भाग है और यह कुल मिला कर अनुसंधान, शिक्षा और विकास संबंधी कार्यों से अलग नहीं रह सकता। पाठ्य समितियों, अनुसंधान समितियों, विस्तार कार्यपरिषदों में शिक्षकेतर व्यवस्थापिकों, वैज्ञानिकों या संबंधित सरकारी कार्मिकों का प्रतिनिधित्व होना स्वाभाविक है।

7.06.06 सर्जनात्मकता एवं अनुसंधान.— श्रेष्ठता का अनुसरण, सर्जनात्मकता और अनुसंधान शिक्षणवृत्ति की मूल्य प्रणाली के केंद्र बिन्दु हैं। विद्यार्थियो के संबंध में, यह बहुत महत्वपूर्ण है कि, पर्याप्त प्रश्नों और जांच करने के बिना केवल प्राधिकार के आधार पर ही बात मान लेने को निरुत्साहित करना होगा और नीर क्षीर बुद्धि का विकास करने, अन्वेषणात्मक और प्रयोगात्मक दृष्टिकोण अपनाने और प्रतिबिम्बित करने तथा आत्मविश्लेषण करने की प्रेरणा के लिए रचनात्मक प्रयास किए जाने चाहिए। जब तक शिक्षक स्वयं उदाहरण प्रस्तुत न करे या अगर वह स्वयं कट्टरपंथी, दुराग्रही और कल्पनाशक्तिहीन हैं तो यह सब नहीं हो सकता। केवल सर्जनात्मक व्यक्ति ही विद्यार्थियो मे कल्पना और चिन्तन के अवसर निष्क्रिय रहने वाले गुणों को उभारने के लिए प्रेरित कर सकता है और उन्हे कहानियां या कविताएं लिखने से लेकर कला और विज्ञान की महान कृतियों की रचना करने जैसे सृजनात्मक कार्य करने के लिए प्रेरित कर सकता है। जहां तक स्वयं शिक्षक द्वारा सर्जनात्मक कार्य करने का प्रश्न है, यह कहा जा सकता है कि ये कार्य न केवल प्रभावी शिक्षण में ही योगदान देंगे बल्कि वे शैक्षिक या सामाजिक समस्याएं सुलझाने के योग्य भी बनाएंगे और दोनो ही मामलों में अनुसंधान का लाभ दूर-दूर फैलेगा। क्षेत्रीय या राष्ट्रीय विकास से संबंधित अनुसंधानों में शिक्षकों के सम्बद्ध होने से वास्तव में शिक्षा संस्थाओं की प्रतिष्ठा बढ़ेगी और उन्हें ऐसी जगहों से संसाधन प्राप्त होंगे जहां से अभी तक नहीं मिले थे। फिर शिक्षक, उच्च कक्षाओं के विद्यार्थियों को शोध-प्रबंध लिखने या निचली कक्षाओं के विद्यार्थियों को परियोजनाओं तथा अध्ययनों पर कार्य करने के लिए नियोजित रूप में लगा सकते है, इससे एक आधार-सामग्री और उसका विश्लेषण करने से उनकी सर्जनात्मक प्रतिभा और प्रखर होगी और उसी के साथ ही साथ सामाजिक और आर्थिक विकास की वस्तुनिष्ठ आधार योजना के लिए उपयोगी सामग्री भी मिल जाएगी। अवसर तो पर्याप्त हैं परन्तु वास्तविकता क्या है?

यद्यपि कुल मिला कर, पिछली दो दशाब्दियों के दौरान हमारे कालेजों और विश्वविद्यालयों में अनुसंधान-कार्य का व्यापक प्रसार हुआ है, अनुसंधान के लिए पंजीयन की संख्या लगभग 40,000 तक पहुंच गई है, किन्तु इसकी सुविधाएं विश्वविद्यालय के विभागों में ही केन्द्रित है। जहां कालेज और विश्वविद्यालय के लगभग 75 प्रतिशत शिक्षकों ने कहा कि लेक्चर तैयार करने के लिए उनके पुस्तकालयों में पर्याप्त मात्रा में पुस्तकें उपलब्ध हैं, वहीं केवल 27.4 कालेज-शिक्षकों और 43.8 प्रतिशत विश्वविद्यालय शिक्षकों ने कहा कि अनुसंधान के लिए उनके पुस्तकालय काफी अच्छे हैं। हमारी प्रश्नावलियों पर जो उत्तर प्राप्त हुए हैं, उनके अनुसार 60 प्रतिशत कालेज-पुस्तकालयों में शिक्षक के विशेष विषय से संबंधित तीन से कम पत्रिकाएं थीं, और इसी से मिलती-जुलती स्थिति 30 प्रतिशत विश्वविद्यालय पुस्तकालयों की थी। 9 प्रतिशत कालेज-पुस्तकालय शिक्षक के विषय की 10 से अधिक पत्रिकाएं लेते हैं और 37.4 प्रतिशत विश्वविद्यालय-पुस्तकालयों की वही स्थिति थी। यदि हमने, अनुसंधान-कार्य के लिए प्रयोगशाला सुविधाओं की जांच की होती तो स्थिति और भी शोचनीय होती। हम मानते हैं कि यह मात्र साधनों का प्रश्न है, परन्तु विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और राज्य-सरकारों से अपेक्षा करते हैं कि वे स्थिति की गंभीरता को शिक्षण की गुणवत्ता पर पड़ने वाले प्रभावों के संदर्भ में पहचाने और हमारी शैक्षिक संस्थाओं की आधारित संरचना तैयार करने और चालू खर्चों की पूर्ति के लिए जितना हो सके और जितना जल्दी हो सके, प्रयत्न करें।

शिक्षकों द्वारा अनुसंधान/पुस्तक लेखन पर लगाए गए घंटों के प्रश्न के बारे में, 65.83 प्रतिशत कालेज-शिक्षकों और 23.46

प्रतिशत विश्वविद्यालय शिक्षकों का उत्तर शून्य था। केवल 9 प्रतिशत कालेज-शिक्षकों और 32 प्रतिशत विश्वविद्यालय शिक्षकों ने अनुसंधान/पुस्तक लेखन पर प्रति सप्ताह 10 घंटों से अधिक लगाए। विश्वविद्यालय-शिक्षकों के बारे में, 30 प्रतिशत लेक्चररों, 17 प्रतिशत रीडरों और 10 प्रतिशत प्रोफेसरों ने अनुसंधान या पुस्तक-लेखन पर कुछ भी समय नहीं लगाया परन्तु 30 प्रतिशत लेक्चररों, 36 प्रतिशत रीडरों और 36 प्रतिशत प्रोफेसरों ने अनुसंधान-कार्य पर प्रति सप्ताह 10 घंटों से अधिक समय लगाया। 90 प्रतिशत कालेज शिक्षक या तो किसी अनुसंधान करने वाले विद्यार्थी का मार्गदर्शन नहीं कर रहे थे या फिर उन्होंने इस प्रश्न का उत्तर ही नहीं दिया। विश्वविद्यालय शिक्षकों की यह संख्या 45 प्रतिशत थी। हमने यह भी पाया कि 3 प्रतिशत लेक्चररों, 15 प्रतिशत रीडरों और 38 प्रतिशत प्रोफेसरों की देखरेख में 5 से अधिक अनुसंधान करने वाले विद्यार्थी कार्य कर रहे थे।

हम शिक्षा-व्यवसाय में लगे व्यक्तियों से आशा करते हैं कि वे अनुसंधान-कार्यों में योगदान देने के संबंध में स्थिति-सुधारने के लिए प्रयत्न करें और इसीलिए आयोग यह सिफारिश करता है कि (क) पर्याप्त धन और मार्गदर्शन प्रदान करके पुस्तकालय और प्रयोगशाला की मूल सुविधाओं को बढ़ाया जाए; (ख) अपनी योग्यताएं बढ़ानें के लिए शिक्षकों की छुट्टी सुविधाओं में वृद्धि की जाए; (ग) शिक्षकों को अध्ययन के लिए प्रोत्साहन देने और अवसर प्रदान करने के लिए वर्ष में विशेष विषयों पर और अधिक ग्रीष्म-विद्यालय, संगोष्ठियां और सम्मेलन आयोजित किए जाएं; और (घ) व्यक्तिगत तौर पर शिक्षकों द्वारा हाथ में ली गई अनुसंधान-परियोजनाओं के लिए आर्थिक सहायता में वृद्धि की जाए। हमारे आंकड़ों से पता चलता है कि 70 प्रतिशत कालेज-शिक्षकों और 53 प्रतिशत विश्वविद्यालय शिक्षकों ने अपनी संस्थाओं के बाहर होने वाली संगोष्ठियों पर या अन्य शैक्षिक कार्य-कलापों में एक भी दिन नहीं लगाया, और दोनों ही वर्गों के 90 प्रतिशत शिक्षकों ने किसी भी पुनर्प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में भाग नहीं लिया। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा सहायता प्राप्त कुछ हजार अनुसंधान परियोजनाएं अनुसंधान-कार्य करने के लिए योग्य शिक्षकों की बहुत बड़ी संख्या के लिए बहुत कम हैं।

7.07 स्वतः बोध एवं नियंत्रण

हमने मूल्यों के प्रश्न पर युवा वर्ग के मस्तिष्कों को प्रभावित करने में शिक्षक की महत्वपूर्ण भूमिका के बारे में विचार-विमर्श किया है, यदि हमें समाज को संगठित रखना है और यदि इसे उन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए बढ़ना है जिन्हें हम हृदय में संजोए रखते हैं तो हमने जिन मूल्यों का विश्लेषण किया है उन्हें बढ़ावा देना होगा। हम यह भी जानते हैं कि हजारों सालों से चले आ रहे मानवीय और सामाजिक संबंधों के आधार पर शिक्षकों से आदर्श-वादी मांगे करना आसान है। परन्तु हमारे विचार में, इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि शिक्षक का, उसके उद्देश्य या उसकी ड्यूटी या उसकी वृत्तिक जिम्मेदारी के कारण, एक विशेष स्थान है। वह प्रचलित सामाजिक व्यवहार के मानकों में स्वयं को नहीं खो सकता क्योंकि तब हमें मार्गदर्शन कौन देगा या हमें दलदल से कौन निकालेगा? ऐसा व्यक्ति जो शिक्षा और सर्जनात्मक प्रयासों में सत्य की खोज के लिए समर्पित है और इस तरह बहुत से अन्यों से आगे देखने की स्थिति में है, एक सामाजिक आलोचक है, उसे सही मूल्यों के प्रचार के लिए संघर्ष करना ही होगा। इस-लिए, हमारा विश्वास है कि, शिक्षकों को सर्वप्रथम अपना आत्म-विश्लेषण करना चाहिए और अपनी मूल्य प्रणाली की जांच करनी चाहिए ताकि वह इसे उच्चतम नैतिक स्तर तक पहुंचा सकें और उन्हें अपने ऊपर कठिन प्रतिबंध लगाने से नहीं हिचकिचाना चाहिए उनकी बातों का प्रभाव हो और उनका चरित्र एक ऐसी मिसाल कायम कर सके जिसका दूसरे लोग अनुसरण करें।

शिक्षकों में प्रचलित मूल्यों पर एकत्रित किए गए आंकड़े काफी रोचक हैं और इन्हें नीचे तालिका 1 और 2 में प्रस्तुत किया गया है, इनमें से एक कालेज शिक्षकों और दूसरी विश्वविद्यालय-शिक्षकों के बारे में है। चूंकि यह शिक्षकों के द्वारा शिक्षकों के बारे में ही बोध है, इसलिए ये क्षुब्ध कर देने वाले हैं, फिर भी, विशेष बात यह है कि उन के उत्तर बहुत मिलते-जुलते हैं।

तालिका 1

शिक्षकों में प्रचलित मूल्य

(विश्वविद्यालय-शिक्षकों के उत्तरों का प्रतिशतता वितरण)

	अधिसंख्या शिक्षकों में	काफी शिक्षकों में	कतिपय शिक्षकों में	किसी शिक्षा में नहीं	उत्तर नहीं	कुल प्रतिशत
1	2	3	4	5	6	7
मूल्य						
(i) व्यक्तिगत ईमानदारी और निष्ठा	16.04	31.34	45.29	0.89	6.02	99.58
(ii) अकादमिक उत्कृष्टता का अनुसरण	9.84	29.34	53.36	0.79	6.11	99.35
(iii) वैज्ञानिक प्रकृति	6.34	20.34	61.89	3.36	7.18	99.11
(iv) छात्रकल्याण के प्रति वचनबद्धता	10.82	29.34	49.11	3.26	6.76	99.30
(v) समुदाय-सेवा	4.38	13.15	61.19	11.38	9.00	99.11
(vi) देशभक्ति, मानव जाति के प्रति प्यार, शांति तथा अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना	13.62	25.33	45.85	6.62	7.98	99.39
(vii) सामाजिक न्याय के प्रति वचनबद्धता	11.43	25.33	47.20	6.33	9.19	99.48
(viii) प्रकृति और परिस्थिति के प्रति चिंता	8.35	18.14	50.61	11.57	10.40	99.07

तालिका 2

शिक्षकों में प्रचलित मूल्य

(कालेज शिक्षकों के उत्तरों का प्रतिशतता-वितरण)

	अधिसंख्या शिक्षकों में	काफी शिक्षकों में	कतिपय शिक्षकों में	किसी शिक्षक में नहीं	उत्तर नहीं	कुल प्रतिशतता
1	2	3	4	5	6	7
मूल्य						
(i) व्यक्तिगत ईमानदारी एवं निष्ठा	20.20	27.39	44.23	0.62	7.22	99.65
(ii) अकादमिक उत्कृष्टता का अनुसरण	11.64	27.07	52.09	0.82	5.04	99.87
(iii) वैज्ञानिक प्रवृत्ति	6.50	16.32	61.64	4.44	10.01	98.91
(iv) छात्रकल्याण के प्रति वचनबद्धता	16.49	29.94	43.13	2.58	8.56	98.72
(v) समुदाय सेवा	8.04	15.76	56.28	8.80	10.26	99.14
(vi) देशभक्ति, मानवजाति के प्रति प्रेम, शांति तथा अंतर्राष्ट्रीय सद्भावना	18.74	25.01	44.77	5.35	9.34	99.25
(vii) सामाजिक न्याय के प्रति वचनबद्धता	16.10	26.20	41.63	5.26	10.09	99.27
(viii) प्रकृति तथा परिस्थितिकी के प्रति चिंता	10.04	18.62	46.40	11.01	12.77	98.83

यह बड़े खेद की बात है कि लगभग आधे शिक्षकों की यह विचार है कि उनके सह-पेशेवरों में से कुछ ही शिक्षक ऐसे हैं जो व्यक्तिगत रूप से निष्ठावान एवं ईमानदार हैं या जो अकादमिक उत्कृष्ठता प्राप्त करने का प्रयास करते हैं अथवा जो छात्रों के कल्याण या समुदाय-सेवा के लिए वचनबद्ध हैं। वैज्ञानिक प्रवृत्ति का अभाव तो दोनों वर्गों के शिक्षकों में स्पष्ट दिखाई देता है। अत: यह स्पष्ट है कि यदि मूल्यप्रधान शिक्षा के प्रसार के लिए शिक्षकों को एक अनिवार्य साधन बनना है तो उन्हें स्वयं अपने प्रयास से अपना सुधार करना होगा।

प्रश्नावली के माध्यम से इस बात का भी पता चला कि शिक्षक, छात्र एवं समाज किसी अध्यापक के किस व्यवहार को अवांछनीय समझता है। इस सिलसिले में अनेक प्रश्न पूछे गए थे और लोगों से प्रतिकूलक्रम में उनका उत्तर देने को कहा गया था। छात्रों के मूल्यांकन में पक्षपात करना विश्वविद्यालयों के 71.4 प्रतिशत लोगों द्वारा सबसे खराब व्यवहार माना गया तथा छात्रों को अपने साथियों के विरुद्ध भड़काना कालेज समुदाय द्वारा सबसे खराब व्यवहार माना गया। कालेजों तथा विश्वविद्यालयों के छात्रों ने बहुत पहले तैयार किए गए "नोट्स" के आधार पर पढ़ाने के पुराने ढंग को शिक्षकों का सर्वाधिक अवांछनीय व्यवहार माना था।

इस संबंध में स्वयं शिक्षकों के उत्तर भी वास्तव में अनुकूल रहे हैं। 80 प्रतिशत से भी अधिक शिक्षक "बाजार नोट्स" को प्रकाशित करवाकर धन कमाने, बहुत पहले तैयार किए गए "नोट्स" के आधार पर पढ़ाने, व्याख्यान देने के बजाय "नोट्स" लिखाने, छात्रों का ग्रेडिंग करने में पक्षपात करने, कक्षाएं न लेने, छात्रों को भड़काने तथा धन कमाने के लिए ट्यूशन पढ़ाने के कार्यों को वृतिक नैतिक मूल्यों के विरुद्ध समझते हैं। कालेज तथा विश्वविद्यालय—दोनों के शिक्षक वस्तुत: छात्रों को अन्य शिक्षकों के विरुद्ध भड़काने के कार्य को सर्वाधिक अवांछनीय मानते हैं। दूसरा अवांछनीय कार्य पढ़ाने के बजाय "नोट्रा" लिखाना है। देखिए, तालिका 3 और 4।

इन पुष्ट विचारों के आधार पर अवांछनीय व्यवहार की परिभाषा दी जा सकती है। यह अच्छा होगा, यदि ऐसी परिभाषा को अंतिम रूप देने में शिक्षकों के वृत्तिक संघ पहल करें क्योंकि वे अपने शिक्षक साथियों के सम्मान की रक्षा करने में रुचि लेंगे। लेकिन यदि इस कार्य में रुचि न ली गई तो यह स्वाभाविक है कि उक्त अवांछनीय व्यवहार की परिभाषा प्राधिकारियों द्वारा दी जाएगी और बाद में हम ही दोषी होंगे।

हम यह स्पष्ट रूप से कहना चाहेंगे कि कोई भी सेवा या पेशा तब तक जीवित नहीं रह सकता जब तक कि उसके "कर्त्तव्य" और "अकर्त्तव्य" स्पष्ट न हों। जहां एक तरफ शिक्षकों के विशेषाधिकारों की रक्षा की जानी चाहिए, और हम इस रिपोर्ट में शिक्षकों को उचित सम्मान तथा महत्वपूर्ण लाभ दिलवाने की सिफारिशें कर रहे हैं, वहां दूसरी तरफ शिक्षकों को अपनी जिम्मेदारियां भी समझनी चाहिएं। इस विषय में राजनीतिज्ञों या अन्य विभिन्न प्राधिकारियों को दोष न देना होगा कि उन्होंने शिक्षकों के "अकर्त्तव्य" बताए नहीं हैं या उन दूसरे देशों का उदाहरण देना उचित नहीं होगा जिनमें यह कहा जाता है कि शिक्षकों की जिम्मेदारियां नहीं बताई जाएंगी। हम विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की केंद्रीय

तालिका 3

किसी शिक्षक के वृत्तिक नैतिक मूल्यों के विरुद्ध समझी जाने वाली बातें
('हां' कहने वाले उत्तरदाताओं की प्रतिशतता)

बातें	विश्वविद्यालय के शिक्षक	कालेज के शिक्षक
1	2	3
(i) "बाजार नोट्स" प्रकाशित करवाकर धन कमाना	84.79	80.78
(ii) समाचार-पत्रों में देश की शिक्षा नीति की आलोचना करने वाले लेख देना	22.25	22.44
(iii) बहुत पहले तैयार किए गए "नोट्स" के आधार पर पढ़ाना	88.86	85.17
(iv) सार्वजनिक रूप से विरोध प्रदर्शन कि वर्तमान सरकार बदलनी चाहिए	46.13	46.69
(v) पढ़ाने के बजाय "नोट्स" लिखवाना	84.79	79.10
(vi) पक्षपात करके उच्च एवं निम्न ग्रेड देना	87.97	84.35
(vii) विधानसभाओं एवं लोकसभा के चुनावों में भाग लेना	34.56	37.58
(viii) छुट्टी के बिना कक्षाएं छोड़ देना	84.89	81.68
(ix) अध्यापक संघ द्वारा किए जाने वाले कानूनी विरोधों में भाग लेना	18.52	22.65
(x) धन कमाने के लिए ट्यूशन करना	79.38	74.94
(xi) छात्रों को अन्य साथियों या साथियों के दल के विरुद्ध भड़काना	87.92	83.27

तालिका 4

वृत्तिक नैतिक मूल्यों के विरुद्ध बातें
(उत्तरों का प्रतिशतता-वितरण)

कोटिक्रम†	बातें	††उत्तर देने वालों की प्रतिशतता	कोटिक्रम	बातें†	उत्तर देने वालों की प्रतिशतता
1	2	3	4	5	6
विश्वविद्यालय			कालेज		
(I)	(iii)	88.86	(I)	(iii)	85.17
(II)	(vi)	87.97	(II)	(vi)	84.35
(III)	(xi)	87.92	(III)	(xi)	83.27
(IV)	(viii)	84.89	(IV)	(viii)	81.68
(V)	(i)	84.79	(V)	(i)	80.78
(VI)	(v)	84.79	(VI)	(v)	79.10
(VII)	(x)	79.38	(VII)	(x)	74.94

†उत्तरों की उच्च प्रतिशतता के आधार पर
††बात (I)

टिप्पणी

(i) "बाजार नोट्स" प्रकाशित करके धन कमाना
(iii) बहुत पहले तैयार किए गए "नोट्स" के आधार पर पढ़ाना)
(v) पढ़ाने के बजाय नोट्स लिखवाना
(vi) पक्षपात करके उच्च और निम्न ग्रेड देना
(viii) छुट्टी के बिना कक्षा छोड़कर चल जाना
(x) धन कमाने के लिए ट्यूशन करना
(xi) छात्रों को अन्य साथियों या साथियों के दल के विरुद्ध भड़काना

विश्वविद्यालय समीक्षा समिति द्वारा आचार संहिता के संबंध में की गई सिफारिशों के पक्ष में हैं जो मूलतः इस प्रकार हैं :—

(i) अकादमिक कार्य यथा तैयारी/लेक्चर, निदर्शन, मूल्यांकन, निरीक्षण आदि पूरा न करना,

(ii) छात्रों के मूल्यांकन में पक्षपात,

(iii) छात्रों को अन्य छात्रों या शिक्षकों के विरुद्ध भड़काना (लेकिन, संगोष्ठियों या अन्य स्थानों पर, जहां छात्र उपस्थित हों, किसी शिक्षक द्वारा अपने सैद्धांतिक मतभेद व्यक्त करने के अधिकार पर इसका कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा),

(iv) साथियों या छात्रों के साथ अपना रिश्ता निकालते हुए जाति, वर्ण, धर्म, वंश, सेक्स संबंधी प्रश्न उठाना तथा फायदा उठाने के लिए उपर्युक्त का प्रयोग करने की कोशिश करना,

(v) उचित प्रशासनिक एवं अकादमिक संस्थाओं और/या विश्वविद्यालय के अधिकारियों के निर्णयों को कार्यान्वित करने से इन्कार करना, किसी शिक्षक का अनुचित व्यवहार माना जाएगा (लेकिन वह उनकी नीतियों या निर्णयों के बारे में अपने मतभेद व्यक्त कर सकता है) । इसके अतिरिक्त अध्यापन प्रक्रिया, अनुसंधान तथा अन्य कार्यकलापों के दौरान विघ्न डालना, हस्तक्षेप करना, धमकी या बल प्रयोग करना, तथा बौद्धिक ईमानदारी के नियमों का उल्लंघन करना तथा दूसरे लोगों के लेखों, अनुसंधान तथा निष्कर्षों का इरादतन दुरुपयोग करना भी किसी शिक्षक का अनुचित व्यवहार माना जाएगा ।

ये नई बातें नहीं हैं । उदाहरण के लिए 'द एकेडेमिक राइट्स एंड रेसपोंसिबिलिटीज आफ द यूनिवर्सिटी आफ कैलिफोर्निया" में इनके बारे में स्पष्ट उल्लेख किया गया है ।

हम शिक्षक समुदाय से अनुरोध करेंगे कि वे अपने ऊपर कार्य निष्पादन का उपयुक्त मापदंड लागू करें ताकि हमारे समाज में उसे सर्वाधिक सम्मान मिल सके ।

मुख्य सिफारिशें

8.01 राष्ट्रीय शिक्षा नीति का समर्थन

आयोग ने समाज के सदस्यों, छात्रों और शिक्षकों तथा शिक्षा-विदों के साथ व्यापक चर्चाएं की तथा शिक्षा के लगभग सभी पहलुओं शिक्षा प्रणाली, संस्थाओं के कार्यकरण, उपलब्ध सुविधाओं, शिक्षकों की दशा तथा शिक्षा पद्धति से संबद्ध समस्त बिन्दुओं पर व्यावहारिक रूप से विचार किया। राष्ट्रीय शैक्षिक योजना तथा प्रशासन संस्थान की केंद्रीय तकनीकी एकक द्वारा संचालित अध्ययन के दौरान जो आंकड़े एकत्र किए गए हैं उनसे हमें अपने विचार एवं सिफारिशों का गुणात्मक आधार तैयार करने में काफी सहायता मिली है। हम 1968 में संसद द्वारा पारित संकल्प के रूप में अंगीकृत राष्ट्रीय शिक्षा नीति के पैरा 3 से पूर्णतः सहमत हैं जिसे हम नीचे उद्धृत कर रहे हैं :—

"भारत सरकार इस बात से आश्वस्त है कि देश के आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास राष्ट्रीय एकता तथा समाजवादी ढांचे के आदर्श को प्राप्त करने के लिए शिक्षा आयोग द्वारा संस्तुत व्यापक दिशा निर्देशों के आधार पर शिक्षा का आमूल पुनर्गठन करना परमावश्यक है। इससे शिक्षा पद्धति में परिवर्तन होगा और लोगों के जीवन से इसका घनिष्ठ संबंध जुड़ेगा। इसमें शिक्षा अवसरों के विस्तार के लिए सतत प्रयास करने, सभी स्तरों पर शिक्षा की क्वालिटी उन्नत करने हेतु सतत एवं गहन प्रयत्न करने, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के विकास पर जोर देने तथा नैतिक एवं सामाजिक मूल्यों का संवर्धन करने के कार्य शामिल होंगे। शिक्षा पद्धति को चरित्रवान तथा योग्य युवक-युवतियां पैदा करनी चाहिएं जो राष्ट्रीय सेवा तथा विकास के प्रति वचनबद्ध हों। उसके बाद ही, शिक्षा राष्ट्रीय प्रगति के संवर्धन, सामूहिक नागरिकता एवं संस्कृति का बोध उत्पन्न करने तथा राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकेगी। यदि देश को अपनी महान सांस्कृतिक विरासत एवं अद्भुत क्षमताओं के साथ राष्ट्रों के समुदाय में अपना उचित स्थान प्राप्त करना है तो उपर्युक्त कार्य अत्यंत आवश्यक है।"

हमारी राय है कि इस संकल्प के आधार पर एक क्रियात्मक कार्यक्रम तैयार किया जाए ताकि शिक्षकों को अनुभूत परिवेश के एक अंग के रूप में देखा जा सके। अतः हम सामान्यतः शिक्षा पद्धति के संबंध में अपने कुछ विचार प्रस्तुत कर रहे हैं। रिपोर्ट के मुख्य कलेवर तथा विशेष रूप से अध्याय-2 में हम ऐसी शिक्षा से संबंधित अपने सामान्य विचार पहले ही व्यक्त कर चुके हैं जो लोगों के जीवन तथा विशेष रूप से हमारे समाज के सृजनशील कार्य से संबद्ध होगी। अतः हम यहां अपनी बात विस्तारपूर्वक नहीं कहेंगे। हम यह भी कह सकते हैं कि हमारे सुझाव एवं सिफारिशें वस्तुतः एकीकृत रूप में हैं क्योंकि हमने शिक्षा पद्धति की जांच भी इसी रूप में की है। इसलिए, यदि ये सिफारिशें किसी निश्चित क्रम में दी गई हैं तो इसका यह मतलब नहीं है कि अंतिम सिफारिश का महत्व भी सबसे कम है और कि "परिवर्तन" तभी संभव होगा जब अमल/में लाने के लिए कुछ सुविधाजनक विचार चुन लिए जाएं।

8.02 उत्कृष्टता एवं प्रासंगिकता का अनुसरण : पाठ्यचर्या

हमारे विचार में यदि शिक्षा को मानव एवं समाज का निर्माण करने वाला कार्य कहा जाए तो गलत नहीं है। क्वालिटी की तलाश पर सबसे अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए तथा दूसरी तरफ ध्यान आकर्षित करने वाली किसी भी चीज को दूर रखना चाहिए। छात्रों तथा शिक्षकों की बुनियादी अन्योन्य क्रिया पाठ्यचर्या पर आधारित होती है जिस पर कि उच्च शिक्षा के क्षेत्र में पर्याप्त ध्यान दिया गया है और काफी अनुसंधान किया गया है। हमारी जैसी परिस्थितियों में पाठ्यचर्या पर आधुनिकीकरण की दृष्टि से विचार किया जाना चाहिए क्योंकि इसमें अप्रचलित बातें बहुत जल्दी घर कर लेती हैं और जहां तक प्रासंगिकता का प्रश्न है हम अन्य देशों

में उनके समाजों के लिए जो कुछ भी हुआ है उसे मानने के लिए तैयार रहते हैं। प्रासंगिकता का संबंध व्यक्तियों की जरूरतों, संभावित रोजगार और सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक विकास के लिए समाज की जरूरतों से है। पाठ्यचर्या तैयार करते समय आधुनिक अधिगम सिद्धांतों को भी ध्यान में रखना चाहिए ताकि प्रत्येक व्यक्ति को लाभ (संज्ञानात्मक, सर्जनात्मक, अभिवृत्तिक और सामाजिक एवं शारीरिक कौशल) प्राप्त हो सके। मूल्यांकन इसका अभिन्न अंग है क्योंकि इसके आधार पर अधिगम के उद्देश्यों में परिवर्तन किया जा सकता है। "शिक्षण" की प्रणाली या शिक्षक तथा छात्र के बीच अन्योन्य क्रिया की विधियां भी उपयुक्त होनी चाहिएं ताकि पाठ्यचर्या के उद्देश्य प्राप्त किए जा सकें। आधुनिक तकनीक के आधार पर किसी भी व्यक्ति द्वारा अपने प्रयास तथा अपनी गति से विद्या प्राप्त किए जाने की संभावनाएं है और उप परिणाम प्राप्त करने के लिए ऐसी संभावनाओं का उपयोग किया जाना चाहिए।

दुर्भाग्य से, इस संबंध में हमारे देश की स्थिति बहुत ही असंतोषजनक है। पाठ्यचर्या में सिवाय इसके और कोई विचार नहीं किया जाता है कि "पाठ्यक्रम को पूरा कैसे किया जाए" या इसमें अधिक से अधिक सामग्री का समावेश कैसे किया जाए। ये पाठ्यचर्याएं बुनियादी तौर पर लैक्चररों द्वारा पूरी की जाती हैं जिनमें छात्रों के लघु समूहों या व्यक्तियों से कोई सक्रिय संपर्क स्थापित नहीं किया जाता है। विभिन्न समितियों और आयोगों के अनुसार परीक्षाएं न तो विश्वसनीय हैं और न ही मान्य। अधिगम की दशा अत्यंत शोचनीय है और वर्तमान वस्तुस्थिति तो और भी खराब है। कागज पर भी जो कुछ "पढ़ाया" जाना है वह पूरा नहीं होता क्योंकि एक वर्ष में से पूरा किये जाने के लिए पर्याप्त कार्य-समय नही होता और अप्रचलित "नोट्स" से लेक्चर देकर पढ़ाया जाता है तथा कुछ मामलों में तो "नोट्स" ही लिखवा दिए जाते हैं। परीक्षाओं के लिए भी, विद्यार्थी पाठ्यक्रम के अच्छे खासे भाग को बिलकुल छोड़ सकता है क्योंकि परीक्षा में उन प्रश्नों को पूछे जाने की संभावना नहीं होती जो पिछले वर्ष पूछे गए थे और प्रश्नों के उत्तर देने में भी 50 प्रतिशत का विकल्प अवश्य रहता है। हम यहां "नकल करना" जैसे अन्य कदाचारों का उल्लेख नहीं करेंगे जिनका कि प्रयोग उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है।

8.03 न्यूनतम मानकों का प्रवर्तन

इसके आधार पर यह सिफारिश की जा सकती है कि (क) विषयों के संकायवार वर्ग बनाकर पाठ्यचर्या के अनुसंधान एवं विकास के लिए केंद्र स्थापित किए जाने चाहिएं, (ख) विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और केंद्र तथा राज्य सरकारों को कम से कम पूर्वस्नातक डिग्रियां देने के लिए यह देखते हुए न्यूनतम मानक लागू करने चाहिए कि संस्थाओं में कम से कम 180 दिन अवश्य पढ़ाई हो और शिक्षक लोग लेक्चरों, अनुशिक्षणों, संगोष्ठियों, प्रयोगशालाओं आदि के संबंध में अपना कर्त्तव्य पूरा करें, और (ग) परीक्षाओं में इस उद्देश्य से सुधार किया जाना चाहिए कि उचित जांच तथा रिकार्ड रखते हुए छात्रों का सतत आंतरिक मूल्यांकन (कक्षाध्यापक द्वारा) किया जाए जिसको अंतिम परीक्षाफल में काफी महत्व दिया जाना चाहिए, (घ) शिक्षकों को अपने सेवाकाल के दौरान प्रत्येक पांच वर्ष में पद्धतिपूर्ण किंतु अल्पकालीन प्रशिक्षण पाठ्यक्रम दिए जाने चाहिए जिससे वे अपने ज्ञान को अद्यतन बना सकें। हम खासतौर पर पूर्वस्नातक कार्यक्रमों में आधारभूत पाठ्यक्रम शुरू करने के पक्ष में हैं ताकि हम अपने छात्रों को अपनी परम्परा, संस्कृति, इतिहास, स्वतंत्रता संग्राम, संविधान, विकासात्मक समस्याओं तथा उन प्रबुद्ध मूल्यों की आवश्यकता का बोध करा सकें जिनके कारण जाति, वर्ण, धर्म, भाषा या क्षेत्र का लिहाज किए बिना-आधुनिकता एवं एकता आएगी। हम सिफारिश करते हैं कि इन विषयों पर व्यापक पाठ्क्रम एवं पाठ्यसामग्री तैयार की जाए और इस प्रयोजन के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग लेखकों संपादकों का चयन तथा धन की व्यवस्था करके इस काम को करवा सकता है। हम सिफारिश करते हैं कि अनुप्रयुक्त एवं रोजगार प्रधान पाठ्यक्रम व्यापक पैमाने तथा विधि रूप में शुरू किए जाएं और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग इस क्षेत्र में पर्याप्त ससाधनों सहित अपना कार्यक्रम लागू करे तथा इच्छुक संस्थाओं को सलाह देने की व्यवस्था भी करे और परिवीक्षण एवं मूल्यांकन का कार्य भी करे। यह योजना लचीली होनी चाहिए क्योंकि संस्थाओं को इस प्रयोजन के लिए विभिन्न प्रकार की नीतियां अपनाने की आवश्यकता पड़ सकती है। इस पहलू पर हम बाद में भी चर्चा करेंगे।

8.04 चुनींदा कालेजों को स्वायत्तता तथा मुख्य धन-समर्थन

क्वालिटी निर्धारण में उच्च शिक्षा के संस्थागत गठन को एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी पड़ती है। हमारे देश में, 8[illegible] प्रतिशत पूर्वस्नातक एवं 55 प्रतिशत स्नातकोत्तर शिक्षा संबद्ध कालेजों में प्रदान की जाती है जिनके शिक्षकों का न तो पाठ्यच[illegible] पर नियंत्रण होता है और न ही छात्रों के कार्यनिष्पादन के मूल्यांक[illegible] पर। इन संस्थाओं में अनुसंधान सुविधाएं नाममात्र की होती या बिलकुल होती ही नहीं। इस प्रकार छात्रों की सर्जनात्म[illegible] पहल के लिए कोई रास्ता या मौका ही उपलब्ध नहीं होता और विश्वविद्यालयों के सुदूरवर्ती नियंत्रण में प्राय: कठपुतली ब[illegible] कर रह जाते हैं। इसके बावजूद, ऐसे कालेजों की संख्या प्रति[illegible] लगभग सौ की दर से बढ़ती ही जा रही है। विश्वविद्यालय अनुद[illegible] आयोगकी वित्तीय सहायता के पात्रता-मानदंड के अनुसार लग[illegible] 40 प्रतिशत कालेज "अक्षम" हैं लेकिन फिर भी अपर्याप्त संसाध[illegible] तथा बहुत कम सुविधाओं के साथ पढ़ाने का कार्य जारी रखे हैं। इस तरह हम धर्म संकट में पड़ गए हैं कि सीमित धन से उनकी कार्यकुशलता में बहुमुखी वृद्धि नहीं कर सकते और चयनात[illegible] सहायता पर संदेह किया जाता है और कभी-कभी उसे "संभ्रांत[illegible] वादी" मानकर रद्द कर दिया जाता है। शिक्षक एवं संस्था स्वायत्तता को स्वीकार कर लिया गया है और नीति के रूप उसका समर्थन भी किया गया है लेकिन अभी उस पर अमल [illegible] किया गया है। हमारे विचार में यही उचित समय है जब लाभ[illegible] शिक्षा-कार्यक्रमों को लागू किया जाना चाहिए। राज्यों, संब[illegible] विश्वविद्यालयों तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को स[illegible] लित रूप से तत्काल कुछ सौ ऐसे कालेजों का पता लगाना चा[illegible]

जिनमें साझा निधियों से समेकित उच्च निविष्टियां लगाई जाएं और साथ ही साथ विकासात्मक विभागों के सहयोग से उनके पाठ्य-क्रमों, शिक्षा प्रणालियों, समुदाय-कार्य, परीक्षाओं तथा अकादमिक कार्य प्रबंध के स्वरूप एवं डिजाइन में सुधार किए जाएं। इस सूची में बड़े कालेज शामिल किए जा सकते हैं लेकिन उसमें कुछ ऐसे कालेज भी शामिल किए जाने चाहिएं जो दूरदराज के इलाकों और जनजाति क्षेत्रों में स्थित हैं और जो अच्छी शिक्षा के व्यापक लाभों के अन्य प्रयोजनों को पूरा कर रहे हैं। इनको प्रथम चरण में अन्य स्वायत्त कालेज घोषित किया जा सकता है और उनकी प्रगति का परिवीक्षण एवं मूल्यांकन किया जाना चाहिए ताकि दूसरे चरण में कुछ सौ दूसरे कालेजों को स्वायत्त कालेज घोषित किया जा सके। चूंकि ये कालेज उत्कृष्टता प्राप्त करने का प्रयास करेंगे अतः इन कालेजों में दाखिले के लिए छात्रों का विशेष आधार पर चयन करना आवश्यक होगा अथवा कम से कम 50 से 60 प्रतिशत छात्र ऐसे होने चाहिएं जो परीक्षा द्वारा निर्धारित योग्यता प्राप्त हों। उन्हें छात्रावास की सुविधाएं प्रदान करनी होंगी ताकि गैर-छात्र स्थानीय उनका लाभ उठा सकें। यदि ऐसे 400 कालेज चुन लिए जाते हैं तो कुछ ही वर्षों में लगभग 4 लाख छात्र उच्च कोटि की शिक्षा प्राप्त कर रहे होंगे जिसके कारण औसत राष्ट्रीय स्तर में वृद्धि होगी तथा सर्जनात्मक कार्य के माध्यम से समुदाय एवं पर्यावरण में काम करने वाले हमारे युवा लोगों को कार्य-आदर्श प्राप्त होगा।

8.05 दूर अधिगम तथा पुस्तकालयों में दृश्य-श्रव्य सामग्री

हम यह जानते हैं कि उच्च शिक्षा को और अधिक व्यापक बनाना महत्वपूर्ण है, विशेषतः उन वर्गों तथा क्षेत्रों के लोगों तक इसे पहुंचाया जाए जिन्होंने इस स्तर की शिक्षा में अभी प्रवेश ही किया है। अन्य अनेक आवश्यकता आधारित पाठ्यक्रमों का प्रसार किया जाना चाहिए भले ही उन्हें पढ़कर डिग्री प्राप्त न हों। आधुनिक तकनीक तथा जनसंचार के माध्यम से आजकल अधिकाधिक लोगों तक पहुंचना संभव है और पत्राधार शिक्षा को भी एक उच्च कोटि की उद्देश्यपूर्ण शिक्षा में बदला जा सकता है? उसी तकनीक से विश्वविद्यालयों एवं चुनींदा कालेजों के पुस्तकालयों में श्रव्य अथवा वीडियो कैसेट तथा माइक्रो फिल्म आदि जैसे सॉफ्टवेयर की व्यवस्था करके औपचारिक शिक्षा का भी संवर्धन किया जा सकता है ताकि छात्र ऐसी सामग्री का लाभ उठा सकें। हम केन्द्रीय सरकार के एक राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना करने के संकल्प का स्वागत करते हैं। हमें आशा है कि इस विश्वविद्यालय के कार्य-कलाप पत्राचार संस्थानों की वर्तमान पद्धति लाभ उठाते हुए इस प्रकार तैयार किए जाएंगे कि भारत के कोने-कोने में उनका कारगर जाल फैल जाए। हम यह भी सिफारिश करते हैं कि उपग्रह के माध्यम से प्रसारित किए जा रहे दूरदर्शन कार्यक्रमों का विस्तार किया जाए और भविष्य में शिक्षा के लिए एक अलग चैनल की व्यवस्था की जाए। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग को कालेजों में श्रव्य एवं वीडियो सोफ्टवेयर लाइब्रेरी स्थापित करने के लिए उचित प्रोत्साहन देना चाहिए। कम्प्यूटर की सहायता से अधिगम को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए और अंततोगत्वा उच्च शिक्षा संस्थाओं में सोफ्टवेयर तथा माइक्रो कम्प्यूटर उपलब्ध कराये जाने चाहिएं।

8.06 समुदाय तथा विकास के साथ संपर्क

गत कुछ दशकों के दौरान भारत में हमने यह स्वीकार कर लिया है कि शिक्षा की संकल्पना को लोगों, उनके कार्यकलापों तथा उनके भावी स्वप्नों के निकट लाया जाए। राष्ट्रीय शिक्षानीति तथा अन्य अनुवर्ती दस्तावेजों में इसका उल्लेख किया गया है। छठी पंचवर्षीय योजना के प्रलेख में शिक्षा, रोजगार तथा विकास के बीच सम्पर्क के महत्व पर बार-बार जोर दिया गया है। हमारे विचार से वह दिन दूर नहीं है जब ऐसे संपर्कों को संगठनात्मक तथा संस्थागत रूप दे दिया जाएगा। स्कूलों में कार्य अनुभव, + 2 स्तर पर व्यावसायिक पाठ्यक्रमों, पूर्वस्नातक स्तर पर रोजगार प्रावधान अथवा अनुप्रयुक्त पाठ्यक्रमों के लिए निस्संदेह रूप से समुदाय से अंशकालिक शिक्षकों की आवश्यकता होगी। गांव के कुम्हार, बैंकमैन, पत्रकार से लेकर इंजीनियर या डाक्टर तक का यह वर्ग इन आवश्यकताओं को पूरा करेगा। आवश्यकता आधारित पाठ्यक्रमों के विकास के लिए सलाह की जरूरत है और इसके लिए सार्वजनिक या निजी क्षेत्रक के उद्योगों के वर्तमान वर्कशापों, अस्पतालों तथा प्रतिष्ठानों की सुविधाओं का उपयोग किया जाना चाहिए। विशेषकर स्नातकोत्तर तथा पूर्वस्नातक कक्षाओं के छात्रों को पर्यावरण संसाधनों तथा स्थानीय स्थिति के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करना चाहिए तथा आंकड़ों का विश्लेषण करना चाहिए ताकि समस्याओं के बारे में उन्हें प्रत्यक्ष जानकारी प्राप्त हो सके और इस सामग्री को योजना तथा विकासात्मक जरूरतों के लिए उपलब्ध किया जा सके। छात्रों को विस्तार कार्य करना चाहिए तथा स्थानीय लोगों के लिए उद्दिष्ट अनवरत शिक्षा कार्यक्रमों में भाग लेना चाहिए। उपर्युक्त दोनों कार्यों से छात्रों का कालेज की चहार दीवारी से बाहर का ज्ञान तथा व्यक्तिगत अनुभव प्राप्त होगा। तत्पश्चात् अनुसंधान का क्षेत्र आता है जोकि उपर्युक्त अध्ययनों के परिणामस्वरूप शुरू किया गया है। लेकिन स्थानीय विकास यथा उपलब्ध साधनों के इष्टतम् उपयोग, कृषि या औद्योगिक उत्पादन या विशेषतः ग्रामीण विकास के लिए उपर्युक्त टैक्नालाजी तैयार करने से संबंधित अनेक समस्याएं हैं जिनका समाधान छात्रों एवं अनुसंधानकर्त्ताओं और स्थानीय प्रशासन तथा विकास कार्मिकों के बीच अनुभव एवं जानकारी का आदान-प्रदान करके किया जा सकता है।

हमारे विचार से सम्पर्क को व्यावहारिक रूप देने तथा कार्यकलापों का समन्वय करने के लिए जिला स्तर पर "शिक्षा तथा विकास परिषदें" स्थापित करना अत्यंत उपयोगी होगा। जिला परिषदों का प्रबंध एवं समन्वय राज्य स्तर की परिषद् करेगी। इन परिषदों का काम योजना एवं विकास के लिए आधारभूत जानकारी प्रदान करना होगा। ये परिषदें समस्या को हल करने से संबंधित विभिन्न कार्यों के लिए आधार एवं कार्मिक जुटाएंगी और वे न केवल उद्योग स्थापित करने बल्कि स्व-रोजगार के अवसर पैदा करने की दृष्टि से रोजगार तथा उद्यमशीलता का सृजन एवं समायोजन करेंगी। हम यह भी जानते हैं कि कार्य प्रचालन का तंत्र अत्यंत महत्वपूर्ण है और उसे तैयार करने के लिए केंद्र में एक कार्यदल का गठन किया जा सकता है। इस कार्य का वित्तीय भार शिक्षा पर नहीं होना चाहिए। इसके लिए धन की व्यवस्था उन संसाधनों से की जा सकती है जिनके विषय में हम आगे चर्चा करने जा रहे हैं।

8.07 शिक्षा के लिए संसाधन

जिन कार्यकलापों के बारे में ऊपर चर्चा की गई है उनको इस भयंकर कमियों वाले वर्तमान, जर्जर तंत्र द्वारा शुरू नहीं किया जा सकता हालांकि यदि शिक्षा को राष्ट्रीय संवृद्धि एवं एकता के लिए सक्रिय साधन के रूप में परिवर्तित करना है तो ये सभी कार्यकलाप जरूरी हैं। हमारी राय में, यदि हम परिवर्तन की चुनौती को स्वीकार करते हैं तो हमें अपने लक्ष्यों, कार्यान्वयन चरणों तथा नीतियों को सावधानीपूर्वक तैयार करना चाहिए और हमें पूरा उत्तरदायित्व संभालने के लिए कटिबद्ध रहना चाहिए। आगे बढ़ने के दृढ़ संकल्प के अभाव में यह स्पष्ट है कि कार्य तथा कार्य पूरा न होने के बीच अंतराल और बढ़ जाएगा तथा अधिक संकट का सामना करना पड़ेगा। अतः बुद्धिमानी इसी में है कि साधन-समस्याओं पर सीधे विचार किया जाए। घोर वास्तविकता यह है कि हमारी घोषणाओं के बावजूद, शिक्षा के लिए नियत राशि योजना के परिव्यय के प्रतिशत के रूप में तथा रुपए के स्थिर मूल्य पर प्रति व्यक्ति के अनुसार— दोनों ही तरह से कम होती जा रही है। योजनागत व्यय प्रथम योजना में 7.5 प्रतिशत से घटकर छठी योजना में 2.6 प्रतिशत रह गया है तो साधारण गणित के अनुसार सातवीं योजना के दौरान 20 या 30 प्रतिशत वृद्धि (2.6 प्रतिशत के ऊपर) भी पर्याप्त नहीं होगी।

हमारे विचार से सफलता की कुंजी "सम्पर्कों" में है जिनका स्थापित किया जाना हमने स्वीकार किया है। शिक्षा पद्धति जन-शक्ति की तैयारी और अनुसंधान तथा विकास, अनवरण शिक्षा तथा विस्तार के माध्यम से सभी विकासात्मक कार्य कर सकती है और उसे करना भी चाहिए। अतः किसी योजना के लिए कल्पित एवं आबंटित प्रत्येक विस्तार तथा विविधतापूर्ण विकास कार्य में शिक्षा के लिए तदनुरूपी निविष्टियों का भी अनुमान लगा लिया जाना चाहिए। इस संबंध में सबसे सरल कार्रवाई यह होगी कि विकास क्षेत्रक के लिए आबंटित राशि का 5 प्रतिशत जनशक्ति, अनुसंधान तथा विकास और उपर्युक्त सम्पर्कों के प्रचालन तथा अनुसंधान एवं शिक्षा की अन्योन्य-क्रिया के वास्ते अलग से निश्चित कर दिया जाए। इसका अधिकांश भाग शिक्षा क्षेत्रक पर खर्च किया जाना चाहिए ताकि इसे सुदृढ़ बनाया जा सके और उसे इच्छित दिशा में मोड़ा जा सके। हम यह नीति निर्णय लेने का जोरदार समर्थन करते हैं कि शिक्षा को विकास में निविष्टि के रूप में माना जाए।

हमें उन प्रक्रियाओं में भी संशोधन करना होगा जिनके माध्यम से धनराशि वास्तविक कार्यकलापों में लगाई जाती है। इस बात को सभी जानते हैं कि यद्यपि राज्य शिक्षा पर अपने बजट की "25 प्रतिशत" राशि खर्च कर सकते हैं। फिर भी, यह राशि शिक्षकों के वेतन, जो वास्तव में बहुत कम हैं, के लिए भी पर्याप्त नहीं होगी। राज्यों को चाहिए कि वे शिक्षा संस्थाओं का अनियोजित विस्तार करने से पहले वर्तमान संस्थाओं को (दफ्तरशाही के बिना) सहायता देने तथा उनको सुगठित करने की नीतियां अपनाएं। विश्वविद्यालयों को भी अपने वित्तीय नियमों में संशोधन करना होगा ताकि उनके द्वारा प्राप्त राशि बैंक ही में न पड़ी रहे बल्कि वह बुनियादी यूनिटों (यथा विभाग) तथा अन्वेषकों को दी जाए जिनके लिए वह उद्दिष्ट थी। वित्तीय प्राधिकार का अंतरण भी परम आवश्यक है ताकि लोग तथा बुनियादी एकक अधिक स्वायत्तता एवं शीघ्रता से काम कर सकें।

8.08 संस्थाओं का प्रबंध

यदि शिक्षा पद्धति समन्वित नहीं है, उसमें अनुशासन नहीं है और यदि उसमें असंतोषजनक कार्य होता है अथवा ईमानदारी से काम करने की इच्छा नहीं है तो शिक्षा में किए जाने वाले सभी परिवर्तन एवं सुधार तथा उस पर किए जाने वाले सारे खर्च व्यर्थ सिद्ध होंगे तथा उनके प्रतिकूल परिणाम भी निकल सकते हैं। हमें अपने विचार व्यक्त करने का जो विशेषाधिकार दिया गया है और शिक्षा पद्धति के परिणामों तथा उसके निष्पादन से हमारे संबंधों के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि इस बारे में दो-सूत्री नीति अपनाई जानी चाहिए। हमें शिक्षक को सम्मान, अच्छा वेतन, निष्पादन के आधार पर अच्छी जीवनवृद्धि की संभावनाएं तथा पर्याप्त व्यक्तिगत तथा वृत्तिक सुविधाएं प्रदान करनी चाहिए। हमें उसकी विशिष्ट शिकायतें दूर करने की व्यवस्था करनी चाहिएं लेकिन इन सबके बदले हम उससे कार्य एवं जिम्मेदारी निभाने की अपेक्षा करते हैं। प्रबंधन को सुदृढ़ बनाना होगा ताकि लोकतंत्र तथा उत्तरदायित्व के बीच उत्पन्न हो गए असंतुलन को दूर किया जा सके। इसके लिए भय एवं पक्षपात के बिना अधिनियमों, कानूनों तथा प्रशासन और "प्रबंधकों" के उत्तरदायित्व में भी संशोधन करना होगा। इस संबंध में हम सामान्यतः केंद्रीय विश्वविद्यालयों की समीक्षा समिति द्वारा की गई सिफारिशों के पक्ष में हैं। हमें यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि कुलपति सम्मेलनों में भी इसी प्रकार के विचार व्यक्त किए गए हैं।

8.09 रहन-सहन तथा कार्य की दशाएं

जैसा कि ऊपर कहा गया है, हमें पक्का विश्वास है कि शिक्षक के पेशे में योग्य व्यक्तियों को लाने तथा हमारे छात्रों और विद्यार्थियों को उत्कृष्ट ज्ञान देने हेतु शिक्षकों को अवसर प्रदान करने के लिए हमें सम्पूर्ण देश में रहन-सहन तथा कार्य की दशाओं में पर्याप्त सुधार करना होगा। अतः हम सिफारिश करते हैं कि वेतनमान, महंगाई भत्ता, पदोन्नति के अवसर, कार्यदशाएं तथा सेवा की शर्तें विशेष रूप से अध्ययन छुट्टी तथा विश्राम छुट्टी की सुविधाएं पूरे देश में एक समान होनी चाहिएं। लेकिन यह बात दुर्गम क्षेत्रों यथा लद्दाख, लाहोल स्पिती, उत्तर पूर्वी क्षेत्र आदि में दिए जाने वाले कठिनाई भत्ते पर लागू नहीं होगी।

हम सिफारिश करते हैं कि सभी आयुर्विज्ञान संस्थाओं (जिनमें प्राइवेट प्रैक्टिस की अनुमति नहीं है) में शिक्षकों को अतिरिक्त प्रैक्टिसबंदी भत्ता दिया जाना चाहिए ताकि आय के अंतर को कम किया जा सके और शिक्षकों में अधिक संतोष तथा गतिशीलता आए। जिन शिक्षकों को आपातकालीन या रात की ड्यूटी पर जाना पड़ता है उनको स्टाफ कार की सुविधाएं उपलब्ध कराई जानी चाहिए।

हम सिफारिश करते हैं कि चूंकि शिक्षक लोग सेवा में देर (एम० फिल० लगभग 25 वर्ष तथा पी० एच० डी० लगभग 28 वर्ष की आयु में) से आते हैं, अतः लेक्चरर का पद ग्रहण करते समय उन्हें अधिक वेतन दिया जाना चाहिए। हमारे विचार में पदग्रहण करते समय एम० फिल० के एक तथा पी० एच० डी० को तीन वेतन-वृद्धियां देना पर्याप्त होगा। वृत्तिक संकायों के लिए भी इसी प्रकार का फार्मुला अपनाया जा सकता है।

चूंकि लगभग 84 प्रतिशत कालेज शिक्षकों तथा 60 प्रतिशत विश्वविद्यालय शिक्षकों को मकान नहीं दिए गए हैं और चूंकि अधिसंख्य शिक्षकों को मकानों पर एक तिहाई या इससे भी अधिक अपनी आय का हिस्सा खर्च करने के बावजूद अन्य परिवारों के साथ शामिलात बाथरूमों का इस्तेमाल करना पड़ता है अतः हम सिफारिश करते हैं कि सातवी योजना के दौरान संकाय आवास निर्माण का एक बड़ा कार्यक्रम शुरू करना चाहिए जिसकी दो शर्तें हों—(i) आवास की व्यवस्था यदि "पात्रता" के अनुसार न हो सके तब भी छोटे-छोटे फ्लैट हों और उनमें बाथरूम तथा किचिन की सुविधाएं हों, (ii) 20 प्रतिशत मकान उन नए लोगों के लिए आरक्षित होने चाहिएं जो उसी स्थान या राज्य के न हों जहां संस्था स्थित है। इससे उनमें गतिशीलता आएगी और परिणामस्वरूप राष्ट्रीय एकता भी। हम सिफारिश करते हैं कि सातवीं योजना के दौरान कम से कम 25 प्रतिशत अतिरिक्त शिक्षकों के लिए उपर्युक्त प्रकार की आवास व्यवस्था की जाए और इतने ही शिक्षकों के लिए अगली योजना में आवास की व्यवस्था की जाए। सुझाव है कि शिक्षा संस्थाओं को मामूली ब्याज पर अर्थात् लगभग 4 प्रतिशत की दर पर ऋण देने के लिए रु० 250 करोड़ की धनराशि की व्यवस्था की जाए। इस व्यवस्था से मकान किराया भत्ते पर खर्च होने वाली रकम की बचत होगी। इसमें शिक्षको के मकान किराया अदावान की राशि शामिल की जाए और एक परिक्रामी निधि बनाई जाए।

आवास सुविधाओ की आवश्यकता न केवल सेवाकाल के दौरान बल्कि सेवा निवृत्ति के बाद भी होती है अतः मकान निर्माण ऋण जरूरी हैं। हम सुझाव देते है कि प्रत्येक संस्था के लिए एक परिक्रामी ऋण निधि की व्यवस्था की जानी चाहिए और साथ ही साथ वित्तीय संस्थाओं द्वारा प्रदत्त धन राशि का 20 से 30 प्रतिशत भाग शिक्षकों के लिए आबंटित किया जाना चाहिए। जैसा कि आमतौर पर अन्य कर्मचारियो के लिए किया जाता है राज्य सरकारों को चाहिए कि वे शिक्षकों द्वारा निजी मकान बनवाए जाने के लिए भूमि भी आबंटित करे।

हम यह भी सिफारिश करते हैं कि शिक्षकों को सवारी खरीदने के लिए भी ऋण की सुविधा दी जानी चाहिए। इसकी आवश्यकता इसलिए हैं क्योंकि सार्वजनिक परिवहन व्यवस्था अपर्याप्त है।

यह स्पष्ट है कि यदि शिक्षक को अद्यतन ज्ञान से परिचित रखना है और यदि उसे अपने छात्रों के लिए समुचित रूप से लेक्चर तैयार करना है तो उसे स्वयं सतत अध्ययन करना होगा। हमने देखा है कि आजकल अधिसंख्य शिक्षक आवास की कमी या घने आवास के कारण न तो घर पर अध्ययन कर पाते हैं और न ही वे ड्यूटी के स्थान पर अध्ययन या अपने छात्रों से (कक्षा के बाहर) मिल पाते हैं। वास्तव में, संस्थाओं में कार्य स्थान का अभाव ही मुख्य कारण है कि कक्षाओं में पढ़ाने के तुरंत बाद शिक्षक लोग कालेजों से चले जाते हैं। हम सिफारिश करते हैं कि सभी शिक्षकों के लिए लाकरों की व्यवस्था की जानी चाहिए ताकि उनमें वे अपना रिकार्ड एवं छात्रों के कार्य को रख सकें। प्रत्येक कालेज या विभाग में पूर्व स्नातक कालेजों के कम से कम 25 प्रतिशत शिक्षकों के लिए प्रकोष्ठों का निर्माण किया जाना चाहिए। सभी स्नातकोत्तर शिक्षकों के पास एक एक प्रकोष्ठ होना चाहिए। हमारी राय में इस प्रयोजन के लिए 8 या 9 वर्गमीटर स्थान पर्याप्त होगा। इस प्रकार लगभग 1.5 लाख प्रकोष्ठों की जरूरत होगी और इस काम के लिए लगभग 150 करोड़ रु० की व्यवस्था की जानी चाहिए। यह आवश्यकता सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।

उन चिकित्सा सुविधाओं का अभाव, जो कर्मचारियों के अन्य अधिकांश वर्गों को उपलब्ध हैं, एक और ध्यानाकर्षक मामला है और वह शिक्षकों पर एक तरह का भार है। इसकी चर्चा हमने संबंधित अध्याय में की है। हमारी सिफारिश है कि कालेजों तथा विश्वविद्यालयों में जहां ऐसी मुफ्त चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध नहीं है वहां छोटी-मोटी तकलीफों के लिए शिक्षकों को प्रतिमास 50.00 रु० का चिकित्सा भत्ता दिया जाए। बड़ी बीमारियों यथा कैंसर या टी० बी०, हृदय रोग, दुर्घटना आदि (जिनके कारण अस्पताल में भर्ती होना पड़े) का पूरा खर्च संस्थाओं को वहन करना चाहिए और उतनी अवधि की पूरे वेतन की छुट्टी भी दी जानी चाहिए।

हमने संगत अध्याय में शिक्षकों को सेवा निवृत्ति हितलाभ यथा अंशदायी भविष्य निधि, उपदान, पेन्शन तथा सामूहिक बीमा दिये जाने की आवश्यकता के संबंध में सिफारिशें की हैं। छुट्टी की सुविधाओं, विशेष रूप से अध्ययन छुट्टी, विश्राम छुट्टी, प्रसूति छुट्टी तथा यात्रा सुविधाओं यथा घर जाने की यात्रा रियायत तथा छुट्टी यात्रा रियायत के बारे में भी हमने सिफारिश की है कि ये सुविधाएं केंद्रीय विश्वविद्यालयों के पैटर्न पर सभी शिक्षकों को समान रूप से दी जानी चाहिए।

आधुनिक संसार संचार व्यवस्था पर काफी कुछ निर्भर करता है। हालांकि शिक्षकों को वर्ग 1 ग्रेड में माना जाता है फिर भी, उनके घरों या संस्थाओं में टेलीफोन की सुविधाएं नहीं हैं। हम सिफारिश करते हैं कि कालेजों तथा विश्वविद्यालयों में टेलीफोन की सुविधाओ में वृद्धि की जानी चाहिए। प्रत्येक कालेज में कम से कम एक सार्वजनिक टेलीफोन आफिस होना चाहिए और कम से कम रीडरों या उनसे उच्च पदाधिकारियों के प्रकोष्ठों/कमरों में सिटी टेलीफोन की सुविधाएं होनी चाहिएं ताकि वे बाहर के लिए या बाहर से आने वाले टेलीफोनों पर बात कर सकें। हमने यह भी देखा है कि शिक्षकों को सामान्यतः सचिवालयी सेवा या रिप्रोग्राफी की सुविधा उपलब्ध नही होती है। हम सिफारिश करते है कि हरेक कालेज या विश्वविद्यालय विभाग में उनमें काम करने वाले प्रत्येक 10 या 15 शिक्षकों के लिए एक टाइपिस्ट उपलब्ध कराया जाना चाहिए और रिप्रोग्राफिक सहायता के रूप में एक टाइपराइटर तथा कम से कम एक डुप्लिकेटिंग मशीन अवश्य होनी चाहिए। हमें विश्वास है कि कुछ वर्षों में कालेजों/

विभागों में जिरोक्स भी उपलब्ध होगी क्योंकि आजकल यह सुख-साधन की वस्तु नहीं रह गई है बल्कि इससे शिक्षण में वास्तव में काफी सहायता मिलती है ।

शिक्षक के पेशे के उपकरण उसकी पुस्तकें होती हैं । आजकल के शिक्षकों ने व्यापक अध्ययन नहीं किया होता है—इसका एक मुख्य कारण यह भी है कि पुस्तकों की कीमत बहुत अधिक है । किसी शिक्षक को अपनी निजी पुस्तक से जबरदस्त प्रेरणा तथा शक्ति मिलती है । हम सिफारिश करते हैं कि शिक्षकों को पुस्तक इमदाद दी जानी चाहिए । यदि वे प्रत्येक वर्ष 500.00 रु० तक की पुस्तकें खरीदते हैं तो उन्हें इमदाद के रूप में पुस्तकों की 50 प्रतिशत कीमत दी जा सकती है ।

शिक्षक प्रायः यह मांग करते रहे हैं कि उनके बच्चों को स्कूली सुविधाएं दी जाएं । हमें मालूम है कि केंद्रीय सरकार प्रत्येक जिले में केंद्रीय विद्यालय खोलने जा रही है । चूंकि हमने अपनी अंतरिम रिपोर्ट में शिक्षकों के बच्चों को शिक्षा प्राप्त करने के लिए केंद्रीय विद्यालय खुलवाये जाने की सिफारिश की थी और चूंकि प्रगति इसी बात पर निर्भर करती है अतः हम पुनः सिफारिश करते हैं कि केंद्रीय विद्यालयों में शिक्षकों के बच्चों को दाखिले में प्राथमिकता दी जानी चाहिए । हम महसूस करते हैं कि शिक्षक वर्ग इससे उच्च स्तर बनाये रखने तथा स्कूल-समुदाय सम्पर्क स्थापित करने में रुचि लेगा ।

हमने सिफारिश की थी कि जिला शिक्षा एवं विकास परिषदें स्थापित की जाएं । इन परिषदों की विभिन्न समितियां होंगी जिनमें कम से कम 50-50 प्रतिशत के आधार पर शिक्षकों के प्रतिनिधि शामिल होने चाहिएं अर्थात् परिषद् के आधे सदस्य शिक्षकों में से हों तथा आधे सदस्य उद्योग, कृषि तथा अन्य विकासात्मक संस्थाओं या विभागों तथा प्रशासकों से हों । ये परिषदें न केवल शिक्षा के विकास एवं प्रगति में सहायक सिद्ध होंगी बल्कि इनसे शिक्षकों को व्यापक सामाजिक-आर्थिक कार्यकलापों में भाग लेने का अवसर प्राप्त होगा और उनकी जानकारी का लाभ विकास एवं आयोजना के लिए उपलब्ध होगा । यही एक ऐसी अनुकूल परिस्थिति है जिसमें शिक्षकों को चिर वांछनीय "प्रतीष्ठा" दी जा सकती हैं अर्थात् उनमें यह मूल भावना जगाई जा सकती है कि समाज भी उनकी सामर्थ्य का ध्यान रखता है ।

8.10 कार्य पर्यावरण

अध्याय-5 में हम वर्तमान स्थिति पर अनेक सुझावों एवं सिफारिशों सहित चर्चा कर चुके हैं । हम यहां सिफारिशों की गणना करने या उनका संक्षिप्त उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं समझते हैं क्योंकि ऐसा करने में तर्क का बल समाप्त हो जाएगा । इस बात का उल्लेख किया जा चुका है कि पाठ्य पुस्तकों तथा संदर्भ सामग्री और कुछ चुनींदा मामलों में श्रव्य शिक्षात्मक टेपें तथा सहायक सामग्री जुटाकर पुस्तकालयों को सुदृढ़ बनाया जाए । युवा शिक्षकों विशेषतः कालेज के शिक्षकों के लिए वि० अ० आ० के संकाय सुधार कार्यक्रम का विस्तार करने की आवश्यकता के बारे में भी सिफारिश की जा चुकी है । हमने इस बात पर विशेष जोर दिया है कि पुस्तकालयों तथा प्रयोगशालाओं के माध्यम से और उत्पादन विकास की जिला/क्षेत्रीय जरूरतों के साथ सम्पर्क स्थापित करके अनुसंधान सुविधाओं में वृद्धि की जाए तथा सामाजिक सेवाएं स्थापित की जाएं और पाठ्यचर्या एवं शिक्षण विधियों पर अनुसंधान किया जाए । इस संबंध में शिक्षक अभिविन्यास कार्यक्रमों, अनुसंधान संगोष्ठियों, स्कल कार्यशालाओं/सम्मेलनों का बहुत महत्व है । इनमें से अधिकांश कार्यक्रम शुरू किए जाने चाहिएं और ऐसे कार्यक्रमों मे भाग लेने के लिए शिक्षकों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए । इस संबंध में दूरदराज के स्थानों तथा पहाड़ी क्षेत्रों के शिक्षकों का विशेष रूप से ध्यान रखा जाना चाहिए चूंकि उनकी भौगोलिक स्थिति से अड़चन पैदा होती है अतः हम ऐसे क्षेत्रों में शिक्षकों को विशेष अनुदान दिए जाने की सिफारिश करते हैं ताकि वे केंद्रीय एवं विकसित संस्थाओं में 4 से 6 सप्ताह की छुट्टी व्यतीत कर सकें । हमने शिक्षक को उसके अनुसंधान, शिक्षण एवं विस्तार कार्य में स्वतंत्रता दिए जाने पर काफी जोर दिया था और ऐसी स्वतंत्रता कालेजों के स्वायत्त कार्यकरण के माध्यम से प्रदान की जा सकती है अतः "विकास संकाय" में राज्य सरकारों, विश्वविद्यालयों तथा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा इस बात को विशेष रूप से प्रोत्साहित किया जाना चाहिए । हमने इस विषय पर व्यापक चर्चा कर ली है कि शिक्षकों को इस आधार वाक्य के अनुसार कि स्वतंत्रता के साथ साथ जिम्मेदारी भी महसूस करनी चाहिए, अनेक कार्यकलापों का संचालन एवं प्रबंधन में भाग लेना चाहिए । वस्तुतः हमने चुनींदा कालेजों तथा विश्वविद्यालय विभागों के लिए अकादमिक एवं वित्तीय स्वायत्तता का समर्थन किया था । हमने इस बात का भी समर्थन किया था कि शासी निकायों को उत्तरदायी होना चाहिए । उन्हें शासन करना चाहिए और उन्हें पक्षपात करने या संकीर्ण अथवा अयोग्य या यों कहिए कि कुशासन करने की स्वतंत्रता नहीं होनी चाहिए । हम पहले ही उल्लेख कर चुके हैं कि "शिक्षक संघों" की भूमिका तथा उनके सदस्यों के वृत्तिक निष्पादन में उनके द्वारा विशेष रुचि लिए जाने की आवश्यकता के संबंध में हमारा दृष्टिकोण क्या है । आचार संहिता या व्यवहार-मानकों अथवा अवांछनीय व्यवहार के प्रश्न पर चर्चा की जा चुकी है । हमें विश्वास है कि शिक्षक तथा उनके संघ शिक्षको की भूमिका एवं जिम्मेदारी के संबंध में दी गई परिभाषा से पूर्णतः सहमत होंगे । शिकायतों को तुरंत दूर करने के लिए व्यवस्था किए जाने के संबंध में सुझाव दिया गया था । हमें पक्का विश्वास है कि इन सब कारंवाइयों से हमारी संस्थाओं में कार्य के वातावरण में काफी सुधार होगा ।

8.11 वृत्तिक उत्कृष्टता

हमारा विचार है कि शुरू में योग्यता के कठिन चयन के आधार पर शिक्षकों को भर्ती किया जाना अत्यन्त महत्वपूर्ण है और हमें यह जानकर खुशी हुई है कि अधिसंख्य शिक्षकों का विचार भी यही है । इस बात का भी व्यापक समर्थन किया गया है कि भाषा, धर्म, जाति, क्षेत्र पर आधारित खंडशः शिक्षा पद्धति का प्रतिसंतुलन व्यापक परीक्षा के आधार पर कुछ शिक्षकों का चयन करके किया जाए । अतः हमने एक अखिल भारतीय परीक्षा की सिफारिश की है और केवल उन्हीं शिक्षकों के चयन पर विचार किया जाना चाहिए जिन्होंने सात अंकीय स्केल पर उक्त परीक्षा में ग्रेड बी+ प्राप्त किया हो ।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा विहित अन्य योग्यताएं भी बनी रहनी चाहिए। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग शिक्षकों की भर्ती के लिए न्यूनतम विहित योग्यता के रूप में अखिल भारतीय परीक्षा में बी। उत्तीर्ण होना आवश्यक बना सकता है। विज्ञापन तथा छानबीन उसी ढंग से की जाएगी जैसा कि हमने अध्याय-6 में बताया है और सामान्य चयन समितियां शिक्षकों का चुनाव करेंगी। हमने सिफारिश की है कि बाहर के तीन विशेषज्ञ होने चाहिएं और उनमें से दो की उपस्थिति से चयन समिति का कोरम पूरा होना चाहिए। अन्य ब्यौरे अध्याय-6 में दिए गए हैं। इसके अतिरिक्त हमने यह भी सिफारिश की है कि कम से कम 25 प्रतिशत नियुक्तियां संबंधित राज्य से बाहर की होनी चाहिए। हमारे विचार से यह कार्रवाई विभिन्न संस्कृतियों/भाषाओं के लोगों को एक साथ काम करवाने में सहायक सिद्ध होगी। हम लम्बे अरसे की तदर्थ और अस्थायी नियुक्तियों के विरुद्ध हैं क्योंकि इनसे संस्थागत एवं व्यक्तिगत—दोनों ही प्रकार का नुकसान होता है। अतः जैसी कि विस्तार से सिफारिश की गई हैं, तदर्थ और अस्थायी नियुक्तियां कम से कम संख्या में तथा कम से कम अवधि के लिए की जानी चाहिएं।

हम जानते हैं कि ऐसी परीक्षा को शुरू होने में एकाधिक वर्ष लगेंगे अतः उपर्युक्त व्यवस्था धीरे-धीरे शुरू की जानी चाहिए। चूंकि पूर्व-पी० एच० डी० परीक्षा पहले ही प्रचलित की चुकी है अतः कुछेक वर्षों में ही उक्त परीक्षा के लिए अनेक एम० फिल० तथा पी० एच० डी० लोग उपलब्ध होंगे।

हमारा पक्का विचार है कि रीडरों तथा प्रोफेसरों जैसी उच्च स्तर की नियुक्तियां वास्तविक अखिल भारतीय आधार पर खुले चयन द्वारा होनी चाहिए। हम बता चुके है कि क्षेत्रीय भाषाओं के मामले में परीक्षकों को योग्यता हासिल करने के लिए उचित समय दिया जाना चाहिए। वस्तुतः प्रोफेसर के उच्चतम ग्रेड के लिए हमने राष्ट्रीय चयन का समर्थन किया है।

साथ ही, हमने यह भी सिफारिश की है कि प्रत्येक वर्ग लेक्चररों, रीडरों तथा प्रोफेसरों (या सहायक प्रोफेसरों, सह-प्रोफेसरों और प्रोफेसरों—इस नामपद्धति को हम पसंद करते है) के अनेक सुस्पष्ट ग्रेड होने चाहिएं और सामान्य निष्पादन (अनिष्पादन नहीं) वाले व्यक्ति को समुचित चयन समिति के समक्ष लाना चाहिएं ताकि यदि वह व्यक्ति उपयुक्त पाया जाता है तो उसे अगला ग्रेड दिया जा सकता है। हम इसको सामान्य मार्ग कहते हैं। हम इस बात पर बल देते हैं कि ऐसा प्रत्येक चयन "वृत्तिक विकास" के मूल्यांकन पर आधारित होना चाहिए। "वृत्तिक विकास" की परिभाषा उन विविध कार्यकलापों के संदर्भ में स्पष्ट की जानी चाहिए जिनका निष्पादन शिक्षकों द्वारा शिक्षक-छात्र अन्योन्यक्रिया, अनुसंधान तथा विभिन्न प्रकार की सर्जनात्मक क्रियाओं, सामुदायिक/विस्तार कार्य, समिति में शामिल होने, वृत्तिक सम्मेलनों/कार्यशालाओं में शामिल होने/उनका आयोजन करने तथा संस्थागत कार्य आदि में भाग लेने के रूप में (नमूने का प्रोफार्मा संलग्न है) किया जाना प्रत्याशित है। यह स्पष्ट है कि इस प्रयोजन के लिए वार्षिक रिकार्ड रखना होगा, स्व-मूल्यांकन, छात्रों तथा समकक्ष व्यक्तियों का मूल्यांकन करना और कालेज/विभाग के अध्यक्ष द्वारा प्रेक्षण किये जाने आवश्यक हैं। यदि इस व्यवस्था को ठीक ढंग से लागू किया जाता है तो शिक्षक को अपने सेवाकाल में कई पदोन्नतियां मिल सकती हैं और वह उच्चतम वेतन के 75 प्रतिशत भाग तक पहुंच सकता है।

हमने उन शिक्षकों के बारे में भी विचार किया है जिनका कार्य वास्तव में बहुत अच्छा है। उनके संबंध में हम यह सिफारिश करते हैं कि हमारे द्वारा उल्लिखित प्रक्रिया के अनुसार उनका चयन उसी वर्ग या पद के ग्रेड के लिए, अपने ग्रेड की अधिकतम सीमा तक पहुंचने से दो वर्ष पहले, किया जा सकता है। यह प्रक्रिया एक प्रकार से कठिन है क्योंकि शिक्षा पद्धति में यह प्रवृत्ति पाई जाती है कि असाधारण व्यक्ति के स्थान पर साधारण व्यक्ति की पदोन्नति कर दी जाती है और योग्यता के मुकाबले वरिष्ठता का ध्यान अधिक रखा जाता है। हम यह भी सिफारिश करते हैं कि लेक्चरार/सहायक प्रोफेसर के विभिन्न ग्रेड कालेजों में भी उपलब्ध होने चाहिएं तथा स्नातकोत्तर कालेजों के मामले में रीडर के ग्रेड प्रत्येक विषय में उपलब्ध होने चाहिएं लेकिन इन पदों के लिए अखिल भारतीय आधार पर खुला चयन किया जाए। कुछ मामलों में उचित संवीक्षा के पश्चात् प्रोफेसरों के पद स्नातकोत्तर कालेजों में भी उपलब्ध कराये जाने चाहिएं।

हमने इस बात का समर्थन किया है कि शिक्षकों के लिए आवास आबंटित करके उनकी गतिशीलता बढ़ाई जाए और हमने यह सिफारिश की है कि एक विश्वविद्यालय/कालेज से दूसरे विश्वविद्यालय/कालेज को अंतरित होने पर उनकी सेवा का लाभ दिया जाए। शिक्षकों के लिए इस प्रकार की व्यवस्था केंद्रीय विश्वविद्यालयों में तथा वास्तव में उनके तथा केंद्र द्वारा धनप्राप्त स्वायत्त संस्थाओं एवं सरकार के बीच विद्यमान है। हम सिफारिश करते हैं कि राज्य भी इसी प्रकार का उदार दृष्टिकोण अपनाएं ताकि शिक्षक उन स्थानों पर जा सकें जहां वे सर्वोत्तम ढंग से सेवा कर सकें।

हमने महिला शिक्षकों के लिए अंतरायित वृत्ति का भी समर्थन किया है ताकि वे जब भी उनकी पारिवारिक स्थिति अनुकूल हो पूर्णकालिक या अंशकालिक कार्य कर सकें। पांच वर्ष तक के अंतराल की अनुमति दी जा सकती है और इस अवधि के दौरान उनकी अंशकालिक नियुक्तियां की जा सकती हैं। हमारी राय में शिक्षा की वर्तमान प्रणाली के कारण ही महिलाएं अपने कार्य को संतोषजनक रूप से नहीं कर पाती हैं। अतः उसी भावना से हम सिफारिश करते हैं कि जहां संभव हो, संयुक्त रूप से संस्थाओं अथवा स्वयं महिलाओं द्वारा बच्चों/बालकों के लिए शिशु-गृह स्थापित किए जाने चाहिए।

हम इस बात को फिर से दुहराएंगे कि हमें दो काम करने हैं—एक तो लोगों तथा उनकी सरकार को इस बात के लिए राजी करना है कि वे शिक्षकों को अनेक आवश्यक एवं उपयुक्त लाभ प्रदान करें हालांकि उनकी छवि अच्छी नहीं है। दूसरे, शिक्षकों से इस बात का आग्रह करना है कि वे अनेक चुनौतीपूर्ण जिम्मेदारियां वहन करने का प्रयास करें हालांकि उनकी अपनी शिकायतें हैं और उनमें निराशा है। लेकिन हमें विश्वास है कि केवल इसी तरीके से हम शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन एवं व्यक्तिगत उपलब्धि के लिए एक साधन बना सकते हैं।

परिशिष्ट

परिशिष्ट क

आवेदन का प्रोफार्मा

1. ......पद के लिए आवेदन :

   (क) पूरा नाम (साफ अक्षरों में)

   (ख) वर्तमान पता

   (ग) पिता का नाम

   (घ) क्या आप अनुसूचित जाति/ अनुसूचित जनजाति के हैं ?

2. जन्म-स्थान एवं जन्म की तारीख :

3. उत्तीर्ण सभी परीक्षाओं एवं विश्वविद्यालय या उच्च अथवा तकनीकी शिक्षा के स्थानों से प्राप्त डिग्रियों अथवा मैट्रीकुलेशन या समकक्ष परीक्षाओं से लेकर अब तक प्राप्त शिक्षा का विवरण दें। प्रमाणपत्रों की सत्य प्रतिलिपियां संलग्न करें (मांगने पर प्रमाणपत्रों की मूल प्रतियां प्रस्तुत की जाएं)

विश्वविद्यालय/ बोर्ड	उत्तीर्ण परीक्षा	वर्ष	श्रेणी या डिवीजन और अंकों की प्रतिशतता तथा स्थान/दर्जा, यदि हो	विषय

4. व्यावसायिक सोसायटियों की सदस्यता, विशेष योग्यता, यदि हो, के विषय में लिखें।

5. (क) अनुसंधान कार्य एवं प्रकाशनों का ब्यौरा

   (ख) अध्यापन का अनुभव

6. वर्तमान रोजगार समेत रोजगार का ब्यौरा

कार्यालय/संस्था जिसमें नौकरी करते थे	नौकरी शुरू करने की तारीख	नौकरी छोड़ने की तारीख	पद तथा वेतनमान	मूल वेतन† तथा भत्ते

† वर्तमान मूल वेतन तथा भत्तों का विवरण अलग-अलग दें।

7. अन्य मूल वेतन तथा भत्ते (अलग-अलग लिखें)

8. हवाले के लिए दो व्यक्तियों के नाम तथा पते

   1. नाम :
      पद :
      पता :

   2. नाम :
      पद :
      पता :

मैं एतद्द्वारा घोषणा करता हूं कि इस आवेदनपत्र तथा संलग्नकों में दिए गए सभी विवरण मेरी जानकारी एवं विश्वास के अनुसार सही हैं।

स्थान : आवेदक के हस्ताक्षर

तारीख :

परिशिष्ट ख

कॉलेज के शिक्षकों का स्व-मूल्यांकन

विशेषकर कालेज के शिक्षकों में यह आम धारणा है कि शिक्षकों द्वारा सम्पन्न अनुसंधान कार्य को पदोन्नति के सिलसिले में काफी महत्व दिया जाता है जबकि अन्य कार्यों—विशेषकर शिक्षण कार्य को बहुत कम महत्व दिया जाता है। अतः इस संबंध में कोई उपचारी उपाय किया जाना चाहिए ताकि इसका वृत्तिक विकास पर अच्छा प्रभाव पड़े तथा इसको शिक्षकों की सर्वतोमुखी उपलब्धि से जोड़ा जा सके। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए निम्नलिखित कदम उठाए जाने चाहिए :

(i) **सेमिस्टर/वर्ष के लिए कार्य की अग्रिम आयोजना :** प्रत्येक शिक्षक से यह अनुरोध किया जाना चाहिए कि वह अपने अकादमिक कार्य की सेमिस्टरवार/वार्षिक योजना तैयार करे तथा सेमिस्टर/वर्ष के शुरू होने से पहले उसे विभाग/संस्था के अध्यक्ष को प्रस्तुत करे। इसमें प्रत्येक कार्य-दिवस के संदर्भ में एल०टी०पी० योजना भी शामिल की जानी चाहिए और इसको छात्रों में भी परिचालित किया जाना चाहिए।

(ii) **शिक्षकों के सर्वांगीण योगदान का रिकार्ड रखना :** यह कार्य स्वयं शिक्षकों द्वारा सर्वाधिक प्रभावशाली ढंग से किया जा सकता है। सुझाव दिया जाता है कि प्रत्येक शिक्षक को एक रजिस्टर रखना चाहिए जिसमें उसे प्रत्येक कार्य दिवस का अपना कार्य दर्ज करना चाहिए। यह कार्य शिक्षण कार्य के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है।

(iii) **परिवीक्षण :** विभाग/कालेज के अध्यक्ष की यह जिम्मेदारी-व-ड्यूटी होगी कि वह सेमिस्टर/वार्षिक योजना में प्रदत्त समयावधि के संदर्भ में कार्यप्रगति का परिवीक्षण करे। कक्षा विनियोजन पर विशेष ध्यान दिये जाने की जरूरत है। हाजिरी रजिस्टरों के रखरखाव से संबंधित प्रक्रियाओं का सख्ती से पालन किया जाना चाहिए। सुझाव है कि हाजिरी रजिस्टर हो सके तो प्रत्येक शाम को नहीं तो प्रत्येक शनिवार को अवश्य, प्रिंसिपल के कार्यालय में प्रस्तुत किए जाए और उनमें दी गई सूचना के आधार पर अगले सप्ताह गलतियों और कमियों को दूर किया जाये।

(iv) **मूल्यांकन :** सभी कार्यों के संदर्भ में प्रत्येक शिक्षक के योगदान का मूल्यांकन प्रत्येक वर्ष के अंत में किया जाना चाहिए। यह कार्य शिक्षक द्वारा संलग्न प्रोफार्मा के अनुसार स्व-मूल्यांकन से शुरू किया जाना चाहिए।

कालेज शिक्षकों के लिए स्व-मूल्यांकन फार्म

मूल्यांकन वर्ष/सेमिस्टर की अवधि......से......तक

क. पहचान :

नाम :

जन्मतिथि :

पद :

वेतनमान :

वर्तमान वेतन :

नियुक्ति की तारीख :

(i) शिक्षण व्यवसाय में

(ii) संस्था में

(iii) वर्तमान पद पर

ख. शिक्षण :

(क) कौन-कौन से पाठ्यक्रम पढ़ाये

पाठ्यक्रम का नाम	प्रति सप्ताह पीरियड † एल	टी	पी	जोड़
(i)				
(ii)				
(iii)				

† पीरियड......मिनट

(ख) क्या आपने उपर्युक्त पाठ्यक्रमों के लिए छात्रों को वार्षिक/सेमिस्टर-वार एल टी पी योजना दी थी ?

(ग) क्या आपने छात्रों को अपने लेक्चरों और पठन सूची सारांश दिया था ?

(घ) सूचीबद्ध कुल पीरियड (वर्ष में 180 शिक्षण दिवसों के आधार पर) ....
वास्तव में लिए कुल पीरियड अंतर का कारण ....

(i) पाठ्येतर कार्यकलापों के लिए कक्षाएं स्थगित

(ii) अन्य कारणों यथा शोक, युनियन के चुनावों, खेल प्रतियोगिताओं में जीत के कारण कक्षाएं स्थगित

(iii) शिक्षक की छुट्टी के कारण न ली गई कक्षाएं

(iv) निम्नलिखित कारणों से न ली गई कक्षाएं
...छात्रों की हड़ताल
...शिक्षकों की हड़ताल
...कर्मचारियों की हड़ताल
...नागरिक क्षोभ तथा उपद्रव

(v) निम्नलिखित कारणों से न ली गई कक्षाएं
...दाखिला कार्य
...तैयारी की छुट्टी
...परीक्षा—वार्षिक तथा पूरक

(ङ) कमी को पूरा करने जैसे अतिरिक्त कक्षाएं लगाने के लिए की गई कार्रवाई

(च) आपके द्वारा पढ़ाए गए पाठ्यक्रमों के परीक्षा परिणाम

(छ) छात्रों के लिए पठन सामग्री तैयार करना

(ज) पाठ्य पुस्तकें, प्रयोगशाला पुस्तिकाएं, आदि तैयार करना

(झ) पाठ्यचर्या में नवीकरण

(ञ) शिक्षण विधियों में नवीकरण

(ट) मूल्यांकन विधियों में नवीकरण

ग. अनुसंधान :

(क) कृपया निम्नलिखित से संबंधित अपने कार्य का संक्षिप्त विवरण दें :
(i) डिग्री के लिए अनुसंधान
(ii) परियोजना/परियोजनाओं के लिए अनुसंधान
(iii) छात्र सहभागिता के साथ या उसके बिना कार्य अनुसंधान
(iv) परामर्श
(v) छात्र अनुसंधान/परियोजना कार्य का पर्यवेक्षण

(ख) प्रकाशित मोनाग्राफ, पुस्तकें तथा लेख

(ग) संगोष्ठियों, परिचर्चाओं, कार्यशालाओं तथा प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भाग लेना तथा उनका आयोजन करना

(घ) अनुसंधान के लिए प्राप्त सहायता

घ. विस्तार कार्य तथा राष्ट्रीय/सामाजिक सेवा :

(क) कृपया निम्नलिखित के प्रति अपने योगदान का संक्षिप्त विवरण दें :
(i) समस्याओं के हल करने के सिलसिले में समुदाय सेवा
(ii) राष्ट्रीय एकता, धर्म निरपेक्षता, प्रजातंत्र, समाजवाद, मानववाद, शांति तथा वैज्ञानिक प्रवृत्ति के मूल्यों को लोकप्रिय बनाना
—लोकप्रिय लेक्चर
लोकप्रिय लेखन कार्य
— अन्य उपाय
(iii) प्रौढ़ शिक्षा, बाढ़, राहत तथा इसी प्रकार के अन्य कार्य

(ख) विस्तार कार्य एवं राष्ट्रीय सेवा से संबद्ध संगठनों में धारित पद

ङ प्रशासन :

कृपया निम्नलिखित के लिए अपने योगदान का संक्षिप्त विवरण दें

(क) कालेज का प्रशासन
(ख) सह्-व-अतिरिक्त पाठ्यचर्या कार्यकलापों का आयोजन
(ग) छात्रों का आवासी जीवन
(घ) छात्र अनुशासन बनाए रखना
(ङ) आपकी एवं अन्य अकादमिक संस्थाओं के सलाहकार निकाय और निर्णय लेना
(च) शिक्षकों के व्यावसायिक संगठन
(छ) विभिन्न स्तरों पर विकासात्मक प्रशासन

च. मूल्यांकन :

(क) कृपया निम्नलिखित द्वारा आपको दिए गए सम्मान के बारे में लिखें :
...आपके छात्रों द्वारा
...आपके समकक्ष व्यक्ति द्वारा
...सरकार द्वारा
...अन्य के द्वारा

(ख) क्या आपने पाठ्यचर्या कार्यक्रम का मूल्यांकन छात्रों से करवाया था ? यदि हां तो उसके निष्कर्षों का उल्लेख करें।

छ. सामान्य :

(क) आपके विचार में सर्वाधिक महत्वपूर्ण योगदान क्या था?
(ख) वे बड़ी-बड़ी कठिनाइयां क्या थीं जो आपके सामने आई थीं ?
(ग) भविष्य के लिए आपके सुझाव क्या हैं?

विभागाध्यक्ष/प्रिंसिपल की टिप्पणी ।

प्रकाशन सं० 1516

भासमुद्रा—चि० 1—259 डिपार्टमेंट ऑफ एज्युकेशन (एनडी)/85—14-5-86—3,000.